ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

● वर्ष : 73 ● अंक : 03 ● जून 2023

नागार्जुन
(30 जून, 1911 – 05 नवंबर, 1998)

मोर न होगा...उल्लू होंगे

खूब तनी हो, खूब अड़ी हो, खूब लड़ी हो
प्रजातंत्र को कौन पूछता, तुम्हीं बड़ी हो

डर के मारे न्यायपालिका काँप गई है
वो बेचारी अगली गति-विधि भाँप गई है
देश बड़ा है, लोकतंत्र है सिक्का खोटा
तुम्हीं बड़ी हो, संविधान है तुम से छोटा

तुम से छोटा राष्ट्र हिन्द का, तुम्हीं बड़ी हो
खूब तनी हो, खूब अड़ी हो, खूब लड़ी हो

यह कमजोरी ही तुमको अब ले डूबेगी
आज नहीं तो कल सारी जनता ऊबेगी
लाभ-लोभ की पुतली हो, छलिया माई हो
मस्तानों की माँ हो, गुण्डों की धाई हो

सुदृढ़ प्रशासन का मतलब है प्रबल पिटाई
सुदृढ़ प्रशासन का मतलब है 'इन्द्रा' माई
बन्दूकें ही हुईं आज माध्यम शासन का
गोली ही पर्याय बन गई है राशन का

शिक्षा केन्द्र बनेंगे अब तो फौजी अड्डे
हुकुम चलाएँगे ताशों के तीन तिगड्डे
बेगम होगी, इर्द-गिर्द बस गूल्लू होंगे
मोर न होगा, हंस न होगा, उल्लू होंगे

(आपातकाल के प्रतिवाद में लिखी गई कविता)

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

UGC CARE Listed Journal

वर्ष : 73 अंक : 03 जून, 2023

परामर्श मंडल

श्री भारतभूषण महंत
कार्याध्यक्ष, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी (असम)

प्रो. आर.एस. सर्राजु
सम कुलपति, हैदराबाद विश्वविद्यालय
तेलंगाना-500046

प्रो. प्रदीप के शर्मा
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
सिक्किम केंद्रीय विश्वविद्यालय
काजी रोड, गंगटोक, सिक्किम - 737101

डॉ. दीपक प्रकाश त्यागी
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

डॉ. दिलीप कुमार मेधि
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अच्युत शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया
मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

संपादक

प्रो. मोहन
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली-1

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद
प्रभारी साहित्य सचिव
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :
प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32
फोन : 9101541395, 9101541380
ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : ₹100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

आवरण पृष्ठ : इंटरनेट से साभार

सम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा.लि., इंडस्टियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

विषय सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ

हिंदी विभाग

संपादकीय			4
1.	'भक्त' हुए, उठ गए राम से भी, यों ऊपर...'	✍ डॉ. अनुशब्द	5
2.	रोज करें योग, दूर भगाएँ रोग	✍ प्रो. प्रदीप के शर्मा	12
3.	वृंदावन लाल वर्मा के सामाजिक उपन्यास : परिवेश एवं समस्याएँ	✍ डॉ. शशिकला	15
4.	जनजातीय विमर्श के आईने में 'रूपतिल्ली की कथा'	✍ प्रो. यशवंत सिंह	21
5.	भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं का योगदान	✍ डॉ. संदीप रणभिरकर	26
6.	हिंदी के 'डूब' एवं नेपाली के 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' उपन्यासों में अभिव्यक्त बाढ़ की समस्या : एक तुलनात्मक अध्ययन	✍ टिंकू छेत्री	32
7.	कृष्ण सोबती और निरूपमा बरगोहाईं के उपन्यासों : एक समीक्षा	✍ बर्णाली बैश्य	38
8.	शंकरदेव की अपूर्व सृष्टि अंकिया नाट	✍ डॉ. जोनाली बरुवा	44
9.	कार्बी जनजाति के लोकगीत : एक अध्ययन	✍ पूजा बरुवा	50

অসমীয়া বিভাগ

10.	শ্রীমদ্ভগৱত গীতা, ভাগৱত পুৰাণ আৰু নামঘোষাত নিহিত আত্মতত্ত্বৰ স্বৰূপ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন	✍ ড০ বিভূতি লোচন শর্মা	56
11.	হোমেন বৰগোহাঞিৰ হাতী আৰু গৰখীয়া গল্পত পাৰিৱেশিক চেতনা ঃ এক অধ্যয়ন	✍ ড০ জ্ঞানেন্দ্র বর্মন	62
12.	ৰাজবালা দাসৰ আত্মজীৱনীত আত্মসত্তাৰ ৰূপায়ণ	✍ ড০ স্মৃতি ৰেখা ভূঞা	68
13.	প্রাচীন কামৰূপত শৈৱধর্মৰ বিকাশ আৰু অসমত প্রচলিত শৈৱ ধাৰাৰ লোকগীত	✍ ড০ পল্লৱিকা শর্মা	77
14.	যিডু কৃষ্ণমূর্তিৰ দর্শনত মন আৰু চেতনা	✍ ড০ যদুমণি দত্ত	86
15.	স্বর্ণ ৰৰাৰ উপন্যাসত প্রতিফলিত জনজাতীয় মৃতক সম্পর্কীয় লোকাচাৰ	✍ ৰিমঝিম গগৈ	90
16.	অসমৰ ৰাজহুৱা গ্রন্থাগাৰসমূহৰ আধুনিকীকৰণ ঃ প্রত্যাশা আৰু প্রত্যাহ্বান	✍ হৃষিকেশ ভূঞা	95
17.	অনিমা গুহৰ ভ্রমণ সাহিত্য 'তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দর্শন' ঃ এক অৱলোকন	✍ অসীমা গায়ন	102

संपादकीय

साहित्य और समाज

दार्शनिकों ने सूक्ष्म सत्ता परमात्मा के तीन लक्षण स्वीकार किए हैं - सत्, चित् और आनंद। मनुष्य उसी सूक्ष्म सत्ता का व्यक्त रूप है। मनुष्य का सूक्ष्म जीवन भी तीन बातों पर आधारित है - ज्ञान, भावना और क्रिया। इनमें ज्ञान का संबंध सत् से, क्रिया का चित् से और भावना का आनंद से। मानव जीवन से संबंधित विभिन्न विषय इन्हीं तीन प्रवृतियों से प्रेरित हैं। ज्ञान की प्रवृति ने विज्ञान और दर्शन को, क्रिया की प्रवृति ने धर्म और व्यवसाय को और भावना की प्रवृति ने साहित्य व कलाओं को जन्म दिया।

साहित्य मानव की अनुभूतियों और भावनाओं का साकार रूप है। वह मानव को, उसके जीवन को लेकर ही जीवित है, इसलिए वह पूर्णत: मानवकेंद्रित है।

मानव सामाजिक प्राणी है। सामाजिक विचारों और समस्याओं का जहाँ वह स्रष्टा होता है, वहीं उनसे स्वयं भी प्रभावित होता है। इसी प्रभाव का मुखर रूप 'साहित्य' है। इसलिए विद्वानों ने साहित्य को समाज का दर्पण कहा है।

विगत एक हजार वर्षों के हिंदी साहित्य का अवलोकन करने पर हम साहित्य और समाज के अन्योन्याश्रित संबंध को भलीभांति समझ सकते हैं। यह कहना समीचीन होगा कि हिंदी साहित्य का इतिहास भारतीय जनता की वीरता, उसकी राजनीतिक पराजय, इस्लाम की भारतीय जनता पर विजय, इस्लाम के आतंक से संतप्त भारतवासियों का भगवान से हिंदुत्व के रक्षार्थ निवेदन, सामंत युग की विलासप्रियता और वर्तमान युग की सुधारवादी भावना आदि का इतिहास है। स्पष्ट है कि साहित्य पग-पग पर समाज से प्रभावित होता रहता है। किसी काल विशेष में समाज सुख-दुख, रहन-सहन, आचार-विचार सभी कुछ साहित्य में प्रतिबिंबित होता है। दूसरे शब्दों में समाज की पूरी झाँकी तत्कालीन साहित्य में दिखाई पड़ती है।

जहाँ एक ओर साहित्य अपने अस्तित्व के लिए समाज पर निर्भर है, वहीं सामाजिक विकास और उन्नयन में साहित्य की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। समाज की उन्नति तभी संभव है, जब हमारा हृदय संवेदनशील तथा बुद्धि विकसित एवं परिष्कृत हो। उपर्युक्त दोनों ही कार्यों के लिए साहित्य सबसे प्रभावशाली साधन है। साहित्य सेवन से हमारा मन परिष्कार हो जाता है, जिससे हम सतोगुणात्मक वृत्तियों में रमने का आदी हो जाते हैं। फलस्वरूप समाज में शांति की स्थापना होकर विकास का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। अत: सामाजिक जीवन में साहित्य का महत्व निर्विवाद है।

महान साहित्यकार तो देश और काल की सीमा से ऊपर उठकर सार्वभौम समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं। साहित्य में मानव का जीवन ही नहीं, जीवन की वे भावनाएँ और कामनाएँ भी निहित रहती हैं, जो अनंत जीवन में भी पूर्ण नहीं हो सकतीं। साहित्य जीवन की इन्हीं अपूर्णताओं को पूर्ण करता है, तभी वह जीवन से अधिक सारवान् और परिपूर्ण है तथा नियामक और मार्ग-द्रष्टा भी।

राष्ट्रसेवक परिवार की ओर से इस अंक के सम्मानित लेखकों सहित समस्त साहित्यप्रेमियों को बधाई और अनंत शुभकामनाएँ। ❑

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

'भक्त हुए, उठ गए राम से भी, यों ऊपर...'

डॉ. अनुशब्द

वरिष्ठ सहायक आचार्य
हिंदी विभाग
तेजपुर विश्वविद्यालय, तेजपुर,
नपाम, असम-784028
मो. 0887604920
ई-मेल : dranushabda@gmail.com

तुलसी आलोक कवि हैं। जनमानस के कवि हैं। उन्होंने अपनी भक्ति और कारयित्री प्रतिभा के द्वारा संपूर्ण उत्तर भारत को सदियों से आलोकित किया है। इस तथ्य को सभी कवियों एवं लेखकों ने स्वीकृति प्रदान की है। हम जानते हैं कि फिराक गोरखपुरी हिंदी के कितने बड़े विरोधी थे! उनके जैसे हिंदी के कट्टर विरोधी ने भी हिंदी को मात्र डेढ़ कवियों की भाषा माना है। एक तो मुकम्मल कवि तुलसीदास और आधे कवि निराला। उनकी नजर में यही डेढ़ कवि हिंदी साहित्य में हैं, लेकिन उनको यह मानने में थोड़ा-सा भी संकोच नहीं है कि तुलसीदास एक ऐसे मेहराब हैं, जिसके नीचे से ही हर किसी को गुजरना पड़ता है। बिल्कुल नतमस्तक होकर, सीना तानकर नहीं। इसी तरह से प्रगतिवादी एवं वामपंथी लेखक तथा आलोचक भी तुलसी की काव्य-प्रतिभा से अभिभूत रहे हैं। चाहे वह रामविलास शर्मा हों, मुक्तिबोध हों, त्रिलोचन हों या फिर बाबा नागार्जुन। रामविलास जी 'तुलसी के सामाजिक मूल्य' नामक लेख में तुलसी को **'भारत का श्रेष्ठ भक्त कवि'**[1] कहते हैं। उनके अनुसार **'तुलसीदास मानवीय करुणा के अन्यतम कवि हैं।'**[2] प्रख्यात प्रगतिवादी कवि त्रिलोचन महाकवि तुलसी के साहित्यिक दाय को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि **'तुलसी बाबा, भाषा मैंने तुमसे सीखी/ मेरी सजग चेतना में तुम रमे हुए हो'**।[3] तुलसीदास पर तो निराला ने 'तुलसीदास' नामक खंडकाव्य सरीखी लंबी कविता ही लिख दी है। नरेश मेहता की 'संशय की एक रात' भी एक ऐसी ही लंबी कविता है। बाबा नागार्जुन तो यहाँ तक कहते हैं कि **'तुलसी बाबा साथ रहें तो/पार करूँ/कविता वैतरणी/ तुलसी बाबा साथ रहें तो/नहीं भूलूँ मैं/ शब्द सुमरनि'**।[4] यानी कवि नागार्जुन यह कामना करते हैं कि यदि गोस्वामी तुलसीदास का काव्य-विवेक, उनकी रचनात्मक प्रतिभा, उनके आचार-विचार और उच्चार का साहचर्य मुझे सुलभ हो जाए तो मैं सहज ही 'कविता की वैतरणी' पार कर जाऊँगा तथा निरंतर 'शब्द सुमरनि' में सचेष्ट रहूँगा, अनवरत सृजनरत रहूँगा। आज के समय के मशहूर मार्क्सवादी आलोचक

प्रोफेसर मैनेजर पाण्डेय कहते हैं कि '**कबीर की कविता प्रश्न करने वाली कविता है तो तुलसी की कविता उत्तर देने वाली कविता।**'[5] अर्थात् तुलसी केवल अपने समय की विसंगतियों पर प्रश्न ही नहीं उठाते, उन्हें सिर्फ रेखांकित या चिह्नित ही नहीं करते, उनके यथार्थबोध में केवल प्रश्नाकुलता ही नहीं है बल्कि उनकी कविताएँ सत्ता के प्रतिपक्ष में जब खड़ी होती हैं तो पूरे आत्मविश्वास के साथ एक बेहतर विकल्प लेकर, 'रामराज्य' की परिकल्पना के साथ खड़ी होती हैं, जिसे बाद में गाँधी भी अपनाते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि तुलसी भारतीय मनीषा के प्रतिमान हैं। वे बहुत से भारतीय मनीषियों की लेखनी के लिए संदर्भ बिंदु तो हैं ही, प्रस्थान बिंदु भी हैं। जैसे आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इतिहास और आलोचना संबंधी अपनी मौलिक स्थापनाओं तथा साहित्यिक प्रमेयों के द्वारा अपने समकालीनों और आगे आने आने वाली पीढ़ियों को चिंतन-मनन के लिए बौद्धिक खुराक उपलब्ध करायी ठीक उसी तरह समूचा हिंदी साहित्य तुलसी के रचनात्मक-विवेक का ऋणी है। वास्तव में तुलसी का समग्र रचना-संसार, उनकी चौपाइयाँ और अर्द्धालियाँ हिंदी की साहित्यिक अधिरचना के लिए अजस्र ऊर्जा की स्रोत एवं आधारशिला हैं। कभी-कभी तो ऐसा ऐसा भी लगता है कि विद्वानों की स्थापनाएँ तुलसी के उद्धरणों से ही प्रमाणिकता और सर्वस्वीकार्यता हासिल करती हैं। मेरी समझ से इसका एक कारण तुलसीदास के काव्य की व्यापक पठनीयता भी है। सभी 'मानस' को पढ़ और समझ लेते हैं, उसके विभिन्न संदर्भों और प्रसंगों से स्वयं को सहज ही जोड़ लेते हैं। अनपढ़ भी, अशिक्षित भी। साक्षर भी और विद्वान भी। इतना विशाल पाठक वर्ग हिंदी में शायद ही किसी अन्य कवि का है।

इक्कीसवीं शती में किसी कवि या लेखक की संदर्भिता इन तीन बातों पर ही आधृत है- स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श और अल्पसंख्यक-विमर्श। इनके मानदंडों पर जो खरा उतरता है, वही प्रासंगिक कवि सिद्ध होता है। जो नहीं उतरता उसे अप्रासंगिक मान लिया जाता है। तुलसी के समय में ये विमर्श नहीं थे। और, न ही इन विमर्शों का मुख्य स्वर-संधान। उनका भेदक और प्रेरक स्वर है- स्व-अनुभूति, सहानुभूति नहीं। दलितों एवं स्त्रियों को केंद्र में रखकर सहानुभूतिपूर्वक लिखा गया साहित्यानुभव प्रमाणिक नहीं माना जाता। इस कसौटी पर प्रेमचंद को भी खारिज कर दिया जाता है। इनका एकमात्र तर्क है कि 'राख ही जानती है जलने का दर्द'। दुर्भाग्य की बात है कि तुलसीदास न तो दलित थे, न स्त्री और न ही अल्पसंख्यक। कबीरादि संत कवियों की तरह दलित न होकर ब्राह्मण थे, मीरा की तरह स्त्री भी नहीं थे और न जायसी की तरह मुसलमान ही। वे हिंदू थे और मर्द थे, लेकिन वे 'पीर पराई' जानते थे। वे गरीबी और दरिद्रता को करीब से जानते थे। करीब से जानते ही नहीं थे, भुखमरी को झेला भी था। पेट की आग को उन्होंने बहुत शिद्दत से महसूस किया था तभी तो 'कवितावली' में वो कहते हैं कि '**आगि बड़वागि ते बड़ी है आगि पेट की**'।[6] जन्म से ही माता-पिता ने त्याग दिया, अशुभ के भय से। (**मातु पिता जग जाइ तज्यो, विधिहू न लिखी कछु भाल भलाई**[7] / **तनु जन्यो कुटिल कीट ज्यों, तज्यो मातु पिता हूँ**[8]) **एक दासी 'मुनिया'**[9] उनकी यशोदा बनी। उसी ने पाला-पोसा। तुलसी का आत्मचित्र आम लोगों से बनता है, जन सामान्य से निर्मित होता है। वे यातना, उपहास, तिरस्कार के भागीदारों की पाँति में खड़े हैं। इसलिए भक्त हैं। वे दलित चेतना के प्रतीक हैं।

डॉ. रामविलास शर्मा ने एक जगह लिखा है कि पूरे मध्यकाल की तीन उपलब्धियां हैं - तानसेन, ताजमहल और तुलसीदास। तीनों अपने-अपने क्षेत्र के कला प्रतिमान हैं। तीनों ही लासानी हैं, लाजवाब हैं। महाकवि तुलसीदास तो ऐसे काव्य प्रतिमान हैंउ जो जीवन दृष्टि, रचना दृष्टि और समीक्षा दृष्टि के सूत्रधार हैं। तीनों के सार्थक एवं स्वस्थ प्रवक्ता है। उन्होंने लिखा है कि '**कबित बिबेक एक नहिं मोरे। सत्य कहउं लिखि कागद कोरे॥**'[10] लेकिन यह उनकी विनम्रता है, विनयशीलता है; जो काव्य-विवेक उनकी रचनाओं में मिलता है, खासकर 'रामचरितमानस' में मिलता है, वह पूरे हिंदी साहित्य में दुर्लभ है। यद्यपि 'रामचरितमानस'

उनके यौवनकाल की रचना है। आश्चर्य की बात है कि उस उम्र में भी उनकी रचनात्मकता पूर्ण विकसित थी, पूर्ण संतुलित थी और पूर्ण वयस्क थी।

फिराक साहब ने कविता की प्रशंसा करते हुए, कविता की परिभाषा देते हुए लिखा है कि – 'गजल क्या है एक नवाए वक्त की सूरत पकड़ लेना/सुनाई दे खबर होकर दिखाई दे नजर होकर।'

तुलसीदास की रचनाओं में खबर होने की क्षमता है और नजर होने की भी। उनकी रचनाएं मध्यकाल की खबर हैं और मध्यकाल की नजर भी। 'रामचरितमानस' का कलियुग वर्णन मध्यकाल का ही दृश्यालेख है। मध्यकाल वहां अपनी संपूर्णता में उपस्थित है। 'कवितावली' में भी मध्यकालीन समाज और परिवेश अपनी संपूर्ण भाव-भंगिमा के साथ मौजूद है। एक इंटरव्यू में फिराक गोरखपुरी ने कहा है कि तुलसीदास के प्रत्येक शब्द से एक-एक जन्नत का रास्ता खुलता है।

आज की कविता के सामने सबसे बड़ा संकट है पठनीयता का। उसके पाठकों की संख्या निरंतर घटती जा रही है। कहानी के पाठक हैं, उपन्यास के पाठक हैं, किंतु कविता के पाठक नहीं के बराबर हैं। इसलिए कुछ लोगों ने आशंका व्यक्त की है कि कुछ दशकों में, कुछ वर्षों में कविता एंटीक-सी हो जाएगी, पुरावशेष बन जाएगी और म्यूजियम की चीज बन जाएगी। आश्चर्य की बात है कि शताब्दियों पहले लिखी गई तुलसी की कविताएं 'एंटीक' क्यों नहीं बनीं, पुरावशेष क्यों नहीं बन गई हैं। आज भी उनकी कविताएं मनोयोगपूर्वक, समारोहपूर्वक पढ़ी जाती हैं। आज भी उनकी कविताओं को, उनके 'रामचरितमानस' को सामान्य जन भी पढ़ते हैं और विद्वान और आचार्य भी पढ़ते हैं। जैसा कि मैंने पहले भी कहा कि आज का वक्त है विमर्शों का, स्त्री विमर्श, दलित विमर्श आदि का। तुलसी ने जिन शूद्रों की उपेक्षा की है, तिरस्कार किया है, जिन स्त्रियों की निंदा की है, भर्त्सना की है, वे बड़े शौक से तुलसी को पढ़ते हैं। ढोल-मंजीरे के साथ तुलसी की इस चौपाई को भी पूर्ण आस्था और विश्वास के साथ गाते हैं –

'ढोल गंवार सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी॥'[11]

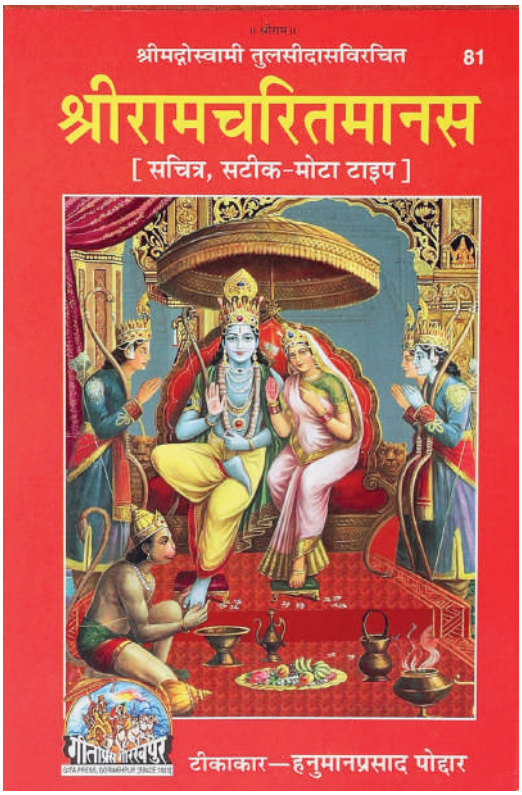

तुलसी की ऐसी पँक्तियों को उद्धृत करके कुछ स्वनामधन्य आलोचक उन्हें नारी विरोधी घोषित करना चाहते हैं, लेकिन ऐसे तथाकथिक स्त्री वादी आलोचकों से मेरी अपील है कि कृपा करके तुलसी की ऐसी पँक्तियों को पूरे संदर्भ और प्रसंग के साथ उद्धृत किया करें, तभी तुलसी के साथ यथोचित न्याय हो पाएगा। तुलसी तो इस दर्जे के स्त्री प्रेमी थे कि रत्नावली से मिलने के लिए तूफानी रात में मुर्दे पर चढ़कर उफनती नदी को पार कर गए थे। यह दीगर बात है कि इस घटना के पश्चात् ही रत्नावली की फटकार से तुलसीदास के ज्ञान चक्षु खुले थे और रामभक्ति में लीन होकर मूर्द्धन्य रामभक्त कवि के रूप में ख्यात हुए। विचारणीय है कि स्त्री के प्रति इतनी आसक्ति रखने वाला, मानवतावाद में आस्था रखने वाला इतना संवेदनशील व्यक्ति स्त्री विरोधी कैसे हो सकता है। हाँ, कुछ संकुचित मानसिकता वाले पाठक और आलोचक ये भले ही कह सकते हैं कि रत्नावली की फटकार से उपजे मोहभंग ने उनकी लेखनी में स्त्री विरोधी चेतना भर दी है। वास्तव में ऐसी सोच

रखने वालों की बुद्धि पर केवल सिर ही पीटा जा सकता है, क्योंकि यह ध्यान देने योग्य बात है कि तुलसी ने जहाँ भी स्त्री-विरोधी बातें लिखीं हैं या स्त्रियों की निंदा की है, केवल उन्हीं महिलाओं के बारे में लिखा है, जो स्वार्थी हैं, ईर्ष्यालु हैं, अमानवीय सोच रखने वाली हैं, किसी-न-किसी रूप में मानवता के प्रतिपक्ष में सक्रिय हैं, जैसे- मंथरा, कैकेयी, ताड़का, सुर्पनखा आदि। कौशल्या, सीता, उर्मिला, अनुसूया, सुलोचना जैसी महिलाएँ, जो कि त्याग, परोपकार, ममता आदि जैसे उच्च मानवीय मूल्यों से लैस हैं; तुलसी के समस्त रचना-संसार में आदरणीय और सम्मानीय हैं।

तुलसी की अर्द्धालियों और चौपाइयों को कुछ लोग भक्ति भावना से गाते हैं। भक्ति की मुद्रा में पढ़ते हैं। मगर कुछ लोग हैं, जो तुलसी को आलोचना दृष्टि से पढ़ते हैं, गुनते हैं और समझते हैं। ऐसे लोगों में आचार्य रामचंद्र शुक्ल, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी और निराला थे। डॉक्टर विश्वनाथ त्रिपाठी तो कहते हैं कि इन तीनों में सबसे ज्यादा तुलसी को निराला ने पढ़ा था। जैसा कि आरंभ में भी इंगित किया गया है कि मार्क्सवादी भी तुलसी को पढ़ते हैं - डॉ. नामवर सिंह के प्रिय कवि तुलसीदास ही हैं। डॉ. रामविलास शर्मा ने तो तुलसी पर एक पुस्तक ही लिखी है, जो अभी तक दुर्भाग्य से अप्रकाशित है। वे तुलसी की एक अर्द्धाली पर लट्टू हैं -

'कत विधि सृजी नारी जग माहीं।
पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं।।'[12]

गरज कि तुलसीदास के पाठकों का वर्ग व्यापक है। निरक्षर से लेकर विद्वानों तक में उनकी व्याप्ति है। वे घर-घर में मौजूद हैं। वे हमारे परिप्रेक्ष्य हैं। वे हमारे परिदृश्य हैं। साक्षात फेनामिनन हैं। वे हमारी सांसों में चलते हैं, हमारी रगों में दौड़ते हैं, हमारे मेरुदंड में बसते हैं। जैसे हवा, पानी, धूप, चांदनी, धरती, आकाश हैं, वैसे ही हैं हमारे लिए तुलसीदास। सवाल है उनकी इस कदर व्याप्ति का कारण क्या है? उनकी पठनीयता इतनी व्यापक क्यों है? उनकी लोकप्रियता इतनी व्यापक क्यों है?

कुछ लोग कहते हैं कि उन्होंने राम कथा लिखी, और वह भी भाखा में। अवधी में। इसलिए सामान्य जन में उनकी अपार लोकप्रियता है। उन्होंने 'रामचरितमानस' केवल सामान्य जनों के लिए ही नहीं लिखा, प्रबुद्धजनों के लिए भी लिखा। इसलिए संस्कृत शब्दों का तद्भवीकरण किया, उन्हें बोलियों के साँचे में ढाला, सहज और स्वाभाविक बनाया। डॉक्टर रामस्वरूप चतुर्वेदी का मत है कि उनकी सबसे बड़ी रचना समस्या थी कि शास्त्रीयता को, दर्शनिकता को कैसे लोक ग्राह्य बनाया जाए। इस प्रयास में वह पूर्णत: सफल हुए, क्योंकि कहीं भी अपने सर्जक व्यक्तित्व पर, अपने रचनाकार पर, अपने ज्ञान को हावी नहीं होने दिया। अपनी कविताई पर अपनी पंडिताई को हावी नहीं होने दिया। उन्होंने जीवन का सीधा साक्षात्कार किया। और, एक संवेदन जगत निर्मित किया। अपनी रचनाओं में एक भाव जगत का निर्माण किया। यही संवेदन जगत पाठकों को पढ़ने के लिए आमंत्रित करता है। उनका देसी और खाँटी व्यक्तित्व हमें पढ़ने के लिए प्रेरित करता है। ध्यातव्य है कि तुलसी जैसे बाकायदा प्रशिक्षित कवि द्वारा 'नाना पुराण निगमागम सम्मतं' रामकथा का लोकभाषा अवधी में लिखा जाना महज इत्तेफाक नहीं है। धारा के विरुद्ध चलने का यह शौक वस्तुत: उस दौर में संस्कृत के वर्चस्व से मातृभाषाओं की मुक्ति की सायास और मुखर पहल है। कबीर, सूर, जायसी और तुलसी की अपनी मातृभाषाओं के प्रति इसी समर्पण और झुकाव तथा आम जनता के मनोविज्ञान की बारीक समझ ने उन्हें भक्ति आंदोलन का महानायक बना दिया। मध्यकाल में जनभाषाओं के उत्थान की इसी प्रक्रिया को ध्यान में रखकर प्रसिद्ध आलोचक मैनेजर पाण्डेय ने यह स्थापना दी है कि **'भक्ति आंदोलन संस्कृत के वर्चस्व से मातृभाषाओं की मुक्ति का आंदोलन भी है।'**[13]

गौरतलब है कि तुलसी की एक खास विशेषता है 'सामंजस्य'। उन्होंने भक्ति और कविता, सगुण और निर्गुण, भक्ति तथा ज्ञान, शैव और वैष्णव आदि सभी में सामंजस्य की बात की है। उन्होंने ईश्वर और मनुष्य में समान आस्था, समान विश्वास प्रकट किया है -

'सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥'[14]

'सियाराम' उनकी भक्ति के आश्रय स्थल हैं तो यह 'सब जग', यह संसार उनकी कविताओं का। उनके पात्र नारायण हैं, पर वे नर लीला करते हैं। नारायण के लिए उन्होंने अपनी भक्ति को नियोजित किया है तो नर लीला के लिए अपने कवित्व को। तुलसी गृहस्थ जीवन के कवि हैं तो आत्मनिवेदन के भी। दोनों अनुभव क्षेत्रों के महान कवि हैं। भक्ति और कवित्व के इसी संतुलित सामंजस्य के कारण तुलसी की लोकप्रियता का क्षेत्र इतना व्यापक है, इतना विस्तृत है।

उनकी एक और सबसे बड़ी खासियत यह है कि उन्होंने नरलीला के क्रम में पात्रों को मनोवैज्ञानिक धरातल पर उपस्थित किया है। किस परिस्थिति में पात्रों की क्या प्रतिक्रिया होगी, अपने अंतरंग और बहिरंग के प्रति उनका क्या रिस्पांस होगा, तुलसीदास को इसकी पूरी जानकारी थी। मानव मन की जितनी सूक्ष्म और बारीक पहचान तुलसीदास को थी, उतनी आज के मनोवैज्ञानिक साहित्यकारों को भी नहीं है। नजीर के तौर पर हम एक घटना-प्रसंग का यहाँ उल्लेख कर सकते हैं। रामकथा में एक बुनियादी स्थल है, राम के प्रति कैकेयी का दृष्टि परिवर्तन। यह रामकथा का नाटकीय बिंदु है। यहीं से कथा मोड़ लेती है। परंपरा तो यह कहती है कि देवताओं के आग्रह पर सरस्वती ने कैकयी की मति में परिवर्तन ला दिया। तुलसीदास ने इस बात का संकेत भी किया है रामचरितमानस में -

'नामु मंथरा मंदमति चेरी कैकइ केरि।
अजस पेटारी ताहि करि गई गिरा मति फेरि॥'[15]

लेकिन तुलसीदास को इतने से संतोष नहीं होता है। इसके आगे वे नारी चरित्र को जोड़ते हैं। कथा विकास को विश्वसनीय बनाने के लिए, उसे लोकग्राह्य बनाने के लिए और विद्वानों के काव्य-विवेक को तुष्ट करने के लिए। 'कैकयी-मंथरा संवाद' समूचे घटनाक्रम को मानवीय संदर्भ दे देता है। कैकयी के मन में राम के प्रति अनुराग था उसको मंथरा अपने कौशल, अपने वाक्-चातुर्य से द्वेष में बदल देती है और यह अप्राकृतिक घटना शत-प्रतिशत मानवीय संदर्भ बन जाती है, ऐहिक बन जाती है।

यह क्षमता कालिदास में नहीं है। कालिदास ने भी 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' में अति प्राकृत तत्त्व का प्रयोग किया है। ठीक ऐसे ही, इतने ही महत्व का। दुष्यंत और शकुंतला के प्रेम प्रसंग में दुर्वासा का शाप ऐसी ही भूमिका अदा करता है। वह भी कथानक को अचानक मोड़ दे देता है। यह बात ठीक है कि ऋषि-महर्षियों में शाप और वरदान की क्षमता थी, लेकिन यह शाप प्रेम-व्यापार जैसी लौकिक और मानवीय क्रिया में कुछ जोड़ता नहीं है। कालिदास की रचनात्मक क्षमता में वृद्धि नहीं करता है। रचनात्मक पौरुष में तुलसीदास श्रेष्ठ हैं कालिदास से।

तुलसीदास के ऊपर ढेर सारे आरोप हैं, जैसे वे हिंदू जाति के उद्धारकर्ता हैं, ब्राह्मणवादी हैं, सवर्णों के कवि हैं आदि आदि। सबसे ज्यादा आक्षेप वर्ण-व्यवस्था समर्थक होने का है। यह कुछ अंश तक सही है। 'रामचरितमानस' के रचनाकाल तक उनका विश्वास था कि सामाजिक अव्यवस्था और अराजकता का कारण यह है कि सभी वर्णों के लोग अपने दायित्वों का ईमानदारी से निर्वाह नहीं कर रहे हैं। अगर सभी अपने कर्तव्यों का सुचारू रूप से पालन करें तो समाज में अमन-चैन पुन: स्थापित हो जाएगा। इसका संकेत उन्होंने अपने परिकल्पित 'रामराज्य' में दिया है, लेकिन 'कवितावली' में वर्ण-व्यवस्था के प्रति उनका मोहभंग हो गया है। जब इन्होंने ख्याति अर्जित कर ली तो काशी के ब्राह्मणों ने इनका तिरस्कार शुरू कर दिया, गाली-गलौज करने लगे। ईर्ष्यावश जाति तक पूछने लगे तो तुलसी तिलमिला गए। वे आक्रोश में कहते हैं-

'धूत कहो अवधूत कहो रजपूत कहो
जुलाहा कहो कोऊ
काहू की बेटी से बेटा न ब्याहब काहू की
जाति बिगारब न सोऊ'[16]

लोकवादी तुलसी एक भक्त कवि हैं। राम इनके आराध्य देव हैं, जो ईश्वर कम, मनुष्य ज्यादा हैं। अपने 'मानस' में उन्होंने भक्ति को मनुष्य का सहज धर्म

बताया है और प्रवृत्तिमूलक भक्ति का समर्थन किया है। उन्होंने कहा कि भक्ति के लिए गृहत्याग करना अनिवार्य नहीं है। घर में रहकर भी राम की भक्ति की जा सकती है। वास्तव में भक्ति 'संसार में रहने और तमाम तरह की सामाजिक, धार्मिक विसंगतियों एवं विषमताओं से संघर्ष की भावना का नाम है।' इसीलिए तुलसीदास का मानना है कि अनासक्त भाव से राम का नाम स्मरण करना चाहिए। राम नाम का महत्व बताते हुए वे कहते हैं कि–

'भायँ कुभायँ अनख आलस हूँ।
नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ॥
सुमिरि सो नाम राम गुन गाथा।
करउँ नाइ रघुनाथहि माथा॥'[17]

इस संबंध में उन्होंने 'नवधा भक्ति' का विस्तार से वर्णन किया है। 'नवधा भक्ति' के ही अंतर्गत 'दास्य भक्ति' आती है। पूरे रामकाव्य की भक्ति दास्य भाव की है। दास वह होता है, जो तन, मन और धन से अपने आराध्य के प्रति समर्पित होता है। भक्ति के संदर्भ में दासता चेतना की वह अवस्था है, जिसमें हम अपने समूचे अहंकार को त्याग देते हैं। इसीलिए दास्य भक्ति में किसी तरह के अहंकार का कोई नामोनिशान नहीं होता है। भक्ति की चरम अवस्था में संपूर्ण समर्पण की स्थिति बनती है। रामकाव्य दास्य भक्ति को प्रधानता देता है। दास्य भक्ति में भक्त और भगवान का सीधा और पारदर्शी संबंध होता है। संबंधों की यह पारदर्शिता ही दास्य भक्ति की निशानी है। इसलिए दास्य भक्ति सीधी, सरल एवं सहज है। तुलसीदास तो यहाँ तक कहते हैं कि –

'सेवक सेव्य भाव बिनु भव न तरिअ उरगारि।'[18]

अपने आराध्य के प्रति समर्पण का आलम यह है कि तुलसी आत्मनिवेदन करते हुए कहते हैं –

'एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास।
एक राम घनस्याम हित चातक तुलसीदास।।'[19]

रामभक्ति काव्य में ब्रह्म की उभयात्मक अवधारणा मिलती है। वह मूर्त–अमूर्त, व्यक्त–अव्यक्त, चल–अचल सबकुछ है, यानी सर्वरूप है। उसके दोनों रूप सत्य और नित्य हैं। 'मानस' में तुलसीदास ने लिखा है –

'अगुनहि सगुनहि नहिं कछु भेदा।
गावहिं श्रुति पुरान बुध वेदा।
अगुन अरूप अलख अज जोई।
भगत प्रेमबस सगुन सो होई।।'[20]

इस प्रकार तुलसीदास ने प्रवृति–निवृति, सगुण–निर्गुण आदि मार्गों में समन्वय स्थापित कर समाज का बड़ा उपकार किया। तुलसी की समन्वयवादी दृष्टि को रेखांकित हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि 'भारतवर्ष का लोकनायक वही हो सकता है, जो समन्वय करने का अपार धैर्य लेकर आया हो। भारतीय जनता में नाना प्रकार की परस्पर विरोधिनी संस्कृतियां, साधनाएं, जातियां, आचार–विचार और पद्धतियां प्रचलित हैं। तुलसीदास स्वयं नाना प्रकार के सामाजिक स्तरों में रह चुके थे। उनका सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। उनमें केवल लोक और शास्त्र का ही समन्वय नहीं है', बल्कि भक्ति एवं कविता में भी समन्वय है।

बहरहाल, तुलसी के राम धरती के कण–कण में व्याप्त हैं। संपूर्ण मानवजाति के रोम–रोम में रमे हुए हैं। वह सभी के लिए उसी तरह सुलभ हैं, जैसे हवा और सूर्य की किरणें। इस संसार में राम की उपस्थिति या कहें की व्याप्ति के संदर्भ में तो बस इतना ही कहा जा सकता है कि –

'यह बहस अब हस है कि
खुदा है कि नहीं है
पर्दे जो हिल रहे हैं तो
हवा है कि नहीं है।'

राम और रामकथा के महत्व तथा महात्म्य को दर्शाते हुए तुलसी कहते भी हैं कि **'रामकथा सुन्दर करतारी, संशय विहग उड़ावन हारी।'**[21] अर्थात रामकथा का इतना प्रभाव है कि वह हर तरह के भ्रम, संदेह और संशय से मनुष्य को मुक्ति दिलाता है। तुलसी इतने से ही संतुष्ट नहीं हो जाते, आगे यह भी कहते हैं कि रामकथा का महात्म्य इस बात में भी है कि राम नाम रूपी मणि व्यक्ति को अंधकार से प्रकाश की ओर, अज्ञानता से ज्ञान की ओर ले जाती है–**'राम नाम मणि**

दीप धरु, जिह देहरी द्वार/तुलसी भीतर बाहिरहूँ जौ चाहस उजियार।'[22] कुलमिलाकर तुलसी की रामकथा मनुष्य को सामाजिक और समाज को मानवीय बनाने का एक सशक्त आधार रही है और आगे अनंतकाल तक रहेगी भी।

तुलसी पर बात करते-करते कब व्यक्ति राम और रामकथा पर स्विच कर जाता है पता ही नहीं चलता। दरअसल दोनों एक-दूसरे के पूरक भी हैं और पर्याय भी। तुलसी ने यदि राम और रामकथा को एक विस्तृत फलक दिया है तो रामकथा ने भी तुलसी के व्यक्तित्व को भारतीय तथा वैश्विक मनीषियों के बीच अन्यतम ऊँचाई प्रदान की है। उनके रचनात्मक विवेक को परिपूर्णता प्रदान की है। तुलसी को एक मुकम्मल कवि के रूप में स्वीकृत एवं स्थापित किया है। इस महान राम भक्त कवि के संदर्भ में अंत में कवि त्रिलोचन से शब्द उधर लेते हुए बस इतना ही कहकर कृतकृत्य हुआ जा सकता है कि-

'यज्ञ रहा, तप रहा तुम्हारा जीवन भू पर।
भक्त हुए, उठ गए राम से भी, यों ऊपर।'[23] ❑

संदर्भ-सूची :

1. त्रिपाठी, विश्वनाथ, हिंदी आलोचना, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण-2004, पृष्ठ सं. 159
2. वही.
3. शुक्ल, ध्रुव, त्रिलोचन संचयिता, तुलसी बाबा (कविता), वाणी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण- 2002, पृष्ठ सं. 47
4. नागार्जुन, तुलसी बाबा (कविता), नागार्जुन रचनावली, भाग-3
5. पाण्डेय, मैनेजर, कबीर और आज का समय, आलोचना, अंक-अप्रैल-जून 2000, पृष्ठ सं. 277
6. तुलसीदास,कवितावली,पृष्ठ सं.-174, पद सं.- 66
7. वही. 7/57
8. तुलसीदास, विनयपत्रिका, 275/2
9. शुक्ल, रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी, 1999, 36वाँ संस्करण, पृष्ठ सं. 70
10. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड, पद सं. 6
11. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, सुंदरकाण्ड, चौपाई
12. सिंह, उदयभानु (सं.), तुलसी, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृष्ठ सं. 158
13. पाण्डेय, मैनेजर, आलोचना, अप्रैल-जून 2000, पृष्ठ सं. 280
14. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, बालकाण्ड, चौपाई सं. 1.8
15. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, अयोध्याकाण्ड, दोहा सं. 12
16. तुलसीदास, कवितावली, गीता प्रेस, गोरखपुर, 2017, पृष्ठ सं. 120
17. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, बालकाण्ड, चौपाई
18. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, उत्तरकाण्ड, दोहा सं. 119 (क)
19. तुलसीदास, दोहावली, गीता प्रेस, गोरखपुर, दोहा सं. 277
20. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, बालकाण्ड, चौपाई
21. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, बालकाण्ड, चौपाई सं. 1.114
22. तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, बालकाण्ड, दोहा सं. 21
23. शुक्ल, ध्रुव, त्रिलोचन संचयिता, तुलसी बाबा (कविता), वाणी प्रकाशन,दिल्ली, संस्करण- 2002, पृष्ठ सं. 47

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

प्रसंग

रोज करें योग, दूर भगाएँ रोग

प्रो. प्रदीप के. शर्मा

प्रोफेसर, हिंदी विभाग
सिक्किम केंद्रीय विश्वविद्यालय
काजी रोड, गंगटोक
सिक्किम - 737101
मो. 8056067674
ई-मेल : pradipsarma2010@gmail.com

योगविद्या भारतवर्ष की सबसे प्राचीन संस्कृति और जीवन पद्धति है तथा इसी विद्या के बल पर भारतवासी प्राचीन काल से सुख, समृद्ध और स्वस्थ जीवन बिताते आ रहे हैं। जिस तरह पूजा-पाठ, धर्म-कर्म से शांति मिलती है, ठीक उसी तरह योगाभ्यास से धन-धान्य, समृद्धि और स्वस्थ जीवन की प्राप्ति होती है। योग एक ऐसी ऊर्जा है, जो मन में प्रविष्ट होकर एक सशक्त विचार बनकर अभ्यास में उतरती है और सारे तकलीफों से हमें निदान प्रदान करती है। योग शब्द संस्कृत मूल 'यूज' से लिया गया है, जिसका अर्थ है जुड़ना, जोड़ना या एकजुट होना, जो मन और शरीर की एकता का प्रतीक है। योग विचार और क्रिया, संयम और पूर्ति, मानव और प्रकृति के बीच सामंजस्य, स्वास्थ्य और कल्याण के लिए एक समग्र दृष्टिकोण है।

21 जून को पूरी दुनिया में अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया जा रहा है। इस दिवस को मनाने का मूल उद्देश्य योग के फायदों के बारे में जागरूकता फैलाना और लोगों को प्रेरित करना है। 11 दिसंबर, 2014 से संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया जा रहा है। भारत के साथ-साथ अब पूरी दुनिया योग की शक्ति को मान रही है। योग न सिर्फ शारीरिक, बल्कि हमें मानसिक मजबूती भी देता है।

योग भारतीय कला का एक ऐसा रूप है, जो मात्र एक कला ही नहीं, बल्कि उससे कहीं अधिक महत्व रखता है। साथ ही योग हमारी जिंदगी में कई मायनों में अपना एक अलग ही स्थान रखता है, चाहे वह रोगों से मुक्ति के लिए हो या फिर सुगम एवं स्वस्थ जीवन जीने के लिए हो। कई शोधों से पता चला है कि जहाँ दवाइयाँ अपना असर दिखाने में नाकाम रही हैं, वहाँ योग ने अपना जादू दिखाया है। योग की ताकत का अंदाजा इस बात से भी लगाया जा सकता है कि यदि आप अपनी दिनचर्या में योग को शामिल करते हैं तो आप किसी भी तरह की बीमारी एवं कुरोग से खुद का बचाव आसानी से कर सकते हैं। आप देखेंगे कि यह योग आपको एक नई ऊर्जा प्रदान कर रहा है।

योग हर आयु वर्ग के लिए उपयुक्त तथा आवश्यक है एवं विभिन्न रोगों के पारंपरिक उपचारों के साथ-साथ पूरक चिकित्सा के रूप में भी इसका उपयोग किया जा रहा है। कई मामलों में देखा गया है कि योग जन्मजात रोगों से भी छुटकारा दिलाने में काफी सफल रहा है, फिर चाहे रोग भीतरी हो या बाहरी। परंतु चिकित्सा हमेशा अनुभवी व्यक्ति के निर्देशन में ही होना चाहिए। दूसरी जरूरी बात यह है कि योग चिकित्सा कभी भी आधे मन से या अनमने ढंग से नहीं करना चाहिए। योगाभ्यास सही ढंग से सीखा और किया जाए तो अभ्यासी यदि एकदम से पूर्णरूपेण स्वस्थ नहीं भी हो तो भी कम-से-कम उसकी बीमारी का आगे बढ़ना तो रुक ही जाएगा और कुछ-न-कुछ लाभ तो अवश्य ही होगा। अक्सर अभ्यासी अपने इलाज में विफलता के लिए स्वयं के बजाय योग को दोषी ठहराने लगता है, परंतु लाभ काफी हद तक रोग की तीव्रता एवं समयावधि पर निर्भर है। इस बात में कोई शक नहीं है कि यदि रोगी कम उम्र का हो और बीमारी की शुरुआत हो रही हो तो ऐसी अवस्था में योग का लाभ सर्वाधिक होता है।

कई बार जब योगाभ्यास का परिणाम आने में समय लगता है, तब औषधियों से रोग को नियंत्रित रखना पड़ता है और जैसे-जैसे योग का प्रभाव बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे दवाओं की मात्रा कम करके उन्हें बंद कर दिया जाता है।

हालाँकि योग एवं औषधियाँ रोग को नियंत्रित करने में एक-दूसरे के संपूरक होते हैं, फिर भी पूर्ण स्वास्थ्य की स्थिति योग ही ला सकता है, क्योंकि योग सिर्फ क्रियाओं का अभ्यास नहीं है, वरन एक संपूर्ण जीवन शैली है। योग हमें यह शिक्षा देता है कि अब तक हम एक गलत जीवन शैली एवं विचारधारा में जी रहे थे, जिससे शरीर के प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन हो रहा था, इसीलिए उसका संतुलन बिगड़ गया। यदि हमें संतुलित, स्वस्थ एवं आनंदमय जीवन जीना है तो हमें अपने आपको सुधारना होगा। अक्सर हम लोग आम जीवन में रोगों के लिए दवाई भी खाते रहते हैं और स्वास्थ्य के मूल नियमों का उल्लंघन भी करते रहते हैं, फलतः रोग की जड़ें वहीं रहती हैं, सिर्फ लक्षण दबे रहते हैं। अतः केवल औषधियों से पूर्ण स्वास्थ्य कभी प्राप्त नहीं किया जा सकता। प्राकृतिक नियमों के अनुरूप उचित जीवन शैली ही स्वास्थ्य का मूल मंत्र है।

योग में रोग एवं स्वास्थ्य को पूर्णतः भिन्न एवं क्रांतिकारी दृष्टिकोण से देखा गया है। भारतीय चिंतन धारा में रोग को शत्रु नहीं, बल्कि मित्र माना गया है, जो हमें आध्यात्मिक शिक्षा प्रदान करता है। योग सिखाता है कि हमें अपनी बीमारियों को आध्यात्मिक विकास क्रम में एक छलाँग लगाने के लिए उपयोग करना चाहिए।

यह प्रकृति बीमारी के माध्यम से बार-बार हमें सचेत करने का प्रयास करती है कि योग द्वारा चेतना का विकास ही स्वास्थ्य का मूल मंत्र है। यौगिक प्रक्रिया से पुनर्संतुलन, अंतर्दृष्टि एवं इन प्राकृतिक नियमों की समझ आती है, जो हमारे चारों ओर कार्यरत है तथा हमें नियंत्रित करती है।

यदि हम आधुनिक परिभाषाओं के परिप्रेक्ष्य में भी देखें तो स्वास्थ्य को एक बहुआयामी अवस्था के रूप में

बताया गया है। शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक सभी स्तरों पर संतुलन ही स्वास्थ्य है। इनमें शारीरिक स्तर का इलाज मात्र एक चौथाई इलाज है। इसी तरह बीमारी की रोकथाम, शारीरिक क्षमता में वृद्धि एवं समुचित इलाज-इन तीनों विधियों से शारीरिक व्याधियाँ नियंत्रित की जा सकती हैं, परंतु प्रमुखत: लाक्षणिक इलाज पर केंद्रित रहना एक तिहाई इलाज है। अधिकांश संभावनाओं का अन्वेषण अभी भी अपेक्षित जान पड़ता है। इस प्रकार स्पष्टत: समकालीन प्रचलित चिकित्सा प्रणालियाँ अधूरी हैं।

योग इस स्थिति में एक संपूर्णता का विकल्प लेकर प्रस्तुत होता है। यौगिक विचारधारा सभी पक्षों को उचित पहल देती है। शारीरिक, मानसिक, सामाजिक व आध्यात्मिक-सभी पक्ष अन्योन्याश्रित रूप से परस्पर संबद्ध हैं।

जिस प्रकार शारीरिक तौर पर स्वस्थ रहने के लिए मानसिक स्वास्थ्य आवश्यक है, उसी प्रकार आध्यात्मिक रूप से स्वस्थ रहने का प्रयास इन तीनों स्तरों को स्वत: उत्कृष्ट स्वास्थ्य की अवस्था में बनाए रखता है। यह भी ध्यान रखना है कि बीमार पड़ने पर ही इन प्रयासों को प्रारंभ न किया जाए, वरन स्वास्थ्य को संपूर्णता प्रदान करने तथा स्वाभाविक अवस्था को बनाए रखने हेतु रोकथाम स्वत: संभव हो।

हमें योगाध्यास का लाभ केवल स्थूल साफ-सफाई से नहीं, वरन विचारों के सूक्ष्म वातावरण में परिवर्तन के रूप में प्राप्त करना है। शारीरिक कार्य प्रणालियों में संतुलन, भावनाओं, विचारों एवं व्यवहारों में संतुलन, रचनात्मक प्रतिभाओं का जागरण, समाज व वातावरण में शुद्धि आदि द्वारा। यदि विसंगतियाँ पर्याप्त मात्रा में हैं तो जाने-अनजाने हम भी उन तरंगों को संस्कार रूप में आत्मसात करने से बच नहीं सकते।

यौगिक उपचार के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक है - आश्रय जीवन। जो व्यक्ति वास्तव में सकारात्मक शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य का आकांक्षी है एवं उन मूल कारणों को खोजना चाहता है, जो जीवनचर्या एवं विचारधारा की गड़बड़ी से रोग उत्पन्न करते हैं, उन्हें आश्रम में रहकर थोड़े समय में ही यह सारी जानकारियाँ मिल सकती हैं, जिससे नई जीवन शैली एवं योग के साथ उसका उन्मूलन भी शीघ्रता से संभव हो सकेगा।

कोई भी चिकित्सा आश्रम के शुद्ध एवं सकारात्मक वातावरण में, प्राण एवं जीवन शक्ति के आवेश में तथा प्रसन्नचित ओजस्वी साथियों के बीच शीघ्र फलदाई होती है। ऐसे वातावरण में योग चिकित्सा के सभी औपचारिक तथा अनौपचारिक पहलुओं का लाभ उचित माध्यम से मिलता है। आश्रम में प्राणयाम, शोधन प्रक्रियाएँ, दयान एवं योगिन्द्रियाँ इत्यादि की औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ सत्संग, आश्रम कार्य के रूप में हल्का-फुल्का कर्मयोग, भजन-कीर्तन के रूप में भक्ति योग, मंत्र जप इत्यादि का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। आश्रम का स्वाभाविक एवं तनावरहित वातावरण शारीरिक, भावात्मक एवं मानसिक पुनरुत्थान के लिए आदर्श स्थान है।

योग चिकित्सा के अभ्यासों से जब शरीर में परिवर्तन महसूस होने लगता है और हमारा विश्वास जमने लगता है तो हम पूरी प्रक्रिया का अनुभव कर सकते हैं कि हमारे साथ क्या हुआ था। रोगों से पूरी तरह से निदान के उपरांत अगर योगाभ्यास बंद भी कर दिया जाए तो भी सुखद अनुभूति एवं स्मृति के माध्यम से हम स्पष्ट अनुभव कर सकते हैं कि योग सिर्फ एक रोगनाशक प्रक्रिया ही नहीं, वरन स्वस्थ जीवन जीने एवं आध्यात्मिक विकास का एक सशक्त एवं महत्वपूर्ण माध्यम है।

इस बार अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस 2023 की थीम 'वसुधैव कुटुम्बकम' के सिद्धांत के साथ वन वर्ल्ड, वन हेल्थ रखी गई है। इस दिवस को मात्र एक उत्सव के रूप में न मनाकर हमें रोज योगाभ्यास करना चाहिए, जिससे तन-मन को रोगमुक्त और ऊर्जावान रखा जा सके। अंत में मैं यही कहना चाहूँगा-

योग से करो दोस्ती।
रोग से पाओ मुक्ति।। ❑

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

वृन्दावन लाल वर्मा के सामाजिक उपन्यास : परिवेश एवं समस्याएँ

डॉ. शशिकला

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
वसन्त कन्या महाविद्यालय
कमच्छा, वाराणसी, उत्तर प्रदेश
मो. 7376558390
ई-मेल : shashi.bhu10@gmail.com

शोध सार :

मनुष्य का समाज एवं वातावरण से घनिष्ठ संबंध है। वातावरण का प्रभाव प्रत्येक मनुष्य पर पड़ना स्वाभाविक है, उस पर तो और अधिक जो सर्जक व्यक्तित्व लिए हुए हो। साहित्य को मनुष्य की संवेदनाओं का कोश कहा जा सकता है, क्योंकि इसमें मनुष्य की समस्त चेष्टाएँ समाहित रहती हैं। हिंदी में गद्य साहित्य का आरंभ आधुनिक काल से होता है। प्रारंभिक उपन्यास जादुई, तिलिस्मी एवं परियों की कहानियों पर केंद्रित था, जो कल्पना द्वारा पाठकों का मनोरंजन करता था। प्रेमचंद के आगमन ने हिंदी उपन्यास साहित्य में यथार्थ को आकार दिया और उन्हें उपन्यास सम्राट की उपाधि से विभूषित किया गया। प्रेमचंद के समकक्ष ही उपन्यास साहित्य में वृन्दावन लाल वर्मा का भी पदार्पण हुआ। उन्होंने भी प्रेमचंद के समान सामंती व्यवस्था, सांप्रदायिकता, गरीबी, जाति व्यवस्था और समाज में प्रचलित सामाजिक और आर्थिक स्थितियों के खिलाफ आवाज उठाई। साथ ही उन्होंने दहेज प्रथा, विधवा विवाह, कृषकों की समस्या और महिलाओं के खिलाफ हो रहे भेदभाव के खिलाफ भी लिखा। वैसे तो हिंदी कथा साहित्य में वृन्दावन वर्मा के आगमन से पूर्व ही समाज में फैली तमाम विसंगतियों को दूर करने के लिए भारतवर्ष में चतुर्दिक समाज सुधारकों द्वारा आंदोलन छिड़ चुका था। वर्मा जी एक जागरूक चिंतक एवं मनीषी थे, उनके सामने वर्तमान सामाजिक विद्रूपताएँ एवं समस्याएँ थीं, जिसने उन्हें उपन्यास लेखन के लिए प्रेरित किया।

बीज शब्द :

पूँजीवादी व्यवस्था, धर्म परिवर्तन, विधवा विवाह, सहकारी समिति, दहेज प्रथा, पूँजीपति, स्त्री स्वातंत्र्य आदि।

मूल आलेख :

तत्कालीन युग में सामाजिक एवं धार्मिक बंधन इतने जटिल हो गए थे कि जीवन के विकास की गति ही रुक गई थी। मनुष्य घुट-घुट कर जीवन

जीने के लिए विवश था। पूँजीवादी व्यवस्था का बोलबाला था। ऐसी स्थिति में युगीन लेखकों ने विभिन्न समस्याओं को अपनी रचना के केंद्र में रखकर सामान्य जनता को प्रेरित करने का कार्य किया। वर्मा जी ने भी अपने चारों ओर के परिवेश से प्रेरणा ली और विभिन्न सामाजिक समस्याओं को उद्घाटित किया। उन्होंने कुल ग्यारह सामाजिक उपन्यास लिखे, जिनमें उन्होंने छुआछूत, ऊँच-नीच, विधवा-विवाह एवं धर्म परिवर्तन इत्यादि अनेक समस्याओं का सजीव एवं यथार्थ चित्रण किया है। वर्मा जी का प्रथम सामाजिक उपन्यास 'लगन' 1927 में लिखा गया था। इस उपन्यास की समस्या मुख्यत: दहेज की समस्या है। बजटा गाँव के शिबुमाते के पुत्र देवसिंह का विवाह बरौल गाँव के बादल चौधरी की कन्या रामा से हो जाता है, किंतु दहेज में सौ भैंसें न मिलने के कारण वे वधू की विदा नहीं कराते हैं और कहते हैं-**'बहू को विदा न कराएँगे। भैया का दूसरा विवाह होगा। उसका अंग-अंग ब्याहा जा सकता है। लड़कियों की संसार में कोई टूट नहीं है।'**[1] तत्कालीन समाज में लड़कियों के पुनर्विवाह को हेय दृष्टि से देखा जाता था, जबकि पुरुष को यह अधिकार था कि वह एक नहीं, दो-चार विवाह भी कर सकता था। तभी तो देव सिंह के अंग-अंग ब्याहे जाने की बात की जाती है, किंतु रामा और देव सिंह दोनों दूसरा विवाह नहीं करना चाहते। भारतीय नारी को एक विवाह में आस्था एवं पति परायणता का गुण संस्कार में मिलता है, इसलिए पन्नालाल से विवाह होने की बात पर रामा कहती है-**'बस ये बातें हमसे न कहा करो। जो भाग्य में बदा होगा, सो तो होगा ही, पर अभी से कुछ न बको।'**[2] वास्तव में रामा की पति-भक्ति एवं उसकी पवित्रता तथा देव सिंह के प्रयासों के फलस्वरूप दोनों का मिलन होता है।

1927 में ही लिखा गया 'संगम' उपन्यास भी समस्या प्रधान उपन्यास है। इसमें लेखक ने जाति बंधन की समस्या, संपत्ति पर अधिकार की समस्या एवं डाकुओं की समस्या को उद्घाटित किया है। धनीराम जाति का नाई है और वह अनाथ ब्राह्मण कन्या का पालन-पोषण

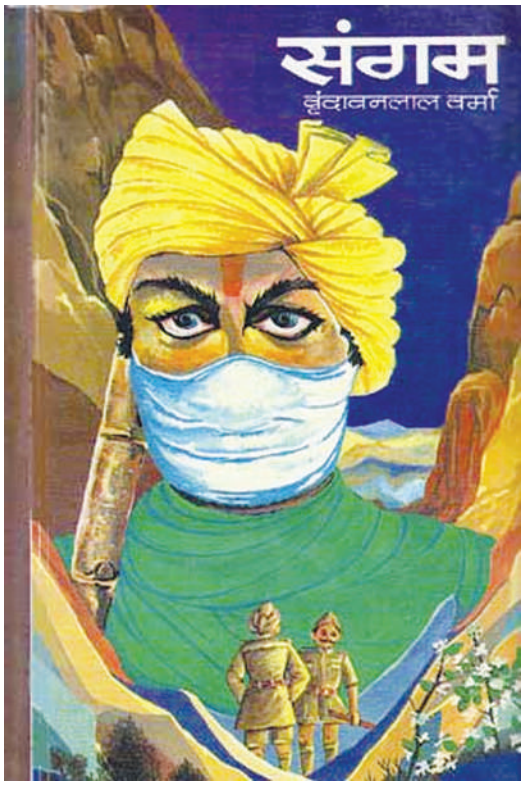

करता है। नाई के यहाँ पली होने के कारण उसका विवाह ब्राह्मण कुल में नहीं हो पा रहा था, किंतु दहेज का लोभी भिखारीलाल अपने बेटे का विवाह कर देता है। दूसरी तरफ रामचरण डाकू सुखलाल और अहीरिन जाति से जन्मा पुत्र है। धर्म के ठेकेदार सुखलाल का जाति बहिष्कार करते हैं, किंतु सुखलाल विधवा गंगा से रामचरण का विवाह कराकर स्पष्ट कहता है-**'मैं अब बिरादरी की या किसी की भी रत्तीभर परवाह नहीं करता।'**[3] दूसरी समस्या संपत्ति में अधिकार की है। सुखलाल की बहन को उसकी मृत्यु के पश्चात अदालत संपत्ति से बेदखल कर देती है, तब वर्मा जी कहलवाते हैं-**'हमारे हिंदू शास्त्र। अनाथ विधवा बहिन को अपने प्यारे मृत भाई के मकान की एक छोटी कोठरी में रहने तक का हक नहीं दे और तेरहवीं पीढ़ी के लुच्चे लफंगे कुटुंबी को सब जायदाद हड़प कर जाने का विधिवत अधिकार है।'**[4] वर्मा जी शास्त्र की बातों को उतना महत्व नहीं देते, क्योंकि उनके अनुसार एक पिता

या भाई की संपत्ति में बहन एवं बेटी को भी बराबर का अधिकार है।

इस उपन्यास में वर्मा जी ने डाकुओं की समस्या का भी समाधान कराया है। अस्पताल में मृत्यु से पहले डाकू लालमन जब थोड़ी देर के लिए चैतन्य अवस्था में आता है तो वह डाकू बनने के कारण एवं समस्या पर कहता है-'**साधारण परिश्रम से बहुत-सी संपत्ति मिलती न देखकर मैंने वह काम शुरू किया था। बहुत डाके डाले और बहुतेरों को मारा, जिसका न मालूम मुझे क्या दंड मिलेगा, परंतु मैंने बूढ़ों एवं स्त्रियों के ऊपर कभी हाथ नहीं डाला।**'[5] लालमन एक डाकू था, लेकिन उसके हृदय में मानवता की भावना भरी हुई थी।

'प्रत्यागत' उपन्यास में वर्मा जी ने मलाबार में बलपूर्वक हिंदू को मुसलमान बनाए जाने की समस्या को चित्रित किया है। बाँदा के धर्मभीरू ज्योतिषी पं. टीकाराम का इकलौता बेटा मंगलदास धनोपार्जन के लिए बंबई (पूना) जाता है, जहाँ उसकी भेंट मुसलमान रहमतुल्ला से होती है और वह उसके साथ मलाबार पहुँच जाता है। वहाँ एक मस्जिद में नमाज पढ़ने के समय बलपूर्वक उसे मुसलमान बना दिया जाता है। यहाँ पं. टीकाराम स्वयं टिप्पणी देते हुए कहते हैं-'**विधर्मी को धर्म में वापस कभी नहीं लिया जा सकता।**'[6] आर्य समाज के आगमन से धीरे-धीरे लोगों की विचारधारा में परिवर्तन आया, इसलिए इस उपन्यास में धार्मिक अंधविश्वास और उन पर समाज के ठेकेदारों के आपसी द्वंद्व का सुंदर और स्वाभाविक चित्रण किया गया है। साथ ही मंगलदास को पुनः हिंदू धर्म में परिवर्तित कराकर हिंदुओं में उच्च जाति के व्यक्तियों के जातीय अभिमान और दुराग्रह को भी प्रकट किया है।

'कुंडली चक्र' उपन्यास में असफल प्रेम एवं कुंडली मिलाकर विवाह कराए जाने के दुष्परिणाम और जमींदारों द्वारा किसानों पर अत्याचार एवं शोषण की समस्या को दर्शाया गया है। रतन का विवाह कुंडली मिलाकर किया जाता है, फिर भी वह खुश नहीं। इस उपन्यास की कथा सामग्री तत्कालीन समाज से एकत्रित की गई है। कुंडली चक्र की भूमिका में वे लिखते हैं-'**अजित और पूना के संबंध की घटनाएँ, जो इस उपन्यास में लिखी गई हैं, सच्ची हैं, परंतु थोड़े से हेर-फेर के साथ लिखी गई हैं।**'[7] उपन्यास में तत्कालीन समाज में जमींदारों का वर्चस्व और अत्याचार इतना अधिक था कि उनका विरोध करने का साहस किसी में भी नहीं था, किंतु इस उपन्यास का पात्र अजित सशक्त एवं कर्मठ पात्र है। उपन्यास की स्त्री पात्र पूना पर जो अत्याचार होता है, उस संदर्भ में वह सोचता है-'**अभी तक दरिद्र किसानों के ऊपर वार होता था, अब दीन स्त्रियों की बारी आई है। जो कुछ बन सकेगा, अवश्य करूँगा।**'[8] अर्थात वर्मा जी स्त्री शोषण के भी विरोधी थे।

अकालग्रस्त किसानों एवं असफल प्रेम की समस्या को 'प्रेम की भेंट' उपन्यास में दर्शाया गया है। इसमें झाँसी के पास तालबेहट नामक ग्राम के कम्मोद किसान और पढ़े-लिखे युवक धीरज की कथा है। वर्षा न होने के कारण किसान झाँसी छोड़कर भोपाल रियासत जा रहे थे, किंतु धीरज जो कम्मोद का रिश्तेदार था, वह खेती में डटकर मेहनत करता है-'**धीरज पढ़ा-लिखा युवक है। इसके उपरांत भी कृषि को प्राथमिकता देता है। अकाल के प्रकोप में उसे अपना गाँव छोड़ना पड़ता है। अपने पैतृक गृह से उसे इतना मोह है कि वह इस अवस्था में भी मालवा न जाकर केवल तालबेहट जाता है।**'[9] इस उपन्यास में धीरज एवं सरस्वती के असफल प्रेम की, नंदन का सरस्वती से एक तरफा प्रेम की, उजियारी का धीरज के प्रति एक पक्षीय प्रेम एवं उसकी असफलता को उजागर किया गया है। धीरज एवं सरस्वती की प्रेमकथा के विषय में वर्मा जी लिखते हैं कि - '**छतरपुर रियासत के एक गाँव में एक युवक का गाँव की सुंदर लड़की से प्रेम हो जाता है। लड़की के माँ-बाप को इस प्रणय संबंध की सूचना मिल जाती है। वे लड़का एवं लड़की को एक-दूसरे से मिलने नहीं देते हैं। लड़की मर जाती है, जिसकी सूचना लड़के को उस घर की टहलनी से मिलती है। वह लड़की की ओढ़नी को चीरकर अपने सिर से बाँध लेता है और बाद में वह पागल हो जाता है।**'[10]

'कभी न कभी' उपन्यास की मुख्य समस्या मजदूरों के सामाजिक एवं आर्थिक शोषण की समस्या है। मजदूरों का शोषण करने वाले केवल पूँजीपति ही नहीं, अपितु निम्न वर्ग का मेट भी उनका शोषण करता है और उनकी इज्जत से खेलने की कोशिश करता है। वर्मा जी ने इस उपन्यास में मजदूरों का संघर्ष एवं उनकी गरीबी का यथार्थ चित्रण किया है-'झाँसी जिले के चिरगाँव-रामनगर के मध्य 1941-42 में सड़क एवं पुल बनाने वाले मजदूरों एवं उनके शोषण का यथार्थ चित्रण गाथा है।' [11] समाजवादी दृष्टि एवं समाजवादी मूल्यों में वर्मा जी की आस्था है, मजदूरों के संघर्ष में उनका विश्वास है। वह देवजू और लछमन में देवजू को अधिक यथार्थवादी मानते हैं। मेट के अत्याचार पर देवजू उसका विरोध करता है और कहता है-**'बिना लड़ाई के संसार में काम नहीं चलता। जितना दबो उतना ही मरो, जितना दाबो उतना जिओ।'** [12] लीला का पिता हीरालाल भी यथार्थ में जीने वाला साधारण-सा मजदूर है, किंतु वह अधिक दृढ़ चरित्र वाला नहीं है, अपितु लीला दृढ़ एवं स्वाभिमानी नारी है, वह प्रेम करती है पर यह भी कहती है कि -**'औरतें मोम की बनी नहीं होतीं।'** [13] वस्तुत: यह दिखाई देता है कि वर्मा जी ने इसमें मजदूरों की समस्या के साथ-साथ स्त्री स्वातंत्र्य को भी दर्शाया है।

भारत की स्वतंत्रता के पश्चात 1948 में वर्मा जी का उपन्यास 'अचल मेरा कोई' प्रकाशित होता है, जिसमें उन्होंने स्त्री स्वातंत्र्य की समस्या को उद्घाटित किया है। साथ ही पति का स्वामित्व, विधवा पुनर्विवाह, पारिवारिक कलह, पुलिस अत्याचार इत्यादि समस्याओं को भी उजागर किया गया है। इसमें स्त्री स्वतंत्रता की बात बार-बार उठती है। देश की स्वतंत्रता में भी स्त्री स्वातंत्र्य को महत्व देते हुए वर्मा जी लिखते हैं-**'ठीक अर्थ में इस देश को स्वाधीन उस दिन कहा जाएगा, जिस दिन यहाँ की स्त्रियाँ स्वतंत्र हो जाएँगी।'** [14] स्त्री की पूर्ण स्वतंत्रता के लिए सबसे पहले लेखक ने उसे आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने की बात की है, किंतु आज की स्त्री आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने के बाद भी मानसिक गुलामी से मुक्त नहीं हो पाई है। साथ ही वर्मा जी ने इसमें गांधीवादी युग के अहिंसात्मक एवं सशस्त्र प्रतिरोध की समस्या को भी उठाया है। उपन्यास का पात्र अचल कांग्रेस और महात्मा गांधी द्वारा चलाए गए अहिंसात्मक आंदोलन से प्रभावित है, इसके लिए उसे जेल भी जाना पड़ता है। पुलिस अधिकारी आम आदमी का शोषण एवं उत्पीड़न करते हैं। इनके उत्पीड़न के प्रतिरोध के लिए आम आदमी जागरूक हो गया है और हथियार भी रखने लगा है, पंचम कहता है-**'स्वराज्य के लिए बहुत सामान इकट्ठा कर लिया है। इशारा पाते ही बस।'** [15] इस उपन्यास की संरचना भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन पर की गई है।

'सोना' उपन्यास लोक कथा पर आधारित है। इसमें असफल प्रेम एवं अनमेल विवाह की समस्या को दर्शाया गया है। अनमेल विवाह का संबंध निश्चित रूप से दहेज प्रथा से था। प्रेमचंद ने भी अनमेल विवाह और दहेज प्रथा की समस्या को अपने उपन्यासों में वर्णित किया है। आर्थिक विषमताओं से जूझता सोना का पिता उसका विवाह बूढ़े, विधुर एवं लँगड़े राजा से कर देता है। सोना, राजा से उबकर आभूषणों की तरफ ध्यान लगाती है और इधर सोना का ध्यान आभूषणों की तरफ से हटाने के लिए राजा मंदिर का निर्माण कराता है। इसके साथ ही लेखक ने इसमें अंधविश्वास, निर्धनता इत्यादि की समस्या को भी उठाया है। उपन्यास के माध्यम से यह संदेश दिया गया है कि दैवीय अनुकंपा के बिना, श्रम के बल पर जीवन की जटिलताओं को सुगम एवं सुखी बनाया जा सकता है-**'मेहनत, सफाई और कला की उपासना से ही सच्चे जीवन का बड़प्पन मिलता है।'** [16]

सहकारी आंदोलन पर 1952 में लिखा गया 'अमरबेल' उपन्यास सहकारिता के साथ-साथ कई अन्य समस्याओं को उजागर करता है, जिसमें पूँजीवाद, समाजवाद, भारत का राष्ट्रीय आंदोलन, लोकतंत्र और व्यक्तिगत स्वार्थ जैसे व्यापक जीवन की समस्याएँ उठाई गई हैं। वर्मा जी ने सहकारिता को अध्यात्मवाद और व्यक्तिवाद से जोड़ने वाली एक मजबूत कड़ी माना है। सहकारिता में व्यक्ति अपने स्वार्थ को त्यागकर संपूर्ण समाज को स्वीकार करता है और यही व्यक्ति का अध्यात्म अथवा आदर्श है। वे डॉ. सनेही से कहलवाते

हैं–**'अध्यात्म के लिए विज्ञान की सहायता आवश्यक है।'**[17] अर्थात अध्यात्म जीवन का उद्देश्य है और उसकी सहायता के लिए विज्ञान आवश्यक है। देशराज और बनमाली दोनों सहकारी कृषि के विरोधी हैं। स्वाधीनता के पहले देशराज और उसके कारिंदे किसानों का शोषण करते थे, किंतु जमींदारी उन्मूलन के पश्चात सहकारी खेती द्वारा गाँवों के विकास के लिए कलक्टर के पास एक पत्र आता है कि–**'बढ़ती हुई जनसंख्या, अन्न संकट और व्यापक बेकारी की समस्याओं का सामना करने के लिए सहकारी कृषि और सहकारी कुटीर उद्योगों को विकसित और उन्नत करना बहुत जरूरी है।'**[18] साथ ही उपन्यास में अहिंसा द्वारा हिंसा पर विजय प्राप्त करना और अहिंसात्मक आंदोलन को ही सामाजिक उत्थान का श्रेष्ठ माध्यम बताया गया है।

आगे वर्मा जी ने सरकारी अधिकारियों के लक्षण बताते हुए करारा व्यंग्य किया है–**'आतंक जमाना, भत्ता सीधा करना और संस्थाओं पर अमरबेल की तरह छाये रहना ही इनका काम है।'**[19] डॉ. सनेही अहिंसा के पुजारी एवं गांधी जी के विचारों से प्रभावित इस उपन्यास के सशक्त पात्र हैं, उन्होंने टहल एवं हरको का विवाह कराकर समाज में विधवा विवाह की समस्या का समाधान कराया है।

जमींदारी प्रथा उन्मूलन के पश्चात जमींदारों की दयनीय आर्थिक स्थिति का चित्रण 'आहत' उपन्यास में किया गया है। जमींदारी प्रथा समाप्त होने बाद भी अंगद अपने को जमींदार मानता है। वह दमरू किसान पर अत्याचार करता है। दमरू सीधा–सादा ईमानदार किसान है। वह अंगद की बहुत–सी अन्यायपूर्ण बातों को मान लेता है फिर भी उसे अपनी अस्मिता का बोध है। अंगद का झूठा दंभ अपने को जमींदार ही मानता है, वह कहता है–**'रईसों के पुरखों ने रियासतें और हमारे पुरखों ने रक्त की नदियाँ बहाकर कमाई हैं। ऐसे ही नहीं मिट सकतीं।'**[20] तब दमरू गोदान की होरी की तरह अंगद की हाँ में हाँ मिलाता है और सोचता है कि भगवान की विचित्र माया है। वर्मा जी चूँकि दहेज प्रथा के घोर विरोधी थे, इसलिए विवाह के मंडप में जब छाया का होने वाला पति दहेज के लिए विवाह करने से मना कर देता है, तब छाया ललकारती है–**'है कोई ऐसा साहसी जो मेरे साथ ब्याह करने के लिए तैयार हो।'**[21] इस अवसर पर वर्मा जी ने बिना दहेज के दीप और छाया का विवाह कराकर दहेज जैसी समस्या का भी समाधान कराया है।

'उदय किरण' उपन्यास भी सहकारिता के स्वरूप एवं उससे संबंधित समस्याओं का उद्घाटन करता है। इसमें कृषि के साधनों की कमी, पारस्परिक वैमनस्य, निर्धनता, अशिक्षा, डाकुओं की समस्या, सरकारी कर्मचारियों का शोषण इत्यादि समस्याओं का चित्रण एवं उसका समाधान प्रस्तुत किया गया है। इसमें सरकारी शोषण, गाँव की गरीबी, खेती की समस्याएँ इत्यादि कथा पर मोले एवं छोटे महतो से जुड़ी हुई है। मगन मजदूरों के शोषण का विरोध करता है और कहता है–**'बहुत दिन तो रहे मजदूर अधमरे, अब भगवान उनके भी दिन फेरने वाले हैं ।'**[22] साथ ही इसमें स्त्री–पुरुष समता, नारी शक्ति का उत्थान, शिक्षा का प्रसार इत्यादि समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने अनादिकाल से पीड़ित, शोषित, दलित गरीब किसानों को सहकारी खेती के द्वारा अपनी दयनीय आर्थिक स्थिति को उन्नत बनाने की प्रेरणा दी है। सहकारिता वर्मा जी के व्यक्तिगत जीवन का अनुभव है, उन्होंने लिखा है–**'सबसे पहली सहकारी खेती समिति हम लोगों के प्रयत्न से झाँसी जिले में ही स्थापित हुई।'**[23]

निष्कर्ष :

वृन्दावन लाल वर्मा ने सभी उपन्यासों की रचना उद्देश्यपूर्ण की है। तत्कालीन समाज में व्याप्त कुरीतियों का मनोयोगपूर्वक चित्रण किया है, साथ ही उसका समाधान भी कराया है। प्रेमचंद के समान अपने सहज एवं सरस शैली से कथा में सरसता बनाए रखते हैं। वर्मा जी लोक हृदय की बात करते हैं, जिससे वह पाठकों को भी आत्मीयता से बाँधे रखते हैं। उनमें स्वयं समाज के लिए कुछ कर गुजरने का जज्बा था। वातावरण में फैली विभिन्न घटनाओं के जाल से ऐसी घटनाएँ निकाल लेते हैं, जो पाठकों को प्रभावित किए बिना नहीं रहतीं और पाठक भी उसे अनंतकाल तक भूल नहीं पाता है। ❑

संदर्भ सूत्र :

1. लगन-वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-1 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 225
2. वही, पृष्ठ 236
3. संगम-वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-1 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 370
4. वही, पृष्ठ 361
5. वही, पृष्ठ 364-65
6. प्रत्यागत-वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-1 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 391
7. कुण्डली चक्र-वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-1 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 900
8. वही, पृष्ठ 540
9. वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों का सांस्कृतिक अध्ययन (शोध प्रबंध)-डॉ. उषा भटनागर, पृष्ठ 118
10. प्रेम की भेंट परिचय-वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-1 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 900
11. कभी न कभी परिचय -वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-2 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 1
12. कभी न कभी-वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-2 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 107
13. वही, पृष्ठ 108
14. अचल मेरा कोई-वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-2 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 354
15. वही, पृष्ठ 389
16. वृन्दावनलाल वर्मा-डॉ. प्रभाकर माचवे, पृष्ठ 60
17. अमरबेल-वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-4 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 412
18. वही, पृष्ठ 436
19. वही, पृष्ठ 493
20. आहत-वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-5 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 317
21. वही, पृष्ठ 424
22. उदय किरण-वृन्दावनलाल वर्मा समग्र, भाग-5 सं. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी प्रचारक पब्लिकेशन प्रा. लि., पिशाच मोचन, वाराणसी, पृष्ठ 509
23. वही, पृष्ठ 1003

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

जनजातीय विमर्श के आईने में 'रूपतिल्ली की कथा'

प्रो. यशवंत सिंह

प्रोफेसर, हिंदी विभाग
मणिपुर विश्वविद्यालय, काँचीपुर
इंफाल-795003 (मणिपुर)
मो. 9612169840
ई-मेल : dryashwantsingh66@gmail.com

भारतीय समाज व संस्कृति की विशिष्टता अपने-आप में अनूठी है। इसका मुख्य कारण यहाँ के निवासियों की विभिन्न सांस्कृतिक अस्मिताएँ हैं। जो अपने में एक ओर जहाँ अक्षुण्य हैं, वहीं दूसरी ओर इनकी एकात्मता भारतीय अस्मिता का पर्याय है। इसीलिए भारत को 'अनेकता में एकता' का देश कहा जाता है। इसकी सामाजिक संरचना में विभिन्न प्रजातीय तत्त्वों का सम्मिश्रण कभी-कभी इसे विविध प्रजातियों का अजायबघर भी बना देता है। यहाँ के वन-प्रांतरों तथा पर्वतीय-क्षेत्रों में निवास करने वाले अनेक मानव समुदाय सभ्यता के विकासक्रम में विभिन्न कारणोंवश पृथक रह गये, फलत: आधुनिक सभ्यता के विकास का प्रकाश उन तक नहीं पहुँच पाया, वे विकास की दृष्टि से प्रारम्भिक सोपानों पर ही रह गये। इन्हीं मानव समुदायों को सभ्य-समाज के लोगों ने असभ्य मानकर इनको आदिवासी, जनजाति, आदिमजाति, वन्य-जाति, वनवासी, गिरिवासी, मूलवासी इत्यादि विविध नामों से अभिहित किया। इनमें से प्रत्येक मानव समुदाय का अपना विशिष्ट नाम, पृथक निवास-स्थान एवं अनूठी सांस्कृतिक परम्परा व पहचान है। लेकिन विकास की दृष्टि से पिछड़े होने तथा बाहरी समाज से मिलने-जुलने में झिझक होने के कारण इतिहास की बिडम्बना ने इन मानव समुदायों को मुख्य समाज से अलग-थलग ही रखा। उन्हें मुख्य समाज के लोगों से आत्मसात होने का मौका ही नहीं मिला। अत: वे मुख्य समाज के लोगों के लिए अजूबे की तरह रहे, जबकि संयुक्त राष्ट्र संघ ने इन्हें मूलवासी माना जो **'किसी भू-भाग पर प्राचीन काल से रहने वाले मानव समुदाय के वंशज हैं तथा नस्ल एवं संस्कृति के स्तर पर विशिष्टता से अलग-थलग अपने पुरखों की परम्परा एवं रीतिरिवाजों का संरक्षण करते हुए जीवन जीते चले आ रहे हैं और विकसित राष्ट्रीय, सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश को वे लोग बाहरी (एलियन) मानते हैं।'**[1]

आधुनिक भारत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि अपने साम्राज्य विस्तार के दौरान अंग्रेजों ने जहाँ-जहाँ जनजातीय क्षेत्रों में प्रवेश किया, वहाँ के निवासियों को भारत के मुख्य समाज से अलगाने हेतु उन्हें नेटिव यानि देशी या ट्राइब यानि आदिवासी की संज्ञा प्रदान की तथा इनके निवास-क्षेत्रों को प्रतिबंधित एवं अलग क्षेत्र घोषित किया।

वहाँ पर ईसाई-मिशनरियों एवं जंगल-ठेकेदारों के अलावा अन्य भारतीय लोगों का प्रवेश वर्जित किया तथा इस तरह की अलगाववादी नीतियों से उन्हें राष्ट्र की मुख्यधारा से जुड़ने नहीं दिया। इसी रणनीति के तहत अंग्रेजों ने पूर्वोत्तर भारत के क्षेत्रों में अपना शासन स्थापित करने के पहले ही ईसाई मिशनरियों को सेवा एवं सुधार-कार्यों के बहाने धर्म-प्रचार में लगा दिया था। श्रीप्रकाश मिश्र के '**रूपतिल्ली की कथा**'[2] उपन्यास की विषयवस्तु मेघालय में बसनेवालीं 'खासी-जयंतिया' जन-जातियों के सांस्कृतिक संक्रमण पर आधारित है। इसका कालखण्ड 18वीं सदी के कुछ अंतिम और 19वीं सदी के कुछ प्रारम्भिक दशकों का है, जब अंग्रेज उन पर नियंत्रण करने के लिए प्रयासरत थे। इस समय ईसाई-मिशनरियाँ जहाँ उन्हें ईसाई बनाने के लिए घुसपैठ कर रहीं थीं, वहीं आसपास का सनातन नेतृत्त्व उन्हें हिंदू बनाने में संलग्न था, लेकिन इन दोनों से विलग यहाँ का खासी व जयंतिया जनमानस अपने परम्परागत धर्म के प्रति निष्ठावान बना रहना चाहता था, अपनी पृथक पहचान को बनाये रखने के लिए प्रयासरत था।

मेघालय का खासी-समाज मातृसत्तात्मक होता है, जहाँ देव-रानी ही प्रमुख शासक व पुजारिन होती हैं। लेकिन वे दरबारी कामों में कम ही हिस्सा लेतीं हैं। उनकी जगह सियेम अर्थात् राजा यह कार्य देखता है, जबकि लिंग्दोह पुजारी के रूप में देव-रानी की जगह कार्य करता है। यहाँ पर राज्य धरा पर देव का प्रतिनिधित्त्व करने वाली संस्था है, जबकि सियेम व देव-रानी आम जनजातियों की तरह जीवनयापन करते हैं। वहीं उपन्यास में तांत्रिक कंद्रा योगी के प्रभाववश जब निजपत के प्यान राजा हिंदू-धर्म को अपना लेते हैं तो कंद्रा योगी भोगखावरा अर्थात् काली देवी के लिए बलि-जीव दबइल सिंह की बलि चढ़ाकर सुंदरी अल्खा-आवरी के साथ ब्रजोली साधना करते हैं। तदुपरांत कंद्रा योगी सियेम को उपदेश देते हुए कहते हैं कि '**हे राजन्! आज से आप देवराज हुए, जैसे मणिपुर, त्रिपुरा, कोंच और बस्तर के राजा हैं।**'[3] यानि साधना के द्वारा कंद्रा योगी सियेम में देवकत्त्व का आरोपण करते हैं तथा उनकी वंश-परम्परा को देवराज इंद्र के पुत्र जयंत से जोड़ देते हैं, जिनका यहाँ की गिरिवाला से संसर्ग हुआ था, परिणामस्वरूप सियेम के पुरखों ने जन्म लिया तथा उनकी वंशावली आगे बढ़ी।

इसी तरह पादरी कारमिंसन दवा के झोले और उपदेश के बस्ते के साथ खासियों के गाँवों में जाकर उन्हें ईसाई-धर्म अपनाने के लिए प्रेरित करता है। वह उपदेश देता है कि ईश्वर पूरी दुनिया का ईश्वर है। सिर्फ इस धरती का ही नहीं बल्कि जहाँ कहीं भी कुछ है, उसका ईश्वर है। चूँकि खासी लोग इस धरती पर हैं, इसलिए उनका भी ईश्वर है। चूँकि वही एक ईश्वर है, इसलिए किसी दूसरे ईश्वर की बात करना ईशनिन्दा है, ब्लैसफेमी है। वह बाइबिल का सम्बन्ध खासियों से जोड़ते हुए बतलाता है कि '**दाऊद की बारहवीं संतान की संततियाँ कही चली गयी थीं, यहूदियों की बारहवीं शाखा खो गयी थी। हमारे खोजी पुरुषों ने सिद्ध किया है कि वह शाखा यही पूर्वोत्तर की जातियाँ हैं।**'[4] इसी के साथ अंग्रेज रालिंसन उर्फ राली साहब खासी-क्षेत्र के मफलाङ में आकर अपना कारोबार शुरु करता है। वह यहाँ के जंगली उत्पादों का भरपूर दोहन करता है तथा उनको ढाका, कलकत्ता व मुर्शिदाबाद के बाजारों में बेचकर मोटा धन कमाता है। वह खिर्रिम की देव-रानी जयंती रिडम को अपने प्रेमजाल में फंसाकर उन्हें कुमारी मातृत्त्व प्रदान करता है। खासियों में तब कुमारी मातृत्त्व कोई अजूबी बात न थी। संतानोत्पत्ति के बाद भी विवाह होता था और संतान को जायज माना जाता था, लेकिन यह ललमुँहे अंग्रेज से संतानोत्पत्ति की बात थी, इसे खासी समाज में उनकी पैठ को मान्यता मिल जाएगी। तब तमाम अंग्रेज खसिया लड़कियों से विवाह करेंगे और उनकी संतानें खासिया सम्पत्ति की मालकिन बन जायेंगी। अंततः राली ने खिर्रिम पहुँचकर जयंती से शादी की तथा उसे लेकर मफलाङ आ गया, जिससे जॉन नामक एक पुत्र पैदा हुआ। जयंती के पुत्र के माध्यम से राली ने खिर्रिम के सियेम पद की दावेदारी भी कर दी। इस तरह बाहरी तत्त्वों की घुसपैठ से उत्पन्न सांस्कृतिक अतिक्रमण के दौर में मेघालय के खासी-जयंतिया जनजाति के लोग दोहरी मार झेलने को बाध्य थे। एक तरफ उन्हें

अपने परम्परागत धर्म को त्यागने के लिए प्रलोभित किया जा रहा था तो दूसरी तरफ जल-जगंल-जमीन पर उनके पैतृक अधिकारों पर चोट की जा रही थी। दरअसल सन् 1757 के प्लासी-युद्ध में बंगाल पर विजय के बाद अंग्रेजों का राज्य सिलहट तक फैल गया था। अब उनकी नजरें नजदीक के जयंतिया पहाड़ पर स्थित जयंतिया राज्य पर थीं। सन् 1774 में उन्होंने जयंतिया पहाड़ पर आक्रमण किया, जिसकी परिणति एक संधि के रूप में हुई। असम के अहोम राजा के बुलावे पर वर्मीज आक्रमणकारियों को खदेड़ने के लिए बंगाल से अंग्रेजी सेना सन् 1824 में जयंतिया पहाड़ के रास्ते ही असम गयी थी। अत- अंग्रेजों की आँखें खासी-जयंतिया पहाड़ों पर गढ़ी हुई थीं। उनका इन पहाड़ों के दक्षिण में सिलहट तथा कछार की बराक घाटी तक और उधर उत्तर में ब्रह्मपुत्र घाटी तक आधिपत्य हो चुका था। इन दोनों जगह की सेना की आवाजाही के लिए ये पहाड़ बाधक थे। इन पर नियंत्रण करने का दूसरा कारण यह भी था इन पहाड़ों के इस सारे इलाके को वे 'न्यू इंग्लैण्ड कॉलोनी' के रूप में बदलना चाहते थे। उ तिरोत सिंह के नेतृत्व में खासी-संघर्ष इसी का परिणाम था।

खासी हिल्स में पादरी और रालिन्सन ने अच्छी पृष्ठमूमि तैयार कर रखी थी। उसका जायजा लेने के लिए सरकार कंपनी बहादुर ने गोरखपुर के तत्कालीन कलेक्टर डेविट स्काट को पूर्वी 'फ्रंटियर के लिए गवर्नर जनरल का एजेंट बनाकर भेजा, जिसने कालांग नदी के किनारे पर स्थित राहा पहुँचकर गवर्नर जनरल को इस इलाके को अपने राज में मिलाने से पहले इस क्षेत्र का विस्तृत सर्वे कराने की सलाह दी। गोवालपाड़ा के फौजी घोड़ों के डॉक्टर बुचानन को यह दायित्त्व मिला, जिसको जनजातीय लोगों ने बाहरी हस्तक्षेप माना तथा मोती डिंग्दोह के उकसावे पर इसका मुखर विरोध किया, सर्वे-कार्य में बाधा डाली। अंतत: लोगों के पावों तले पिचलकर बुचानन के प्राण पखेरू उड़े। इसके लिए मोती को जिम्मेवार माना गया तथा उसे पकड़कर नंगे सिर, नंगे पाव अदालत में पेश किया गया, लेकिन मोती अपने को दोषी नहीं मानती, वह तो अपने गाँव की रक्षा कर रही थी। अगर बुचानन उस पर लाठी न चलवाता, तो वह मारा न जाता। एक दिन सरकारी हिरासत से मोती एकाएक गायब हो गयी। अब कंपनी सरकार को फौजी इस्तेमाल के लिए तुरंत ही एक सड़क बनाये जाने की जरूरत थी, जो सिलहट को गुवाहाटी से जोड़ सके, जिससे इन जंगलियों पर नियंत्रण रखा जा सकेगा। इसके लिए खासी क्षेत्र के राजाओं से करार किये जाने की जरूरत थी, जिसमें पहले छोर पर तिरोत सिंह की जमीन पड़ती थी। स्काट ने चेर्रा में अपना सेनेटोरियम बनाया, जिसका राजा ईसाई बन चुका था, इसलिए वह दोस्त था। उसकी रक्षा के लिए सेना की एक टुकड़ी की जरूरत थी। क्योंकि '**खासी लोग अब वे ही नहीं रह गये थे, जो पहले थे। अब वे अंग्रेज की हत्या कर देते थे, वह भी कई गाँवों को भी इकट्ठा कर। उनकी हिरासत से मुजरिम भगा ले जाते थे, कही छीन ले जाते थे।**'[5] लेहाजा बंगाल नेटिव की एक सशस्त्र टुकड़ी अंग्रेज सेनानायक के चार्ज में वहाँ तैनात कर दी गयी।

इधर जब अंग्रेजों ने खासी हिल्स में सड़क बनवानी आरंभ की तो तिरोत सिंह ने खासी हिल्स के गाँव-गाँव में संदेश भेज दिया कि सभी लोग अपने हथियार हमारे सिपाहियों को दे दें तथा वह स्वयं अपने लड़ाकुओं को युद्धाभ्यास कराने लगा। एक दिन उन्होंने सड़क निर्माण में लगे ओवरसियर व उनकी सुरक्षा में तैनात अंग्रेज सेनानायक की टुकड़ी पर अचानक आक्रमण कर दिया तथा देखते ही-देखते सैकड़ों मजदूर व सैनिक धराशायी हो गये। कुछ ही दिनों में यह बात दूर-दूर तक फैल गयी कि खासियों ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया है तथा तिरोत सिंह खसिया-संस्कृति की रक्षा का कर्णधार बन गया। लोगों का यह भी विश्वास था कि जब तक रूपतिल्ली की पहाड़ी पर खड़ा 'डिडेई (i) का पेड़ सलामत है, तब तक खासी-जाति पराजित नहीं हो सकती। वे यह भी सुनते है कि '**रूपतिल्ली की पहाड़ी पर खड़े डिडेई पेड़ के पीछे से रोज एक मोती डिंग्दोह की कद-काठी की छाया गुजरती है, जो चीख-चीख कर कहती है कि जब तक यह डिडेई का पेड़ खड़ा रहेगा खसिया कौम को कुछ नहीं होगा।**'[6] गवर्नर जनरल को जब यह जानकारी मिली तो उसने अपने मातहमों को फटकार लगाई कि उस पेड़ को कटवा क्यों नहीं दे

रहे हो अब स्काट क्या करता, क्योंकि कोई भी खासी उस पेड़ को काटने के लिए तैयार ही नहीं हो रहा था। अत: उसने पादरी को बुलवाया, जिसने नई-नई ईसाई बनी नजवा को इस-कार्य के लिए मुँह-मांगी-रकम देने का प्रलोभन दिया। अन्तत: अपने तरह-तरह के उपदेशों व नजवा की सहायता से पादरी ने खाडर अर्थात् निष्काषित अपराधियों के गाँव के लोगों को डिडेई का पेड़ काटने के लिए तैयार कर लिया। जो काम मुगल सेनापति मीरजुमला नहीं कर पाया था, वह पादरी ने कर दिखाया, काफी दिनों की मेहनत-मशक्कत के बाद डिडेई का पेड़ धारासायी हो गया, लेकिन खासी हिल्स के एक गाँव में अभी छोटे-छोटे लड़का-लड़की तीर-धनुष चलाना सीख रहे थे। एक बूढ़ा उन्हें बारी-बारी से तीर-धनुष चलाना सिखा रहा था। जो इस ओर संकेत करता है कि खासी जनमानस अभी भी हार मानने को तैयार नहीं है। वह अंग्रेजों से संघर्ष जारी रखने के लिए अपनी नई पीढ़ी को तैयार कर रहा था। साथ ही, यह लड़ाई खासी-हिल्स के सियेमों (राजाओं) के द्वारा लड़ी न जाकर जनआंदोलन के माध्यम से लड़ी जा रही थी।

इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने खासी-जयंतिया जनजाति की विविध मान्यताओं-परम्पराओं को उजागर किया है। खासिया समाज के मातृ-सत्तामक होने के कारण उनमें देवता की अवधारणा भी अधिकतर 'का ब्लेड' अर्थात् नारी रूप में होती है। ये लोग गैर खासी या बाहरी लोगों को 'ड खार' नाम से सम्बोधित करते हैं, जबकि किसी के नाम से पहले 'उ' का प्रयोग सम्मानसूचक माना जाता है, किसी को मामा कहना भी सम्मान बोधक माना जाता है। एक-दूसरे को 'क्काय' अर्थात् सुपारी का आदान-प्रदान सम्मान देना माना जाता है, अधिकतर अपने से बड़ों को सुपारी देने का प्रचलन है। जबकि आपसी अभिवादन के लिए 'खुब्लेई' शब्द का प्रयोग होता है। यहाँ पर सुबह दिशा-मैदान जाने का प्रचलन नहीं है, लोग शाम के समय यह दैनिक क्रिया करते हैं। कोपिली नदी में वे देवी-कोपिली माई का वास मानते हैं, जिसे पार करते समय हर खासी को चावल समेत सभी खाद्य-पदार्थ फेंक देने होते हैं। इस नदीं में पाँव डालने से पहले उन्हें बलि चढ़ानी होती है- हो सके तो आदमी की, नहीं तो बकरे या मुर्गे की। ऐसा न करने पर उन्हें कोपिली माई का कोपभाजन बनना पड़ता है। खासी लोकगीतों में कोपिली नदी में ही उत्पत्ति, उसी में निवास तथा उसी में जीवन के शमन की कामना निहित मिलती है।

खासियों में स्वर्ग की कल्पना नहीं होती, लेकिन एक बेहतर इतर लोक की कल्पना जरूर होती है। जहाँ मृत व्यक्ति का प्रेत यदि निवास करने का मौका पाता है तो निरंतर क्काय अर्थात् कच्ची सुपाड़ी चबाता रहता है, दुनिया के झंझटों से दूर रहकर। यहाँ पर मृतकों की याद में 'माउबिन्ना'(ii) लगाये जाने का प्रचलन मिलता है, जिनकी नींव में उनकी हड्डियाँ सुरक्षित रखी जाती हैं। इनकी ऐसी मान्यता है कि कुत्ते ने सृष्टिकर्त्ता देवता के हाथों बने मनुष्य के पुतले को दुष्टआत्माओं से बचाया था, जो आज भी उनकी रक्षा करता है। इसलिए वे कुत्ते का मांस नहीं खाते। ये लोग यह भी मानते हैं कि सृष्टि के आरम्भ में आदमी व देव की एक-ही भाषा थी, लेकिन बाद में दोनों की भाषाएँ अलग हो गयी। इन लोगों में प्राचीन समय से प्रचलित 'हेड-हंटिंग' की परम्परा में शौर्य-प्रदर्शन के साथ धार्मिकतत्त्व भी जुड़ा हुआ था। ये लोग दर्पण का प्रयोग कम-ही करते हैं, क्योंकि वे अपने को सुंदर मानते हैं तथा उन्हें दर्पण देखकर कोई कुरूपता नहीं ढकनी होती है।

खासी-समाज में पहले बाजारवाद का प्रभाव नहीं था, लोग अपनी उपज में खाने से जो बचता था, उसे बेचते नहीं थे बल्कि दूसरों को बांट देते थे। बेचना निकृष्ट कर्म था, अति गरीबी का द्योतक था। जबकि खसिया अपने को चाहे जो कुछ मान ले, लेकिन उसका गरीब मानना बड़ा असम्मान जनक था। यह उसके लिए आत्मसम्मान एवं आत्मनिर्भरता पर हमला था। इसे सबसे अधिक लज्जास्पद माना जाता था। लेकिन अब सब कुछ बिकाऊ हो गया है, जो लोगों की समृद्धि का लक्षण बन रहा है। लेखक यहाँ के 'जाडिङा-मिकिर हिल्स' की एक प्राकृतिक घटना का भी उल्लेख करता है, जहाँ पर हर वर्ष हजारों की संख्या में विभिन्न प्रजाति के पक्षी आत्महत्या करते हैं। यह पक्षी-विज्ञानियों के लिए रहस्य का विषय है कि क्यों हर अमावस की

रात्रि को सैकड़ों पक्षी इस पहाड़ की ओर उन्मुख होकर आत्महत्या कर लेते हैं। लेखक यहाँ के चेरापूंजी इलाके में 'उथ्लेन' अर्थात् सर्पदेवता की पूजा करने की पृथा का भी उल्लेख करता है। लोगों में ऐसी धारणा है कि उथ्लेन की मनुष्य के रक्त से पूजा-अर्चना करने पर वे प्रसन्न रहते हैं तथा हारी-बीमारी से रक्षा करते हैं, फसल अच्छी पैदा होती है। उपन्यास में जोरराय ऐसी-ही पूजा करता है तथा वह धोखे से सो रहे नजवा के पति राफताब की नाक से रक्त निकालकर उथ्लेन को समर्पित करता है। इसी कारण दुखी व गरीब नजवा ईसाई पादरी के संरक्षण को स्वीकार कर लेती है।

इस तरह पूर्वोत्तर भारत पर केन्द्रित श्रीप्रकाश मिश्र के 'जहाँ-बाँस फूलते हैं' के बाद उनका दूसरा उपन्यास 'रूपतिल्ली की कथा' मेघालय की खासी-जयंतिया जनजाति की कथा है। **'जिसमें उन आदिवासियों (जनजातियों) को हिंदू और ईसाई धर्म के ठेकेदारों द्वारा (उनकी) परम्परागत धार्मिक आस्थाओं को छोड़कर अपनी-अपनी ओर खींचने का प्रयास किया जाता है। इस प्रक्रिया में जो अंतर्संघर्ष पैदा होता है, वह अंततः हिंदुओं के विरूद्ध एक प्रकार से प्रच्छन्न और फिरंगियों (अंग्रेजों) के प्रति जाहिरा तौर पर सशस्त्र संघर्ष के रूप में सामने आता है, परन्तु वे खासी आदिवासी (जनजाति) समाज के लोग अपने परम्परागत धर्म (साथ ही आस्थाओं) के प्रति निष्ठावान बने रहते हैं।'**[7] इसके पन्नों से गुजरते हुए लगता है कि हम-भी उसके सहभागी हैं। वहाँ का प्राकृतिक वातावरण अपने समस्त सौंदर्य, वेग और जीवन्तता के साथ इस उपन्यास में मौजूद है। ❑

संदर्भ-सूची :

1. आदिवासी दुनिया, हरिराम मीणा, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली, दूसरी आवृति-2016 ईसवी, पृष्ठ-13
2. रूपतिल्ली की कथा, श्रीप्रकाश मिश्र, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण-2006 ईसवी
3. रूपतिल्ली की कथा, पृष्ठ-188
4. रूपतिल्ली की कथा, पृष्ठ-172
5. रूपतिल्ली की कथा, पृष्ठ-281
6. रूपतिल्ली की कथा, पृष्ठ-311
7. आदिवासी दुनिया, पृष्ठ-195

सहायक ग्रंथ-सूची :

भारत की जनजातीय संस्कृति, विजयशंकर उपाध्याय एवं विजय प्रकाश वर्मा, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, द्वितीय संशोधित संस्करण-1993 ईसवी

मेघों के देश में, साँवरमल सांगानेरिया, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली, पहला संस्करण-2020

पूर्वोत्तर : आदिवासी सृजन मिथक एवं लोककथाएँ, सम्पा. एवं संकलन-रमणिका गुप्ता, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2010

पत्र-पत्रिका :

साहित्य अमृत (लोकसंस्कृति विशेषांक), प्रधान सम्पा. डॉ. त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी, वर्ष-23, अंक-1, अगस्त-2017 ई., 4/19, आसफ अली रोड, नई दिल्ली।

टीप : (i) मध्य अफ्रीका का बोआ वृक्ष, जिसे बंगाली परिजात कहते हैं।
(ii) शिलालेख, जिनकों पत्थरों का बगीचा भी कहा जाता है।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

स्त्री-विमर्श

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं का योगदान

डॉ. संदीप रणभिरकर

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग,
कर्नाटक केंद्रीय विश्वविद्यालय,
आलंद रोड, कडगंची - 585367
जिला-कलबुरगी (कर्नाटक)
मो.8503891642
ई-मेल : sandeepvr25@gmail.com

भारतीय संस्कृति में नारी को पूजनीय स्थान प्रदान किया गया है। नारी ने पृथ्वी की तरह, प्राण वायु की तरह, वृष्टि की भाँति और सर्वव्यापी ऊर्जा की भाँति निरंतर दिव्य अनुदानों से जीव-जगत को संपन्न किया है। अत: भारतीय मनीषा ने आदिकाल से ही नारी की महिमा एवं गरिमा को समझा है और उसे यथोचित सम्मान भी दिया है। गीता में भी उसके गुणों का बखान करते हुए कहा गया है कि 'कीर्ति:श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृति: क्षमा॥' अर्थात स्त्रियों में कीर्ति, श्री, वाणी, स्मृति, बुद्धि, धैर्य और क्षमा के रूप में ईश्वर ही विद्यमान हैं। विश्व में भारत ही एकमात्र ऐसा देश है, जहाँ स्त्री ममता, करुणा, स्नेह, उदारता, सहिष्णुता, त्याग, बलिदान, साहस, वीरता, शौर्य आदि देवोपम सद्गुणों के कारण पूजनीय है। एक ओर वह गृहिणी के दायित्व का बखूबी निर्वाह करती है तो दूसरी और शक्ति-स्वरूपा बन कर शत्रुओं का संहार करने में उसे कोई परहेज नहीं है। भारत का स्वतंत्रता संघर्ष भी उन महिलाओं के उल्लेख के बिना अधूरा है, जिन्होंने भारत को आजादी दिलाने में अपने हौसलों को कभी कमजोर नहीं पड़ने दिया।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन भारतीयों के संघर्ष एवं विजय की अद्भुत गाथा है। यह लड़ाई किसी एक वर्ग, जाति अथवा व्यक्ति विशेष की लड़ाई नहीं थी, अपितु यह समूची भारतीय जनता के स्वाभिमान, आत्मसम्मान, अस्मिता एवं अस्तित्व की लड़ाई थी। अत: स्पष्ट है कि स्वतंत्रता के इस महायज्ञ में पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं ने भी अपने प्राणों की आहुति दी। अंग्रेजों के विरुद्ध पुरुषों के कंधे-से-कंधा मिलाकर देश की बेटियों ने अपना कर्तव्य निभाया। इतिहास गवाह है कि भारत के स्वतंत्रता संग्राम में जहाँ पुरुषों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया तो महिलाएँ भी पीछे नहीं रहीं। उन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध कदम उठाए, वीरता, साहस और नेतृत्व की क्षमता का अभूतपूर्व परिचय दिया । जहाँ रानी चेनम्मा, रानी लक्ष्मीबाई जैसी वीरांगनाओं ने अंग्रेजों से लड़ते हुए अपने प्राणों को उत्सर्ग किया, वहीं अरुणा आसफ अली, सुचेता कृपलानी, दुर्गाबाई देशमुख आदि ने गांधी जी के साथ मिलकर

स्वतंत्रता के मार्ग को प्रशस्त किया। मैडम भीकाजी कामा ने विदेशों में भ्रमण कर भारत की स्वतंत्रता के पक्ष में माहौल बनाया तो सरोजिनी नायडू और लक्ष्मी सहगल आदि ने देश की आजादी के बाद भी देश सेवा की। यह तथ्य भी अत्यंत विचारणीय है कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में भारतीय ही नहीं, अपितु एनी बेसेंट, भगिनी निवेदिता, मैडेलिन स्लेड, नेली सेनगुप्ता आदि विदेशी महिलाओं का भी महत्वपूर्ण योगदान था। अत: स्पष्ट है कि आरंभ से लेकर अंत तक महिलाओं ने न केवल शांतिपूर्ण आंदोलनों में सक्रिय भाग लिया, अपितु वे क्रांतिकारी गतिविधियों में भी सक्रीय रहीं।

किंतु यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं की सहभागिता एवं उनके योगदान को भारतीय इतिहास ग्रंथों में यथोचित स्थान नहीं मिल पाया। वास्तव में तत्कालीन पितृ सत्तात्मक समाज में महिलाओं की दुनिया घर की चारदीवारी के भीतर सीमित थी और उसे पुरुष की अनुगामिनी ही माना जाता था। फिर भी, अपनी प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद स्वतंत्रता आंदोलन में ऐसी महिलाओं को देखा जा सकता है, जिन्होंने अपने साहस, त्याग एवं बलिदान के जरिए अपनी पारिवारिक भूमिका के साथ-साथ राष्ट्रवादी गतिविधियों में भी साझेदारी की। अपनी वीरता एवं नेतृत्व क्षमता का परिचय देते हुए पुरुषों के समान संघर्ष किया। गांधी जी भी राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी के पूर्ण पक्षधर थे। अत: उन्होंने भी स्वीकार किया था कि 'हमारी माँ-बहनों के योगदान के बिना यह स्वतंत्रता का संघर्ष संभव नहीं है।' समग्रत: महिलाओं के अंदर उस समय जो राष्ट्र चेतना उत्पन्न हुई थी, उसने यह सिद्ध कर दिया कि वे एक ऐसी राष्ट्रीय शक्ति हैं, जो राष्ट्रीय स्वाधीनता और अधिकारों के लिए सभी बंधनों से मुक्त होकर लड़ सकती हैं।

रानी चेनम्मा :

कित्तूर की रानी चेनम्मा अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह का नेतृत्व करने वाली भारतीय महिला थीं। बचपन से ही चेनम्मा को घुड़सवारी, तलवारबाजी में कौशल प्राप्त था। अपनी बुद्धिमानी और बहादुरी के लिए वह पूरे गाँव में जानी जाती थीं। इनकी जीवन-कथा रानी लक्ष्मीबाई से भिन्न नहीं है। पति और पुत्र की मृत्यु के पश्चात उन्होंने शिवलिंगप्पा नामक एक लड़के को गोद लेकर उसे उत्तराधिकारी बनाने का फैसला किया, किंतु अंग्रेजों ने इस निर्णय को अस्वीकार कर दिया। परिणामत: 1824 में अंग्रेजों और कित्तूर के बीच पहली लड़ाई लड़ी गई, जिसमें अंग्रेजों को भारी नुकसान का सामना करना पड़ा था। युद्ध के दौरान रानी चेनम्मा के सैनिकों ने दो ब्रिटिश अधिकारियों को बंधक बना लिया। आगे के विनाश और युद्ध को रोकने के लिए यह कदम उठाया गया था। बाद में ब्रिटिशों की सहमति के साथ युद्ध पर विराम लगा और वादे के अनुसार बंधकों को भी छोड़ दिया गया था, लेकिन हमेशा से धोखा देते आए इन ब्रिटिशों ने उस वक्त भी धोखा दिया और अपने वादे से मुकर गए। अपनी हार का बदला लेने के लिए ब्रिटिशों ने एक बार फिर कित्तूर पर हमला कर दिया। लगभग 12 दिनों तक चेनम्मा और उनके सैनिक लगातार अपने किले की रक्षा करने के लिए अंग्रेजों से लड़ते रहे। अंतिम साँस तक उन्होंने हार नहीं मानी, लेकिन चेनम्मा को उनके अपने ही सैनिकों द्वारा छला गया और ब्रिटिशों ने रानी चेनम्मा को बंधक बना लिया। रानी चेनम्मा को उनकी वीरता के लिए आज भी याद किया जाता है। भले ही वह अंग्रेजों के खिलाफ युद्ध को जीत नहीं सकी थीं, लेकिन भारत के स्वतंत्रता सेनानियों के लिए एक प्रेरणा स्रोत अवश्य बन गई थीं।

रानी लक्ष्मीबाई :

सन 1857 के विद्रोह ने ब्रिटिश सत्ता के अंत के प्रयास को लेकर सर्वप्रथम शक्तिशाली साम्राज्य को चुनौती दी थी। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इस प्रथम विस्फोट की नायिका एक महिला थी, जिसने अपने साहस एवं वीरता का अपूर्व परिचय देते हुए रणभूमि में प्राणोत्सर्ग किया था। उन्होंने जिनके विरुद्ध युद्ध किया था उस अंग्रेजी सेना के एक बड़े सेनापति सर ह्यूरोज रानी के अद्‌भुत पराक्रम को देखकर दंग रह गए थे। वे भी स्वयं को रानी की वीरता की मुक्तकंठ से प्रशंसा करने से रोक नहीं पाए। उन्होंने लिखा था, 'सैनिक

विद्रोह के नेताओं में महारानी लक्ष्मीबाई सर्वाधिक बहादुर और सर्वश्रेष्ठ थीं। शत्रु- दल (भारतीय विद्रोहियों) में अगर कोई सच्चा मर्द था तो वह झाँसी की रानी ही थीं।' वे ऐसी वीरांगना थीं, जिन्होंने मात्र 23 वर्ष की आयु में ही ब्रिटिश साम्राज्य की सेना से मोर्चा लिया और रणक्षेत्र में वीरगति को प्राप्त हो गईं, परंतु जीते जी अंग्रेजों को अपने राज्य झाँसी पर कब्जा नहीं करने दिया। उन्होंने भारत की स्वतंत्रता की मशाल लेकर हँसते-हँसते राष्ट्र की बलिवेदी पर अपने प्राणों को अर्पित कर भारत माता के गौरव को ऊँचा किया। उनका शौर्य, साहस और बलिदान हमेशा भारतीय महिलाओं को वीरता की प्रेरणा देता रहेगा।

मैडम भीकाजी कामा :

सर्वप्रथम राष्ट्रीय ध्वज फहराने वाली महिलाओं में मैडम भिकाजी कामा का नाम लिया जाता है। उन्होंने जर्मनी के स्टुटगार्ट में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय सोशलिस्ट कांग्रेस के अधिवेशन में भारत की स्वतंत्रता संबंधी प्रस्ताव पेश करते हुए यह ध्वज फहराया था। यह घटना उनके साहस एवं देशप्रेम को दर्शाती है। पीड़ित एवं असहाय भारतीयों की स्थिति उनसे नहीं देखी गई और 20 वर्ष की आयु में उन्होंने स्वयं को राष्ट्र सेवा में समर्पित कर दिया। 1896 के प्लेग के प्रकोप में उन्होंने अपने प्राणों की परवाह न करते हुए जनता की तब तक सेवा की, जब तक वे प्लेग की गिरफ्त में नहीं आ गईं। फिर प्लेग के उपचार के लिए उन्हें लंदन जाना पड़ा। उन्होंने लंदन, अमेरिका, पेरिस आदि विभिन्न देशों में जाकर भारत के प्रति जनमत इकट्ठा किया। विदेशों में 'मैडम कामा' कहकर उनके प्रति आदर का भाव प्रकट किया जाता। अपने जीवन के अनेक वर्ष उन्होंने पेरिस में व्यतीत किए। वहाँ भारत की स्वतंत्रता के लिए मैडम कामा के कार्यों को देखकर अंग्रेज घबरा गए और फ्रेंच सरकार से अनुरोध किया कि वे मैडम कामा को उनके सुपुर्द कर दे, जिसे फ्रेंच सरकरार ने नकार दिया। अपने जीवन के अंतिम क्षण तक उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के लिए अनेक महत्वपूर्ण कार्य किए। उन्हें ऐसा लगता था कि वे भारत नहीं लौट पाएँगी। अत: उन्होंने जीते-जी पेरिस की श्मशान भूमि में स्वयं की अंत्येष्टि के लिए जमीन भी खरीदी और उसकी स्मारक शिला पर निम्न पंक्तियाँ लिखवाईं-

'अन्यायपूर्ण शासन का विरोध ही
ईश्वरीय आज्ञा का पालन है।'
जिसने स्वतंत्रता गँवाई उसने
मानो अपना शील गँवाया।।'

सरोजिनी नायडू :

भारतीय स्त्रीत्व का गौरव, राष्ट्रभक्ति, राष्ट्रनिष्ठा, प्रखर विद्वत्ता-ये सभी गुण जिस भारतीय नारी में समाहित हैं, उस भारत कोकिला सरोजिनी नायडू का जीवन सभी भारतीयों के लिए प्रेरणास्पद है। गोपाल कृष्ण गोखले, महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक आदि के संपर्क में आने से उनके जीवन को नई दिशा प्राप्त हुई। भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में एक 'ओजस्वी व्याख्याता' के रूप में

उनका पदार्पण हुआ। उनका एक एक वाक्य राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत था। वे अक्सर कहती कि - 'राष्ट्र की सच्ची एवं नि:स्वार्थ सेवा ही मेरा स्थायी भाव है।' उनका मानना था कि हिंदू और मुस्लिम ये राष्ट्र की दो संतानें हैं और दोनों में ऐक्य एवं सामंजस्य निर्माण होना आवश्यक है। गांधी जी के नमक सत्याग्रह या 'भारत छोड़ो' आंदोलन आदि में उन्होंने महिलाओं को भी सम्मिलित किया। अंग्रेजों के खिलाफ विविध आंदोलनों में सक्रीय सहभागिता के कारण उन्हें कारावास भी सहना पड़ा। युद्ध के समय उनकी भूमिका एक सेनापति के समान होती तो शांति के समय एक धर्मगुरु के समान। अपने मानवतावादी व्यक्तित्व से उन्होंने एक कवयित्री, ओजस्वी वक्ता, कर्मठ स्वतंत्रता सेनानी, उत्तम प्रशासक आदि विविध भूमिकाओं का सफलतापूर्वक निर्वाह किया। उनके महत्वपूर्ण योगदान के कारण ही 13 फरवरी 'भारतीय महिला दिवस' के रूप में मनाया जाता है।

सुचेता कृपलानी :

उत्तर प्रदेश की पहली महिला मुख्यमंत्री एवं आधुनिक भारत की असाधारण राजकीय नेता सुचेता कृपलानी ने भारत के स्वतंत्रता संघर्ष में बहुत बड़ा योगदान दिया। वे मानवतावादी, समाजवादी एवं सृजनशील कार्यकर्ता थीं। उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में अरुणा आसफ अली के साथ भूमिगत रहकर कार्य किया। 'भूमिगत स्वयंसेवक दल' और राष्ट्रीय कांग्रेस के महिला विभाग की उन्होंने स्थापना की। स्वतंत्रता संघर्ष में लंबे समय के कारावास को भी उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया। स्वतंत्रता संघर्ष में तो उनका योगदान महत्वपूर्ण है ही, साथ ही मानवतावादी नेता के रूप में भी उनका कार्य उल्लेखनीय है। चाहे बिहार का भूकंप हो या बंगाल का जातीय संघर्ष-हर जगह उन्होंने जन सामान्य के हित को केंद्र में रखा। पीड़ित समाज की चिंता कर उनके पुनर्वास हेतु उन्होंने निधि भी जुटाई। दलितों के कल्याण के लिए भी उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किया। इतना ही नहीं, स्त्री-समस्याओं पर भी उन्होंने गंभीरता से विचार किया एवं उन समस्याओं के समाधान हेतु अथक प्रयास किए। सुचेता कृपलानी आधुनिक भारत की असाधारण महिला थीं और भारतीय जनता के कल्याण हेतु उन्होंने नि:स्वार्थ भाव से कार्य किया।

अरुणा आसफ अली :

सन 1942 के 'भारत छोड़ो आंदोलन' की नायिका के रूप में अरुणा आसफ अली का नाम भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों में प्रमुख रूप से लिया जाता है। अरुणा उपेन्द्रनाथ गांगुली उनका वास्तविक नाम था। दिल्ली के प्रसिद्ध वकील आसफ अली से उन्होंने विवाह किया। विवाह के एक वर्ष पश्चात ही गांधीजी के सविनय अवज्ञा आंदोलन में उन्होंने भाग लिया। तब से अपने जीवन के अंतिम समय तक उन्होंने केवल खादी की साड़ी ही पहनी। 9 अगस्त, 1942 को भारतीय कांग्रेस महासमिति का सम्मेलन मुंबई के गवालिया टैंक पर आयोजित किया गया था। इसी सम्मेलन में कांग्रेस महासमिति ने 'भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पारित करने का निर्णय लिया था। गवालिया

टैंक मैदान पर अंग्रेज सैनिकों का पहरा था। ऐसे समय हजारों की उपस्थिति में आक्रामक रणनीति से अरुणाजी ने ध्वजस्तंभ पर तिरंगा फहराया। 'वंदेमातरम्' के नारों से समूचा परिवेश गूँज उठा। कुछ समझने के पूर्व ही अश्रु गैस का प्रयोग किया गया और लाठियाँ बरसने लगीं, किंतु वे ध्वज फहराने वाली अरुणा जी को नहीं पकड़ पाए। तत्पश्चात भूमिगत रहकर उन्होंने 'चले जाव' आंदोलन का कार्य किया। नाकाम अंग्रेजों ने उन पर पचास हजार रुपए का पुरस्कार भी रखा था। तत्कालीन समय में कार्यकर्ता उन्हें दैवीय अवतार मानते थे। वे दिल्ली की प्रथम महापौर के रूप में प्रख्यात हैं। स्वतंत्र भारत में भी उनका देशी की सेवा का भाव जारी रहा। उन्हें अनेक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कारों से नवाजा गया। मृत्युपरांत उन्हें 'भारतरत्न' पुरस्कार प्रदान किया गया।

डॉ. लक्ष्मी सहगल :

पेशे से डॉक्टर लक्ष्मी सहगल ने भारत के स्वतंत्रता संग्राम के साथ-साथ सामाजिक कार्यकर्ता के तौर पर भी प्रमुख भूमिका निभाई थी। उनका पूरा नाम लक्ष्मी स्वामीनाथन सहगल था। वे आजाद हिंद फौज की अधिकारी तथा आजाद हिंद सरकार में महिला मामलों की मंत्री थीं। वह पेशे से डॉक्टर थीं, जो द्वितीय विश्वयुद्ध के समय प्रकाश में आईं। वे आजाद हिंद फौज की 'रानी लक्ष्मी रेजिमेंट' की कमांडर थीं। उन्हें वर्ष 1998 में पद्म विभूषण से नवाजा गया था।

विजयालक्ष्मी पंडित :

भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में पंडित मोतीलाल नेहरू की कन्या एवं पंडित जवाहरलाल नेहरू की भगिनी विजयालक्ष्मी पंडित का योगदान भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्हें संयुक्त राष्ट्र संघ की प्रथम महिला अध्यक्ष होने का सम्मान प्राप्त है। इंग्लैंड में शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद सामान्य जनता एवं राष्ट्र के प्रति उनके मन में अगाध स्नेह था। भारत को जल्द-से-जल्द स्वतंत्रता मिलनी चाहिए और अंग्रेजों को यथाशीघ्र अपने देश वापस लौटना चाहिए, यह उनकी नीति थी। महात्मा गांधी के साथ असहयोग आंदोलन में भी उनकी सक्रीय

भूमिका रही। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भी उन्होंने सदैव गलत नीतियों का विरोध किया। इंदिरा गांधी द्वारा लिए गए गलत निर्णयों यथा- 'नसबंदी अभियान' आदि का भी उन्होंने खुलकर विरोध किया। उन्होंने इंदिरा गांधी को समझाने का भी प्रयास किया। देश की बढ़ती महँगाई से भी वह चिंतित थीं। अंतत: राजनीति से वे विरक्त हो गईं। जब वे रशिया में भारतीय राजदूत के रूप में कार्यरत थीं, तब उनके कार्य का प्रभाव लेनिन पर भी पड़ा। लेनिन के अनुसार, 'पंडित नेहरू जिस प्रकार समूचे विश्व द्वारा स्वीकृत एक श्रेष्ठ नेता थे, वैसे ही विजयालक्ष्मी पंडित भी एक बड़ी नेता हैं। उनकी प्रतिभा सर्वस्पर्शी है और वे उत्तम रीति से शासन कर सकती हैं।' आकर्षक व्यक्तिमत्व, अंतर्राष्ट्रीय सामंजस्य असाधारण योग्यता आदि के कारण उन्हें 'विश्वकी सबसे लोकप्रिय महिला' के रूप में भी घोषित किया गया था। भारत के 21 विश्वविद्यालयों ने उन्हें डॉक्टरेट की मानद उपाधि प्रदान की। मानवीय अधिकारों के लिए लड़ना उनका सबसे बड़ा वैशिष्ट्य था।

एनी बेसेंट :

देश के स्वतंत्रता संघर्ष में न केवल भारतीयों का महत्वपूर्ण योगदान रहा, अपितु विदेशी नागरिकों ने भी भारत को स्वतंत्रता दिलाने में अपना योगदान दिया। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में एनी बेसेंट और उनके होमरूल आंदोलन का विशेष योगदान रहा। एनी बेसेंट

थियोसोफिकल सोसाइटी के आमंत्रण पर भारत पहुँची थीं। वे हिंदू धर्म से बहुत प्रभावित थीं। उन्होंने हिंदू धर्म, दर्शन, संस्कृति के अध्ययन के साथ-साथ हिंदू आचार-व्यवहार को भी आदर के साथ देखा। उन्होंने भारतीयों को अपनी मान्यताओं के प्रति सम्मान करना सिखाया। उन्होंने स्त्री अधिकारों के लिए भी आवाज उठाई। एक ओर वे भारतीयों में जागरूकता उत्पन्न कर रही थीं तो दूसरी और ब्रिटिशों के साथ पत्र व्यवहार कर भारतीयों के अधिकारों की माँग कर रही थीं।

ये तो चंद उदाहरण हैं। ऐसी अत्यंत दीर्घ सूची बन सकती है, किंतु इन सबके अलावा उन असंख्य महिलाओं के योगदान को भी नहीं भुलाया जा सकता, जिन्होंने नेपथ्य में रहकर स्वतंत्रता संघर्ष में महत्वपूर्ण दायित्व का निर्वाह किया। ये महिलाएँ स्वतंत्रता सेनानियों के लिए भोजन की व्यवस्था करती थीं, उनके लिए संदेशवाहकों का काम करती थीं, हथियारों तथा अन्य सामग्री का आदान-प्रदान करती थीं, अपने बेटों सहित परिवार के पुरुषों को नैतिक समर्थन भी प्रदान करती थीं। इतना ही नहीं, इन महिलाओं ने इस स्वतंत्रता आंदोलन के महायज्ञ में अपनी इच्छाएँ, सपने, आभूषण, संतति, संपत्ति यहाँ तक कि अपने प्राणों की भी आहुति दी थी। तब जाकर आज हम स्वतंत्रता से अपने देश में साँस ले पा रहे हैं। नई पीढ़ी के लिए यह जानना और समझना अत्यंत आवश्यक है कि स्वतंत्रता की हमने कितनी बड़ी कीमत चुकाई है। अत: यह स्वतंत्रता जो हमें विरासत में प्राप्त हुई है, उसका जतन एवं संवर्धन हमारी सबसे बड़ी जिम्मेदारी है और उसके प्रति कृतसंकल्प होना अत्यंत आवश्यक है।❑

ग्रन्थ सूची :

1. आशारानी बोहरा, महिलाएँ और स्वराज्य, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, 1988
2. राजेन्द्र मोहन भटनागर, भारत की आजादी में महिलाएँ, भारत पब्लिशिंग हाउस, सं. 2003
3. कांता नागोरी, भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में महिलाओं का योगदान, सुरभि प्रकाशन, सं. 1997
4. ममता चंद्रशेखर, 75 महिला स्वतंत्रता सेनानी, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2023
5. गुरुरामजी विश्वकर्मा, भारतीय नारी और उसका त्याग, कल्पजा प्रकाशन, सं. 2006
6. सं. डॉ. अंकुर प्रकाश गुप्त, वीरांगना आजादी का एक ज्वलंत इतिहास, बुक क्रिएशन पब्लिशिंग, सं. 2023
7. लाजवंती झा, विस्मृत चेहरे, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2022
8. मुरारीलाल गोयल, स्वतंत्रता आन्दोलन में क्रांतिकार महिलाएँ, रजनी प्रकाशन, सं. 1998
9. महेश शर्मा, सुचेता कृपलानी, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2021

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

'हिंदी के 'डूब' एवं नेपाली के ''ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' उपन्यासों में अभिव्यक्त बाढ़ की समस्या : एक तुलनात्मक अध्ययन

टिंकू छेत्री

शोधार्थी, हिंदी विभाग
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय
मेघालय, शिलोंग-793022
मो.- 9864746307
ई-मेल : tinkuchetry0175@gmail.com

शोध सार :

भारतीय ग्रामीण समाज में सदियों से बाढ़ एक प्रमुख समस्या रही है। यह भारतवर्ष की सबसे बड़ी त्रासदियों में से एक है। प्रत्येक वर्ष देश के भिन्न-भिन्न प्रांतों में बाढ़ के कारण लोग विस्थापित होते हैं। कई महीनों तक बाढ़ पीड़ितों को ऊँचे स्थान पर बने तटबंधों पर मजबूरन रहना पड़ता है। बाढ़ के समय वे विभिन्न समस्याओं से जूझते हैं। उनके खेत, घर, पशु एवं घर तथा दैनंदिन की वस्तुएँ नदी में बह जाते हैं। बाढ़ की इस विषम समस्या को हिंदी और नेपाली के आंचलिक उपन्यास में संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त किया गया है। प्रस्तुत शोध आलेख में वीरेंद्र जैन कृत 'डूब' और नेपाली भाषा के रचनाकार लीलबहादुर छेत्री कृत 'ब्रह्मपुत्र का छेउछाउ' में बाढ़ की समस्याओं का चित्रण किया गया है। 'डूब' उपन्यास में जहाँ मानव निर्मित बाढ़ की समस्या है तो दूसरी ओर 'ब्रह्मपुत्र का छेउछाउ' प्राकृतिक बाढ़ की समस्या है। प्रस्तुत शोध आलेख में हिंदी एवं नेपाली उपन्यासों में अभिव्यक्त बाढ़ की समस्या का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। आलेख में सर्वप्रथम बाढ़ की समस्या एवं उससे होने वाली क्षति को विवेचित किया गया है। तत्पश्चात दोनों उपन्यासों की ग्रामीण पृष्ठभूमि एवं अंचल का परिचय देते हुए बाढ़ के प्रभावित कारणों से अवगत कराया गया है। आगे आलेख में दो भिन्न क्षेत्रों की बाढ़ की समस्याओं में समानता-असमानता को तुलनात्मक दृष्टि से क्रमबद्ध रूप में विश्लेषित किया गया है। अंत में शोध निष्कर्ष द्वारा दोनों उपन्यासों को केंद्र में रखकर बाढ़ की समस्या के कारण एवं समाधान पर विचार किया गया है।

बीज शब्द :

प्राकृतिक बाढ़, कृत्रिम बाढ़, ग्रामीण जीवन, जीव-जंतु, आवास, चांगघर, अंचल, परियोजना, नदी, खेत, कृषि, पीड़ा, शिक्षा, विकास आदि।

भारत के कुछ हिस्सों के ग्रामीण क्षेत्रों में बाढ़ एक प्रमुख समस्या है। गाँव के अधिकांश लोग कृषि पर निर्भर हैं। उनके जीवन निर्वाह का प्रमुख साधन ही कृषि है, परंतु बाढ़ की समस्या के कारण उनकी फसलों और उपजाऊ जमीन का क्षरण होता रहा है। बाढ़ के कारण फसल, जमीन, घर इत्यादि के बर्बाद होने से लोग भुखमरी का शिकार होते हैं। उनके पास इतना धन नहीं होता कि वे अनाज क्रय कर सकें या दूसरे स्थान पर जमीन खरीद कर अपने परिवार का भरण-पोषण सुचारू रूप से कर सकें। प्रत्येक वर्ष भारत के विभिन्न प्रांतों में बाढ़ आती है। बाढ़ में उनकी फसलें, उपजाऊ जमीन, घर-बार नष्ट तो होते ही हैं, साथ ही गाँव में बीमारी, महामारी, पीने के पानी की समस्या, स्कूल-घर का नदी में बह जाना, यातायात की समस्या, सड़क का नष्ट हो जाना, खाद्य सामग्री का अभाव इत्यादि समस्याओं से भी जूझना पड़ता है। इस कारण वहाँ का जीवन पूरी तरह से अस्त-व्यस्त हो जाता है। क्षण भर में एक किसान मजदूर बन जाता है। उसकी आँखों के सामने उसका घर-जमीन बहकर नदी के गर्भ में मिल जाते हैं। उसके समक्ष ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है कि खेती करने के लिए जमीन तो दूर की बात है, निवास हेतु जमीन भी उपलब्ध नहीं होती। बाढ़ की भीषण परिस्थिति में गाँव के लोग मानसिक और शारीरिक रूप से टूट जाते हैं। भारतीय ग्रामीणों की इस दशा के संदर्भ में अर्जुन प्रसाद सिंह लिखते हैं कि **'भारतीय खेती आज भी काफी हद तक मानसून पर निर्भर है (2016-17 के आँकड़े के अनुसार 55 फीसद) और हर साल बाढ़, सूखे और कीड़ाखोरी जैसी प्राकृतिक विपदाओं से भारी पैमाने पर किसानों की फसलों और अन्य संपत्तियों का नुकसान होता है।'**[1]

एक ओर जहाँ ग्रामीण जीवन के मनोरम चित्रण परिलक्षित होते हैं तो दूसरी ओर ग्राम्य समाज में व्याप्त समस्याएँ जीवन को कठिन बना देती हैं। प्रत्येक अंचल की अपनी समस्याएँ हैं, जिसे अंचल के लोग वर्षों से भोगते आ रहे हैं। अंचल विशेष की समस्या भी अंचल को अन्य क्षेत्र से अलग बनाती है। अंचलों में व्याप्त समस्याओं में बाढ़ की समस्या भारतीय गाँव की प्रमुख समस्या है। हिंदी में वीरेंद्र जैन कृत 'डूब' और नेपाली में लीलबहादुर छेत्री कृत 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' आंचलिक उपन्यासों में बाढ़ की समस्या से ग्रसित ग्रामीण जन की दयनीय स्थिति का यथार्थ रूप में चित्रण किया गया है। 'डूब' उपन्यास में जहाँ एक ओर मानव निर्मित बाढ़ से गाँव के लोग त्रस्त हैं तो दूसरी ओर 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' में प्राकृतिक बाढ़ से लोग त्रस्त हैं। 'डूब' उपन्यास में विकास प्रक्रिया के तले दबी ग्रामीण जनता की त्रासदी को सूक्ष्मता तथा संवेदना के साथ अभिव्यक्त किया गया है। 'डूब' संघर्षरत ग्रामीण जीवन की व्यथा की कथा है। 'बुंदेलखंड' क्षेत्र पर केंद्रित यह एक आंचलिक उपन्यास है, जिसमें 'लड़ैई' गाँव की जनता की मार्मिक जीवन गाथा है। यह बेतवा के किनारे बसा तीनों ओर पहाड़ियों से घिरा गाँव है। स्वाधीनता के बाद पंचवर्षीय विकास योजनाओं के तहत देश के विकास के नाम पर आईं विभिन्न परियोजनाओं ने बरसों से खुशहाली से बसे गाँवों को उजाड़ने का कार्य किया है। केंद्र सरकार मध्य प्रदेश की बेतवा नदी पर राजघाट बाँध परियोजना की घोषणा करके बिजली उत्पादन करना चाहती थी। 'डूब' उपन्यास सिंचाई और विद्युत उत्पादन की परियोजनाओं के तहत उत्पन्न कृत्रिम बाढ़ तथा उजाड़े गए गाँवों के लोगों की शोषण गाथा है। इस उपन्यास के संदर्भ में रामशरण जोशी का मत है कि **'डूब' एशियाई कृषक समाज की गतिहीनता, शक्तिहीनता, आत्मग्रस्तता, बहुआयामी उत्पीड़न सहित विभिन्न प्रकार की पेचीदगियों का प्रतिनिधित्व करता है।'**[2]

लीलबहादुर कृत 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' उपन्यास में सन 1943 ई. से सन 1970 ई. के समय को लिया गया है । उस कालावधि में असम में ब्रह्मपुत्र के किनारे रहने वाले नेपाली समुदाय में बैल, गाय, भैंस, गोठ और खेत ही व्यवसाय का प्रमुख साधन था। नेपाली समुदाय के

जीवन में ब्रह्मपुत्र नद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनके लिए ब्रह्मपुत्र वरदान और अभिशाप दोनों है। उन्होंने ब्रह्मपुत्र का शांत और रौद्र-दोनों रूप देखा है। उनके खेत-खलिहान हेतु पानी की आपूर्ति इसी नद पर निर्भर है। उपन्यास के आरंभ में असम के भौगोलिक और प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण किया गया है। प्रत्येक वर्ष ब्रह्मपुत्र में पानी बढ़ जाने के कारण बाढ़ आ जाती है। बाढ़ उनके जीवन का अंग बन चुकी है। इस प्राकृतिक बाढ़ को रोकने का उपाय गाँव के लोगों के पास नहीं है। इससे उत्पन्न समस्याओं को भोगने के लिए ग्रामीण जन विवश हैं। कछुगाँव, बयरआँटी गाँव तथा आसपास के अंचल के लोग प्रत्येक वर्ष बाढ़ की समस्या से जूझते हैं।

'डूब' उपन्यास में चित्रित लड़ैई गाँव में कृत्रिम बाढ़ के कारण उत्पन्न परिस्थिति का उपन्यासकार ने यथार्थ रूप में चित्रण किया है। गाँव में निवास करने वाले भोले-भाले लोगों को विकास के नाम पर उनकी जमीन से वंचित किया जाता है । बड़े-बड़े सपने दिखाकर उनसे उनकी जमीन छीनी जाती है। चंद शहरों के विकास और आराम के लिए हजारों गाँवों को उजाड़ दिया जाता है। तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी गाँव आकर, पहली ईंट लगाकर गाँवों को विकास का सपना दिखाती हैं, लेकिन गाँववालों का मोह भंग हो जाता है, **'इंदिराजी एक ईंट रख गई थीं, की फेंक गई थीं, राम जाने, मगर उस एक ईंट से बेतवा में जो उफान आया वह जाने कितने गाँव के गाँव लील गया।'**[3] जिस गाँव का बाढ़ के साथ कभी संबंध ही नहीं रहा, बेतवा नदी पर बाँध बनाने के कारण लड़ैई गाँव में अब हर साल बाढ़ आती है। अब तो हर साल गाँव के लोगों को बाढ़ से जूझना पड़ता है। गाँव के बुजुर्ग माते कहते हैं कि **'लड़ैई में पहली बार, हाँ, पहली बार बाढ़ आई थी उस बरस! सपने की-सी बात। बाढ़ से वास्ता कहाँ रहा लड़ैई का। सूखे से तो हर साल-दो-साल पीछे नाता जुड़ता रहता है। मगर बाढ़.....दो कोस दूर नदी का किनारा। तलैया-सी नदी और उसमें बाढ़।'**[4]

दूसरी ओर नेपाली उपन्यास 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' में ब्रह्मपुत्र किनारे स्थित नेपाली बहुल गाँव में बाढ़ के प्रकोप एवं उसे भोगते लोगों का यथार्थ चित्रण किया गया है। ब्रह्मपुत्र नद में प्रत्येक वर्ष बाढ़ आती है। इस कारण उसके किनारे निवास करने वाले ग्रामीण जन बाढ़ से उत्पन्न समस्याओं को भोगने के लिए विवश हैं। उस क्षेत्र के लोगों के घर-जमीनें कई-कई दिनों तक बाढ़ के पानी में डूबे रहते हैं। बाढ़ के समय न उनके पास रहने का स्थान होता है, न खाने के लिए खाद्य सामग्री। बाढ़ से पीड़ित लोगों को सरकारी सहायता एवं लाभ बहुत कठिनाई से और कुछ लोगों को ही मिल पाता है। अधिकांश लोग इससे वंचित रह जाते हैं। अपने भाग्य को दोष देने और बाढ़ में अपने घर, जमीन को नदी में कट के गिरता देखने के अलावा उनके पास कोई उपाय नहीं रहता। 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' उपन्यास में बाढ़ की इसी विषम परिस्थिति से खिन्न होकर गाँव के एक शिक्षक कहते हैं, **'अब यो शहरी क्षेत्र हुँदो-भए सरकारद्वारा पनि पर्खाल लाएर वा किनारमा ढुङ्ग ओछ्याएर नदीको केही रोकथामको व्यवस्था हुने थियो। तर यो गाउँ छपडीमा कसले वास्ता गर्छ? यी सय-पचास खरका झुप्रा जोगाउन को आउँछ यहाँ? यता नदी जुन प्रकारले ढेपिदै, गरालो लडाउँदै आएको छ, हाम्रो यो गाउँदेखि लिएर कछुगाउँसम्मै कतै केही चिनो-चपेटो रहने छाँट छैन।'**[5] (अर्थात यह अगर शहरी क्षेत्र होता तो सरकार दीवार या किनारे में पत्थर लगाकर बाढ़ को रोकने के लिए योजना बनाती, परंतु इस गाँव और छपड़ी (नदी-नाद के किनारे में स्थित सूखी जगह) के लिए कौन चिंतित होगा? पचास-सौ झोपड़ी बचाने के लिए कौन आएगा यहाँ? नदी जिस हिसाब से अपना संहारक रूप धर रही है अगर यही स्थिति रही तो अपने गाँव से लेकर 'कछुगाउँ' तक मिटाने के लिए अधिक समय नहीं लगेगा।)

बाढ़ प्राकृतिक आपदा है। इसे झेलने हेतु मनुष्य विवश है। इसे रोकने के लिए सरकार को कुछ ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है। जिन लोगों ने बाढ़ में अपना घर-जमीन खोया है, उनकी सहायता सरकार

द्वारा की जा सकती थी। पूरे अंचल के अधिकांश लोगों की जमीन पर बाढ़ रूपी नदी बह रही है। वे लोग जो बाढ़ के कारण अपना सब कुछ खो बैठे हैं, अब वे कहाँ रहेंगे उन्हें स्वयं नहीं पता। गाँव हो या शहर- प्रत्येक घर या झोपड़ी में मनुष्य ही रहता है। प्रत्येक क्षेत्र के मनुष्य के जीवन का महत्व समान है। उन्हें अनदेखा इसलिए किया जाता है, क्योंकि वे गाँव के पिछड़े क्षेत्र छपड़ी में रहने वाले सहज-सरल व्यक्ति हैं।

'डूब' उपन्यास में बाढ़ के समय उत्पन्न परिस्थितियों का मार्मिक चित्रण किया गया है। राजघाट में जो बाँध बन रहा था, वह एक रात दरार पड़कर टूट गया। सारा पानी गाँवों में बहकर चला जाता है। **'राजघाट बाँध के जो टीले उठाये थे न बाँधवालों ने! उनमें से इस तरफ वाले टीले में रात को दरार पड़ गई। घाट पर छिका तमाम पानी तिला तोड़कर गाँवों में घुस गया है। पंचमनगर तक जल ही जल है माते! इतना जल जैसे प्रलय आ गई हो! जितना कभी किसी बाढ़ के बखत नहीं आया। जाने कितने लोग मर-खप गए! कितने ढोरू-बछेरू डूब गए! कितनी खड़ी फसल स्वाहा हो गई! लड़ैई के सब-के-सब मर्द गाँव-गाँव में लोगों को बचाने में जुटे हैं तभी से।'**[6]

इस भीषण परिस्थिति में पूरा-का-पूरा गाँव किले के बाहर खड़े पुराने वट-वृक्ष का सहारा लेकर अपना-अपना सामान संभालते हुए इस भीषण परिस्थिति को देखता है। गाँव के कुछ युवक पानी में फँसे पालतू जानवर एवं सामान को निकालकर किले के बाहर इकट्ठा करते हैं। ऊँचे स्थान पर बने इस किले के अलावा पूरा गाँव जलमग्न था। कहीं जमीन दिखाई नहीं देती थी। गाँव के लोगों की जमीन, घर सब पानी के नीचे था। न जाने कितनों के परिजन नदी में समाहित हो गए। इस भयानक परिस्थिति के बाद भोपाल आकाशवाणी केंद्र से समाचार प्रसारित होता है कि राजघाट बाँध के तटबंधों में से एक तटबंध में दरार पड़ने के कारण एक छोटा-सी पट्टी का भाग टूट गया है और बाँध पर रुका पानी बहकर आसपास के खाली इलाकों में चला गया है। किसी को न गाँव के लोगों की चिंता है न उनके घरों की। जैसे उनके जीवन का भी कोई मूल्य नहीं रहा गया हो। सरकार की दृष्टि में पूरा क्षेत्र खाली स्थान है, परंतु इस बाढ़ के कारण लड़ैई तथा आसपास के गाँवों के लोग जो भीषण त्रास भोग रहे हैं, उनकी जमीन, घर, उनके पालतू जानवर, उनका अपना गाँव, उनके मृत परिजन के बारे में कोई नहीं जानता। पूरा-का-पूरा गाँव एक प्रकार से समाप्त हो गया। पानी कम हो जाने के बाद भी क्या बचा रहेगा उनके पास? मात्र गाँव। उनकी झोपड़ी तो गरीबी के कारण आधी ढह चुकी थी और बाढ़ के कारण अब पूरी ढह गई है। इस दर्दनाक परिस्थिति में सरकार की ओर से सहायता की आशा भी नहीं की जा सकती, क्योंकि उनके लिए वह क्षेत्र खाली था। न लोग रहते थे और न ही उनकी झोपड़ी थी। इस भीषण कृत्रिम बाढ़ के कारण कई गाँवों के लोग अथाह दुख और परेशानियों को झेलने के लिए विवश थे। जीव-जंतु, पशु-पक्षियों की कितनी जानें गईं कोई ठिकाना नहीं है। उनके हरे-भरे खेत, उपजाऊ जमीन, घर-झोपड़ी

आदि सभी को बाढ़ ने नष्ट कर दिया। उनके अपने-परिजन नदी की धार में बह गए। गाँव के लोगों का जीवन बाढ़ के कारण तहस-नहस हो गया।

'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' उपन्यास में बाढ़ के समय उत्पन्न समस्या को उपन्यासकार ने यथार्थ रूप में चित्रित किया है। आसपास के क्षेत्रों के लिए ब्रह्मपुत्र नद वरदान और अभिशाप दोनों का कार्य करता है। विशेष रूप से वर्षा के समय ब्रह्मपुत्र में आई बाढ़ के कारण उस प्रांत के लोग करुण त्रासदपूर्ण जीवन बिताने के लिए अभिशप्त हैं। जिन महाजनों का घर ऊँचे स्थान पर बना था या घर का तल ऊँचा करके मजबूत चांगघर बनाया गया है, वे बाढ़ के प्रकोप से कुछ हद तक मुक्त थे। महाजन लोग इस बाढ़ से ग्रसित क्षेत्र के अलावा अन्य स्थानों पर भी अपना घर बनाते हैं। लोग चांगघर के ऊपर बैठ कर जब देखते हैं तो स्वयं को मानो समुद्र के बीच पाते हैं। गाय, भैंस, बछड़े, पालतू जानवर सब बाढ़ में बह जाते हैं। नाव लेकर दूर-दूर तक लोग उन्हें ढूँढ़ने निकलते हैं। इस परिस्थिति में भी महाजन के कर्मचारी काम करने के लिए बाध्य हैं। महाजन केवल आदेश देता है और वे उस अथाह जल में नाव लेकर भैंस ढूँढ़ने निकल पड़ते हैं। अपनी आँखों के सामने फसल, जमीन, घर-बार ब्रह्मपुत्र के गर्भ में जाते देख लोग हताश-निराश होकर देखने के अलावा कुछ नहीं कर सकते। इस असहाय पूर्ण स्थिति का वर्णन 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' उपन्यास में इस प्रकार हुआ है -**'ब्रह्मपुत्रले साँच्चै नै उग्ररूप धारण गरेको छ। बयरआँटीबाट कछुगाउँसम्मै नदीले गडा हान्न थालेको छ। छेउका रूखपात, खेतीपाती सबै कुरा जमिनसहित काटेर लडाउँदै-भत्काउँदै ब्रह्मपुत्रले आफ्नो गर्भमा समेट्न थालेको छ। बडाबडा रूखाका मुढाहरू द्रुतगतिले नदीमा हेलिएका छन्। नदीको यही रूप हो भने अब सात दिनभित्रैमा नदी बयरआँटी र कछुगाउँको छेउमा आइपुग्नेछ र यी गाउँहरू ब्रह्मपुरको गर्भमा भासिएर त्यहाँ नदी बग्नेछ। यी गाउँ, छपड़ी, वन, जङ्गल केहिको पनि चिनोचपेटो रहने छैन।'**[7] (अर्थात ब्रह्मपुत्र ने उग्र रूप धारण कर लिया है। बयरआँटी से कछुगाउँ तक नदी में कटाव तेजी से हो रहा है। आसपास के पेड़-पौधे, खेत, जमीन सब देखते-देखते ब्रह्मपुत्र के गर्भ में समाहित हो रहे हैं। यदि नदी का रुख यही रहा तो सात दिन के अंदर ही बयरआँटी और कछुगाउँ के नजदीक आ पहुँचने की संभावना है तथा ये गाँव ब्रह्मपुत्र के गर्भ में समाहित हो जाएँगे। गाँव, वन, जंगल किसी भी चीज का निशान तक नहीं रहेगा।)

गाँव में शिक्षा की स्थिति अत्यंत दयनीय रही है। अशिक्षित होने के कारण लोग शिक्षा के महत्व को नहीं समझ पाते हैं, जिससे गाँव में विभिन्न प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। गाँव में शिक्षा के विकास में विभिन्न बाधाएँ हैं, जिनमें बाढ़ एक प्रमुख बाधा है। बाढ़ के कारण शिक्षा के क्षेत्र में उत्पन्न समस्याओं का चित्रण दोनों उपन्यासों में हुआ है। लड़ैई गाँव में जब प्राइमरी मदरसा खोला गया था, तब बच्चों की संख्या न के बराबर थी। धीरे-धीरे उसमें बच्चों की संख्या बढ़ने लगी और एक आदर्श स्कूल बनने की ओर वह अग्रसर था तभी स्कूल को वहाँ से हटाया गया। लड़ैई को डूब क्षेत्र के अंतर्गत रखा गया और मदरसे को वहाँ से हटा दिया गया। उस स्कूल में कार्यरत शिक्षक जनकसिंह (मास्साब) को अन्य स्थान पर स्थानांतरित कर दिया गया।**'हम आपको एक और सूचना दे दें ठाकुर साहब, कि आपका गाँव राजघाट बाँध परियोजना में डूब क्षेत्र में आ रहा है। इसलिए हमें ऊपर से आदेश आया है कि वहाँ से मदरसा हटा लिया जाए और वहाँ नियुक्त अध्यापक का तबादला कहीं और कर दिया जाए।'**[8] दूसरी ओर 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' उपन्यास में बाढ़ के कारण दिन-प्रतिदिन नदी का कटाव बढ़ रहा है। खेती की जमीन, घर, पेड़-पौधे तो नदी में समाहित हो गए हैं, अब स्कूल जिस जगह पर स्थित है, उस जगह तक नदी आ पहुँची है। इसका उदाहरण द्रष्टव्य है-**'काकतीबाबूको पाठशालाको छेउछाउ त नदी आइपुग्नै लाग्यो। अब छिट्टै स्कूल भात्काएर त्यसका डाँडाभाटा, खुटा, खाँबा, नओसारे कल्याण छैन। काकतीले त्येसै दिनबाट पाठशाला बन्द गरिदिए।'**[9] (अर्थात काकतीबाबू के विद्यालय के नजदीक नदी पहुँच

गई है। अब जल्द से जल्द स्कूल को तोड़कर वहाँ से खूँटे, बाँस को ले जाना जरूरी है। काकती ने उस दिन से विद्यालय बंद कर दिया।) अब यह विद्यालय कितने दिनों तक बंद रहेगा उसका कोई अनुमान नहीं हैं। बाढ़ कम होने के बाद भी जब तक उचित स्थान न मिले, तब तक विद्यालय की स्थापना कैसे हो सकती है? बच्चे कितने दिनों तक शिक्षा से वंचित रहेंगे, इसकी चिंता करने वाला कोई नहीं है।

निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि हिंदी के 'डूब' और नेपाली के 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' उपन्यासों में बाढ़ से ग्रसित अंचल के लोगों की समस्याओं को मार्मिक रूप में अभिव्यक्त किया गया है। वैषम्य के रूप में एक ओर मानवीय निर्मित बाढ़ है तो दूसरी ओर प्राकृतिक बाढ़ है। बाढ़ किसी भी रूप में आए, लेकिन बाढ़ के समय या उसके पश्चात उत्पन्न भीषण परिस्थिति एवं उससे प्रभावित लोगों की स्थिति प्रत्येक स्थान पर समान होती है। कहीं पर लोगों को बाढ़ के कारण कम और कहीं पर अधिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। भारतवर्ष में देखा जाए तो प्रत्येक वर्ष कई क्षेत्रों के लोग बाढ़ की त्रासदी को भोगने के लिए विवश हैं। यह केवल 'डूब' उपन्यास में चित्रित लड़ैई और उसके आसपास के क्षेत्रों की कथा नहीं है, यह भारत के अधिकांश अंचलों की कथा है। विकास के नाम पर नदी पर बाँध बनाया जाता है। गाँव को उजाड़ कर देश विकास की ओर कैसे अग्रसर हो सकता है? बिजली के लिए जिन क्षेत्रों को उजाड़कर बाँध बनाने का कार्य किया जाता है, उन क्षेत्रों के लोग स्वयं कभी बिजली का उपभोग नहीं कर पाते! उनको उनके ही गाँव-जमीन से विस्थापित होना पड़ता है। 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' में चित्रित बाढ़ की समस्या केवल उस अंचल की कथा नहीं है। यह असम के अधिकांश हिस्सों और प्रांतों की कथा है। वर्तमान में ब्रह्मपुत्र तथा उसकी सहायक नदियों के आसपास के क्षेत्रों में भीषण बाढ़ की स्थिति उत्पन्न होती है। प्रत्येक वर्ष न जाने कितने लोगों की जमीन और घर बाढ़ का शिकार हो जाते हैं, न जाने कितने लोग विस्थापित होते हैं तथा कितने ही लोग शरणार्थी बनने के लिए मजबूर होते हैं? कहना कठिन है। बाढ़ के बाद उत्पन्न स्थिति को लोग आज भी झेलने के लिए विवश हैं। बाढ़ के कारण जीव-जंतुओं पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। इसके कारण असम के एक सींग वाले दुर्लभ गैंडे की प्रजाति भी खतरे में है। प्रत्येक वर्ष बाढ़ के कारण असम में अनेकों जीव-जंतु बह जाते हैं। वर्तमान में भारतवर्ष में बाढ़ की समस्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। तमाम सरकारी प्रयासों एवं योजनाओं के बावजूद भारत की जनसंख्या की बहुत बड़ी आबादी इससे प्रभावित है। अत: 'डूब' एवं 'ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ' उपन्यास में चित्रित अंचल वर्तमान भारत के उन तमाम गाँवों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो बाढ़ की समस्या से त्रस्त हैं। ❑

संदर्भ सूची :

1. सिंह, अर्जुन प्रसाद, कृषि संकट बनाम किसान मुक्ति, पृ.-16
2. जैन, वीरेंद्र, डूब, मुख्य पृष्ठ
3. वही, पृ.-204
4. वही, पृ.- 204-205
5. क्षत्री, लीलबहादुर, ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ, पृ.- 43
6. जैन, वीरेंद्र, डूब, पृ.- 285
7. क्षत्री, लीलबहादुर, ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ, पृ.- 42
8. जैन, वीरेंद्र, डूब, पृ.-107
9. क्षत्री, लीलबहादुर, ब्रह्मपुत्रका छेउछाउ, पृ.- 42

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

कृष्णा सोबती और निरूपमा बरगोहाईं के उपन्यास : एक समीक्षा

बर्णाली बैश्य

शोधार्थी, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, असम
मो. 6001317554
ईमेल : barnalibaishya860@gmail.com

शोध सार :

बीसवीं शताब्दी का भारतीय कथा साहित्य जिन प्रमुख रचनाकारों के कारण समृद्ध हुआ है, उनमें कृष्णा सोबती (1925–2019) और निरूपमा बरगोहाईं (1932–अब तक) का नाम उल्लेखनीय है। कृष्णा सोबती हिंदी साहित्य की तथा निरूपमा बरगोहाईं असमीया साहित्य की प्रसिद्ध कथाकारों में स्थान रखती हैं। दोनों की रचनाओं के समान ही उनका व्यक्तित्व भी विलक्षण रहा है। 'उपन्यास' आधुनिक गद्य विधाओं में सर्वाधिक सशक्त तथा लोकप्रिय विधा है। इसी उपन्यास लेखन के क्षेत्र में आलोच्य लेखिकाओं ने विशेष रूप से सफलता प्राप्त की है। स्वतंत्रता संग्राम और उसके बाद के देश की सामाजिक, राजनैतिक तथा भावगत पहलुओं और समस्याओं को आलोच्य लेखिकाओं ने अपने-अपने उपन्यासों में सजीव रूप से चित्रित किया है। महत्वपूर्ण बात यह है कि भिन्न परिवेश, भाषा तथा प्रांत के होने पर भी दोनों ही लेखिकाओं के उपन्यासों में चित्रित विविध परिदृश्यों में काफी समानताएँ दिखाई पड़ती हैं।

बीज शब्द :

समाज, नारी, आजादी, त्रासदी, अधिकार, चेतना आदि।

1. प्रस्तावना :

उपन्यास साहित्य का विकास आधुनिक काल से हुआ है। अपने प्रारंभिक अवस्था में अंग्रेजी तथा बंगला भाषा से प्रेरित तथा प्रभावित होकर अलग-अलग दिशाओं को पार कर उपन्यास ने वर्तमान की स्थिति प्राप्त की है। कृष्णा सोबती जहाँ अपनी बेबाक लेखनी और स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए जानी जाती हैं, वहीं निरूपमा बरगोहाईं अपनी स्पष्ट,सरल भंगिमा के लिए प्रसिद्ध हैं। अपनी-अपनी विशिष्ट साहित्यिक योगदान के लिए दोनों ही लेखिकाओं को अनेक पुरस्कारों तथा सम्मानों से विभूषित भी किया गया है। कृष्णा सोबती को अपने जीवन-काल में साहित्य शिरोमणि पुरस्कार, साहित्य अकादमी

पुरस्कार, उत्तर प्रदेश शासन पुरस्कार तथा ज्ञानपीठ पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। वैसे ही निरूपमा बरगोहाईं को भी हेम बरुवा बँटा, बासंती देवी पुरस्कार, साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा डि.लिट उपाधि से सम्मानित किया जा चुका है। आलोच्य लेखिकाओं ने अपने-अपने उपन्यासों में प्रमुख रूप से समाज के विविध वर्गों की भिन्न समस्याओं, दशाओं, परिवर्तनों को चित्रित कर पाठकों के हृदय को आंदोलित किया है।

2. अध्ययन का महत्व :

प्रस्तुत अध्ययन हिंदी और असमीया साहित्य संसार की दो प्रमुख हस्ताक्षर क्रमश: कृष्णा सोबती और निरूपमा बरगोहाईं के उपन्यासों की समीक्षा को लेकर किया गया है। आलोच्य लेखकाओं के उपन्यास भले ही अलग-अलग भाषाओं में लिखे गए हैं, पर भावभूमि एक जैसी है तथा समाज चेतना ही दोनों के उपन्यासों का मूलमंत्र है। इस दृष्टि से प्रस्तुत अध्ययन महत्व रखता है। साथ ही निरूपमा बरगोहाईं और उनका साहित्य जो अहिंदीभाषी साहित्य है, की हिंदी प्रेमिओं तथा विद्वान जगत को जानकारी प्राप्त होने के साथ-साथ इस विषय में आगे चर्चा करने का अवसर भी प्राप्त होगा।

3. अध्ययन का शीर्षक :

प्रस्तुत अध्ययन का शीर्षक है - 'कृष्णा सोबती और निरूपमा बरगोहाईं के उपन्यास : एक समीक्षा'।

4. अध्ययन का उद्देश्य :

प्रस्तुत अध्ययन का मूल उद्देश्य हिंदी की कृष्णा सोबती और असमीया की निरूपमा बरगोहाईं के उपन्यासों का अध्ययन-विवेचन कर उन पर चर्चा करना है।

5. अध्ययन का सीमांकन :

प्रस्तुत अध्ययन आलोच्य लेखिकाओं के उपन्यासों पर केंद्रित रहेगा।

6. पद्धति एवं व्यवहृत प्रणाली :

प्रस्तुत आलेख की अध्ययन पद्धति मूलत: विश्लेषणात्मक एवं विवेचनात्मक है। प्रस्तुत अध्ययन की प्रस्तुति के लिए प्रिंट-स्रोतों से प्राप्त सहायक ग्रंथों का संकलन कर उनका विचार-विश्लेषण किया गया है। अवतरण एवं ग्रंथ सूची के प्रस्तुतिकरण में MLA (Modern language association) पद्धति के नवीनतम संस्करण का प्रयोग किया गया है।

हिंदी भाषा के 'य' वर्ण के लिए असमीया भाषा में दो वर्णों का चलन है - एक का उच्चारण 'य' ही है और दूसरे का उच्चारण 'ज' होता है। यहाँ असमीया 'य' के लिए हिंदी में 'य' रखा गया है, पर असमीया के 'य' के 'ज' वाले उच्चारण के लिए लिप्यंतरण में 'य' रखा गया है।

7. विषय विश्लेषण :

समाज पर पैनी निगाह रखने वाली कृष्णा सोबती ने बहुल कथा-साहित्य लिखा है। कृष्णा सोबती के अनुसार - **'साहित्य हमारी जिन्दगी में उसी तरह रचा-बचा है, जैसे इस लोक में सृष्टि का रचाव।'**[1] कम लिखने को विशिष्ट लिखना मानने वाली कृष्णा सोबती ने अपने लेखकीय इतिहास में कुल बारह उपन्यास लिखे, जिनके नाम क्रमश: इस प्रकार हैं - डार से बिछुड़ी (1958), मित्रो मरजानी (1967), यारों के यार (1968), तिन पहाड़ (1968), सूरजमुखी अंधेरे के (1972), जिन्दगीनामा (1979), ऐ लड़की (1991), दिलो दानिश (1993), समय सरगम (2000), जैनी महरबान सिंह (2007), गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान (2017) और चन्ना (2019)। अपने एक संवाद में लेखिका ने अपनी रचनात्मकता के बारे में कहा है कि - **'हमारे समय की हलचलों और आबोहवा ने हमारी पीढ़ी के रचना विस्तार को तय किया है। मेरे स्वभाव में कुछ ऐसा है कि अपने तई कभी कुछ तय नहीं रहा। इसी ने मेरी रचनात्मकता को विस्तार दिया। इसी ने हर कृति के साथ मुझे भाषा का नया मुखड़ा दिया और कथ्य को दोहराने से भी बरी रखा।'**[2]

'डार से बिछुड़ी' उपन्यास में पाशो नामक पंजाबी युवती के संघर्षपूर्ण जीवन की करुण कथा वर्णित है, जो

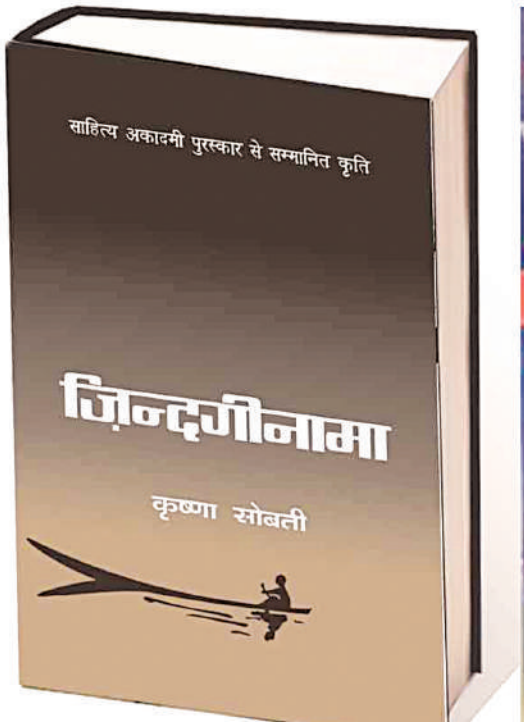

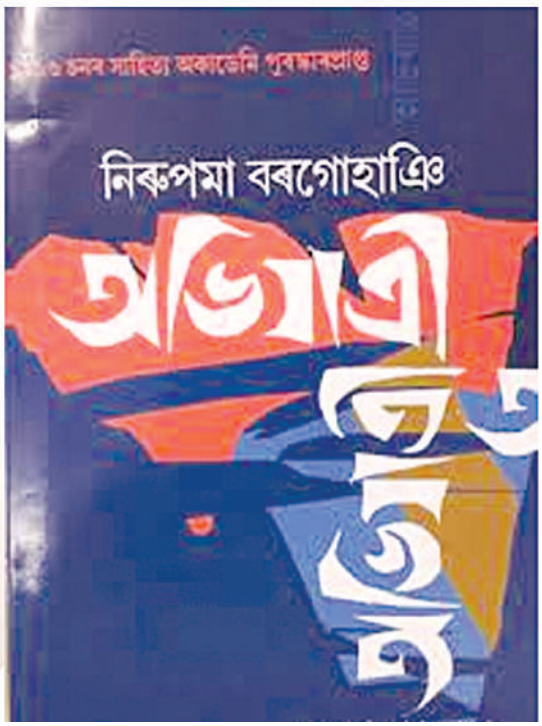

एक मध्यमवर्गीय, रूढ़िवादी परिवार तथा समाज का हिस्सा है। उसकी माँ के अंतर्जातीय विवाह करने के कारण यह समाज उसे भी संदेह की दृष्टि से देखता है तथा परिवार वाले बिना कारण ही उस पर लांछन लगाते रहते हैं, जिसके कारण पाशो अपनी डार या परिवार से बिछुड़कर संघर्षमय जीवन निर्वाह करने पर मजबूर हो जाती है। 'मित्रो मरजानी' कृष्णा सोबती की बहुचर्चित तथा विवादित उपन्यास है, जिसमें मध्यम वर्गीय परिवार की स्त्री मित्रो दैहिक हक की बात करके पहली बार पुरुष प्रधान भारतीय रूढ़िवादी समाज का विद्रोह करती है। 'यारों का यार' में लेखिका ने दफ्तरों में व्याप्त भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी आदि को लेकर एक अलग मिजाज का उपन्यास हिंदी साहित्य को भेंट की है। 'तिन पहाड़' त्रिकोण प्रेम पर आधारित नारी प्रेम की असफलता और उसकी कारुणिक प्रेम कथा पर आधारित उपन्यास है। 'सूरजमुखी अंधेरे के' लेखिका की प्रमुख प्रसिद्ध उपन्यास है, जिसमें बाल यौन शोषण के शिकार हुई लड़की की मानसिक पीड़ा की कथा और उसके जीवन संघर्ष की कथा चित्रित है। 'जिन्दगीनामा' एक ऐसी वृहद कथा है, जो किसी एक पात्र की कथा न होकर एक संस्कृति, एक जीवन-शैली की महागाथा है। अविभाजित भारत के उस दौर में पंजाब की मिट्टी की महक, गाँव, चौपाल, कृषि संस्कृति, इतिहास से जुड़ी यह उपन्यास लेखिका की मीठी स्मृतियों से उपजी हुई है। साथ ही देश की तत्कालीन राजनैतिक परिस्थिति पर भी प्रकाश डाला गया है। 1905 में हुई बंगभंग, क्रांतिकारियों का विद्रोह, अंग्रेजी शासन के खिलाफ विद्रोह के स्वर आदि का चित्रण जो अत्यंत महत्वपूर्ण है। 'ऐ लड़की' एक मृत्यु से संघर्षरत माँ और उसकी बेटी के बीच हुई संवाद शैली में लिखा गया अत्यंत ही जीवंत उपन्यास है। बेटी के भविष्य के प्रति चिंतित वृद्ध माँ का अपने जीवनानुभवों को बाटँती नारी जीवन के विविध पहलुओं को बयाँ करता यह उपन्यास एक प्रकार से नारी जीवन का महागाथा स्वरूप है। 'दिलो दानिश' दिल्ली के एक खानदानी रईस तथा वकील कृपानारायण तथा उनके परिवार के अंत:संबंधों, कलेश, सांमती परिवार तथा समाज में नारी

की सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर आधारित लेखिका का एक बेहतरीन उपन्यास है। 'समय सरगम' अन्य उपन्यासों से भिन्न वृद्धों के जीवन से जुड़ी समस्याओं का एक अन्य प्रशंसनीय उपन्यास है। **'पुरानी और नई सदी के दो-दो छोरों को समेटता समय सरगम जिए हुए अनुभव की तटस्थता और सामाजिक परिवर्तन से उभरा, उपजा और एक अनूठा उपन्यास है।'**[3] जैनी महरबान सिंह उपन्यास में जिंदगी के रोमांस, उत्साह, उमंग और उजास की कथा को कृष्णा सोबती ने बड़ी ही सादगी के साथ चित्रित किया है। 'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान' उपन्यास रक्तरंजित इतिहास के उस क्रूर और हिंसक पन्नों का वास्तव चित्र है, जिसमें उस समय का चित्र है, जब भारत की आजादी ने एक और कहानी लिखनी शुरू की, जिसका उद्देश्य अपने औपनिवेशक अतीत को धोना था। जहाँ अपने ही मुल्क में विभाजन के बाद लोग शरणार्थी बन पड़े, उपन्यास उन्हीं उखड़े और दरबदर भटके हुए रूहों की करुण कथा है। 'चन्ना' असल में कृष्णा सोबती का सबसे पहला उपन्यास है, परंतु प्रकाशक के साथ भाषा को लेकर मनमुटाव के कारण इसका प्रकाशन सबसे अंत में हुआ। 'चन्ना' अविभाजित भारत के खेतिहर समाज और उस परिवेश में जन्म लेकर पली-बड़ी लड़की की कथा है, जो स्त्री अथवा पुरुष सत्ता से निकल कर अपने आप को व्यक्ति सत्ता में देखती है।

इस प्रकार कृष्णा सोबती ने समाज के हर पहलू को अपने उपन्यासों में चित्रित करने का सतत प्रयास किया है। समाज, राजनीति, सत्ता का द्वंद्व, दो पीढ़ियों के बीच अंतराल, व्यक्ति के अंतरंग-बहिरंग रूपों, समाज में नारी की समस्याओं, नारी की स्थिति आदि के संदर्भ में लेखिका ने अपने दृष्टिकोण स्पष्ट रूप में अंकित किया है। आजादी, विभाजन की त्रासदी और नया देश - ये तीनों ही कृष्णा सोबती के लिए बहुत मायने रखते हैं, जिसे वह समय-समय पर अपने उपन्यासों के जरिए प्रवाहित करती रही हैं।

असमीया साहित्य की विशिष्ट लेखिका निरूपमा बरगोहाईं का जीवन काफी संघर्षमय रहा है। फिर भी इन बाधाओं को लाँघते हुए वह निरंतर साहित्य सृजन में लगी रही हैं। असमीया के प्रसिद्ध विद्वान, समालोचक डॉ. नगेन सइकिया जी निरूपमा बरगोहाईं की रचनाओं के बारे अपने एक लेख में इस प्रकार लिखते हैं कि - **'यथार्थते एगराकी मानविकालादी लेखक रूपे तेउ आमार समाज जीवनक स्वाभाविक भावे देखिछिल। एटात आछिल पदवी, क्षमता आरु अर्थलोभनर एखन छवि, आनटोट आछिल अर्थनैतिक, सामाजिक भावे निष्पेषित मानुहर छवि।**[4] (भावार्थ - वास्तव में एक मानवतावादी लेखक के रूप में उन्होंने स्वाभाविक रूप से हमारे सामाजिक जीवन को दो तरह से देखा था। एक चित्र पद, सत्ता व लालच का था और दूसरा चित्र सामाजिक रूप से दबे हुए लोगों का था।)

बहुमुखी प्रतिभा की धनी निरूपमा बरगोहाईं अपने साहित्यिक दौर में अब तक तीस से अधिक उपन्यास लिख चुकी हैं। उनके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं - सेइ नदी निरबधि (1962), अंतश्रोता (1965), एजन बुढ़ा मानुह (1962), दिनर पिछत दिन (1968), हृदय एटा निर्जन द्वीप (1970), पुवार पूरबी विभास (1971, होमेन बरगोहाईं के साथ संलग्न रूप में), सामान्य - असामान्य (1971), छाया आरु छबि (1971), केकटाछर फूल (1972), नामि आहे एइ संधिया (1977), तिनि कन्या (1978), इपारर घर सिपारर घर (1979), भविष्यतर रङा सूर्य (1980), दिन प्रतिदिन (1982), चिनाकि अचिनाकि (1987), गोहाँनी आइ गोसाँनी आइ (1987), अन्य जावन (1987), चम्पावती (1990), एखन श्राद्धत आनंदाश्रु (1991), अभियात्री (1992), एकेइ जोन एकेइ बेलि (1994), ब्रह्मार अस्त्र (1994), निजर परा निलगत (1996), एलबामत हेरोवा छबि (1997), सोणीली दिन सोणाली राति (उपन्यास समग्र 1997), पखी घूरि याय, इपार सिपार, शत्रु, अन्य द्वीप अन्य ढौ (निरूपमा बरगोहाईंर उपन्यास समग्र, प्रथम खंड 1999, द्वितीय खंड 2001), पल्लवीर पृथिवी (2002), प्रेम अप्रेमर माजेदि (2002), एइ प्रेम एइ जीवन (2007), बन्दित्व (2008), अग्रगामिनी (2009), अनन्या (2010), सौगन्ध (2010)।

निरूपमा बरगोहाईं के उपन्यासों की संख्या जितनी

विशाल है, उतनी ही विषय-वस्तु वैविध्यपूर्ण है। इनके अधिकतर उपन्यास नारी केंद्रित हैं, जिनमें प्रमुख रूप से सेइ नदी निरबधि, एजन बुढ़ा मानुह, दिनर पिछत दिन, सामान्य असामान्य, इपारर घर सिपारर घर, अन्य जीवन, चम्पावती और अभियात्री का नाम उल्लेखनीय है। 'सेइ नदी निरबधि' में 'लक्ष्मी', 'एजन बुढ़ा मानुह' में 'इला' और 'कमला', 'दिनर पिछत दिन' में 'अणु' आदि नारी पात्रों के जरिए समाज में प्रेम तथा विवाह में नारी की स्थिति को भलीभाँति दिखाया गया है। 'इपारर घर सिपारर घर' असमीया पाठकों तथा विद्वान समाज में अत्यंत ही चर्चित तथा प्रशंसनीय उपन्यास रहा है। उपन्यास की प्रमुख नारी पात्र 'अंजली' एक शिक्षित, स्पष्टवादी तथा नारी के अधिकारों के प्रति बोलने वाली सजग लड़की है। वह नारी शोषण तथा रूढ़िवादी समाज में नारी के तिरस्कार को अपनी युक्तिसंगत तर्क के साथ तीव्र रूप से विरोध करती हुई नजर आती है - **'हिस्ट्री! हिस्ट्री! किंतु एइ हिस्ट्री थाके केवल माइकी मानुहरहे, पुरुषर नाथाके। एइ पटेश्वरीर दरेइ चहरत थका रेखा दिरो हिस्ट्री आछे, किंतु रेखादिर सर्वनाश करा मानुहजनर हले कोनो हिस्ट्री नाथाकिल'**।[5] (भावार्थ - इतिहास! इतिहास! लेकिन यह इतिहास सिर्फ महिलाओं का होता है, पुरुषों का नहीं होता। इस पटेश्वरी की तरह शहर में रेखा दी का भी इतिहास है, लेकिन रेखा दी को नष्ट करने वाले का कोई इतिहास नहीं रहा।) उपन्यास में अन्य एक मुख्य नारी पात्र 'पटेश्वरी' के जरिए लेखिका ने समाज में पुरुषों द्वारा नारी के साथ किए गए खिलवाड़, बलात्कार, दैहिक तथा मानसिक अत्याचार को वास्तव रूप में चित्रित किया है।

पुरुषों के समान अधिकार पाने के हक को 'अन्य जीवन' और 'चम्पावती' नामक उपन्यासों में चित्रित किया गया है। 'अन्य जीवन' में शादी के बाद पहली बार मनोज अपनी पत्नी अनिमा को अपने गाँव लेकर जाता है। वहाँ अनिमा को रंभा चाची के पति के असहनीय अत्याचार के कारण आत्महत्या करने की बात पता चलती है और वह पुरुष जाति के प्रति घृणा करने लगती है, किंतु अंत में वह समझ जाती है कि नारी शोषण का खात्मा पुरुषों के खिलाफ लड़कर नहीं, बल्कि पुरुषों के साथ एक होकर ही संभव है। पुतली के संवाद में यह स्पष्ट होता है - **'आमार एइ समाज व्यवस्थार आमूल परिवर्तन नोहोवा लैके**

आमार पुरुष प्रधान समाज खनर पुरुषर दृष्टिभंगी सलनि नहय।'[6] (भावार्थ – हमारे इस समाज व्यवस्था में नूतन परिवर्तन नहीं होने तक हमारे पुरुष प्रधान समाज के पुरुषों की दृष्टि भी नहीं बदलने वाली है।) इसी प्रकार 'चम्पावती' में मुख्य नारी पात्र चम्पावती अपने पति के विवाहेतर संबंध का विरोध कर पति-गृह त्याग देती है, जिससे गाँव में उसकी बहन के विवाह की समस्या के साथ-साथ उसके चरित्र पर भी लोग उँगली करते हैं। चम्पावती इनके खिलाफ अपनी आवाज बुलंद कर समाज में नारी को अपनी मर्यादा के प्रति जागरूकता अभियान में आगे बढ़ती है। 'अभियात्री' उपन्यास, जो मूलत: जीवनीमूलक उपन्यास है, असम में स्वतंत्रता आंदोलन की सेनानी तथा नारी मुक्ति आंदोलन की अग्रदूत चंद्रप्रभा सइकिया के जीवनी पर आधारित है। प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका ने असम में प्रारंभिक दौर में स्त्री-शिक्षा के परिवेश, स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं का योगदान तथा नारी अधिकार के लिए लड़कर असम प्रादेशिक महिला समिति का गठन आदि का वास्तव चित्र उपन्यास में अंकित कर एक सफल समाजवादी नारी विषयक उपन्यास साहित्य-प्रेमियों को भेंट की है।

निरूपमा बरगोहाईं के उपन्यासों में दूसरा प्रमुख स्वर राजनैतिक परिदृश्य का है। केकटाछर फूल, गोहाँनी आइ गोसाँनी आइ, निजर परा निलगत, अभियात्री आदि उपन्यासों में स्पष्ट रूप से असम के तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों का चित्रण देखने को मिलता है। स्वतंत्रता संग्राम, असम आंदोलन, कम्युनिस्ट पार्टी, नृशंस जनसंहार, अल्फा विद्रोह के साथ-साथ गांधीवादी विचारधाराओं का उल्लेख इन उपन्यासों में देखने को मिलता है। इस प्रकार ग्राम्य तथा शहरी जीवन के भिन्न चित्र और उनमें अंतराल, प्रेम, समाज में नारी की स्थिति, नारी संघर्ष, पारिवारिक समस्याओं, स्त्री-पुरुष संबंध, अन्याय के प्रति विद्रोह आदि सामाजिक समस्याओं के साथ ही तत्कालीन राजनैतिक, अर्थनैतिक तथा धार्मिक समस्याओं का चित्रण निरूपमा बरगोहाईं के उपन्यासों में द्रष्टव्य है।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त अध्ययन-विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि कृष्णा सोबती और निरूपमा बरगोहाईं के उपन्यासों की रचना भले ही अलग-अलग परिवेश, भाषा तथा प्रांत में हुई हो, किंतु दोनों के उपन्यासों के मूल में समाज चेतना का भाव ही प्रमुख है तथा तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि विविध पहलुओं का चित्रण आलोच्य लेखिकाओं के उपन्यासों में सजीव रूप में देखने को मिलता है। ❑

ग्रंथ सूची :

1. सोबती, कृष्णा, वैद बलदेव कृष्ण. सोबती-वैद संवाद. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली. 2007, पृष्ठ-33
2. वही, पृष्ठ-29
3. सोबती, कृष्णा. समय सरगम. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली. 1984, कवर पृष्ठ से
4. बरुवा, नवीन. नीलकण्ठी निरूपमा. पूर्वांचल प्रकाशन, गुवाहाटी. 2018, पृष्ठ-16
5. बरगोहाईं, निरूपमा. निरूपमा बरगोहाईंर उपन्यास सम्भार 2. ज्योति प्रकाशन, गुवाहाटी. 2001, पृष्ठ-23)
6. वही, पृष्ठ- 733

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

शंकरदेव की अपूर्व सृष्टि अंकिया नाट

डॉ. जोनाली बरुवा

विभागाध्यक्ष एवं एसोसिएट प्रोफेसर
मरिधल महाविद्यालय, धेमाजी, असम
डाक : धेमाजी, पिन : 787057
मो. 9864108413
ईमेल : jonaliboruah7@gmail.com

प्रस्तावना :

नाटकों का संबंध निस्संदेह लोकजीवन से है और इसलिए लोक का इतिहास जितना पुराना है, नाटक परंपरा भी उतनी ही प्राचीन है। नाटक के तत्व, संवाद आदि का समावेश सबसे पहले वेदों में मिलता है, जिससे उसकी प्राचीनता का सहज ही परिचय मिल जाता है। नृत्यगीत और कविताओं की प्रधानता से आगे निकलकर आधुनिक नाटकों का वास्तविक प्रारंभ 19वीं शताब्दी के अंत में हुआ, परंतु नाटकीय तत्वों का अपेक्षाकृत अभाव होने के बावजूद पद्यबद्ध नाटकों की परंपरा आज भी विद्यमान है। सामान्य जनता का मनोरंजन करना इन लोक नाटकों का उद्देश्य होता है।

असम प्रदेश प्राचीन संस्कृति और कला का केंद्र रहा है। विशेषकर कृष्णभक्ति आंदोलन के अभ्युदय, विकास एवं विस्तार ने असम जैसे प्रांतीय प्रदेशों को भी प्रभावित किया। असम प्रदेश के प्रमुख वैष्णव कवि, नाटककार, अभिनेता, चित्रकार, संगीतकार, समाज सुधारक आदि बहुमुखी प्रतिभा के धनी श्रीमंत शंकरदेव ने असमिया समाज संस्कृति में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया। कृष्ण भक्ति के साथ साथ भगवान राम को अवतार मानकर राम भक्ति का प्रवर्तन किया। मध्ययुग में पूरे देश में अपना प्रभाव विस्तार करने वाली भक्ति की धारा के कई तत्व अलग अलग प्रांतों में समान रूप से पाए जाते हैं। यद्यपि श्रीमंत शंकरदेव के आराध्य कृष्ण थे, उन्होंने रामभक्ति का भी प्रचार किया। जात-पात के भेद को भुलाकर भक्ति को सर्व जन सुलभ बनाने के लिए नाटक जैसी प्रभावशाली साहित्यिक विधा का सहारा लिया। श्रीमंत शंकरदेव के नेतृत्व में असम में 'अंकिया नाट' का सूत्रपात और विकास हुआ। उनका राम के चरित्र पर आधारित प्रथम अंकिया नाट 'रामविजय' है। 'रामविजय' के पश्चात राम के चरित्र पर आधारित अंकिया नाटों की परंपरा अबाध गति से चलती रही।

ईश्वर के साकार, अवतारी और लीलामयी रूप की उपासना राम काव्य के कवियों ने की है। लोकरक्षक, धर्म संस्थापक, मर्यादा पुरुषोत्तम राम जन जन को मोहित करने वाले हैं। राम भक्ति धारा का प्रमुख स्रोत रामचरित

मानस है। भारतीय रंगमंच के इतिहास के आरंभिक समय से ही राम चरित मानस के अभिनय किए जाने का उल्लेख मिलता है। वर्तमान युग में रामलीला का जो भारत व्यापी प्रचार प्रसार है, उसकी आधारशीला गोस्वामी तुलसीदास ने ही रखी थी।

बीज शब्द :

अंकिया नाट, यात्रा नाट, भक्ति, रंगमच, संवाद, रस आदि।

विषय प्रवेश :

'अंकिया नाट' असमिया नाट्य साहित्य के जनक महापुरुष शंकरदेव की अपूर्व सृष्टि है। 'एकशरण' नाम धर्म के प्रचार माध्यम के रूप में सृजित इस विधा ने एक ओर जहाँ असमिया साहित्य के भंडार को समृद्ध किया वहीं दूसरी ओर असमिया संस्कृति की अभिव्यक्ति में एक विशेष भूमिका भी निभाई। शंकरदेव ने तत्कालीन समाज के निरक्षर, सहज-सरल लोगों के मन में कृष्ण भक्ति की धारा प्रवाहित करने के उद्देश्य से अंकिया नाटकों की रचना की तथा भाओना प्रथा का श्रीगणेश किया। कुछ विद्वानों के अनुसार समाज में निम्न श्रेणी के माने जाने वाले शूद्रों को संस्कृत नाटकों का मंचन देखना मना था। शंकरदेव ने जात-पात के बंधन से मुक्त होकर सभी वर्ग के लोगों को एक माना। शंकरदेव का प्रथम सफल प्रयास था 'चिह्नयात्रा' का मंचन। 'चिह्नयात्रा' की सफलता के बाद शंकर देव ने कहानी, संवाद, श्लोक, गीत, भटिया, नाट या नृत्य आदि उपादानों से युक्त अंकिया नाटों की रचना की। शंकरदेव द्वारा लिखे गए नाटक हैं : कालिया दमन, पत्नी प्रसाद, केलिगोपाल, रुक्मिणी हरण, पारिजात हरण और राम विजय। शंकरदेव की परंपरा का निर्वाह करते हुए उनके प्रिय शिष्य माधवदेव ने भी नाटकों की रचना की।

अंकिया नाटों का स्रोत :

जिस समय शंकरदेव ने लिखित नाट्य साहित्य का प्रवर्तन किया उस समय असमिया, बंगला, उड़िया आदि किसी प्रांतीय भाषा में लिखित नाट्य साहित्य का उदाहरण देखने को नहीं मिलता। कुछ विद्वान मैथिली भाषा में लिखित 'उमापति उपाध्याय' की रचना 'पारिजात हरण'

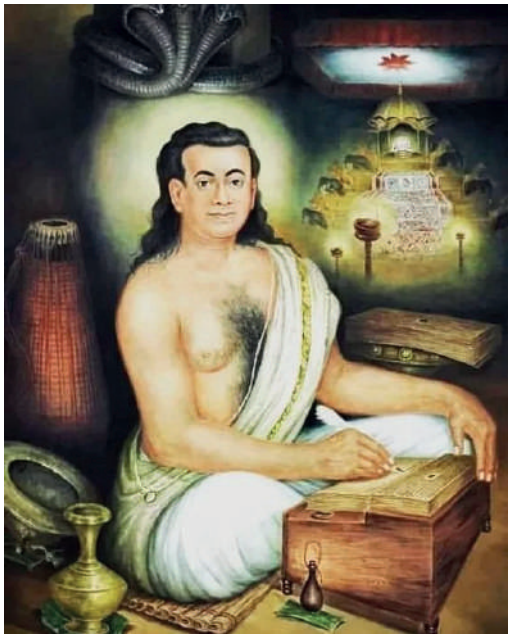

(1325 ईस्वी) को प्रांतीय भाषाओं और बोलियों में प्रथम नाट्य साहित्य मानते हैं। शंकरदेव ने अंकिया नाटकों की लेखन शैली संस्कृत नाटकों से लिया था। अंकिया नाटकों की रचना शैली में संस्कृत नाटकों का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। विशेषकर अंकिया नाटकों में नांदी, प्ररोचन, आमुख या प्रस्तावना, श्लोकों का प्रयोग, सूत्रधार, संगी और भरत वाक्य समान मुक्ति मंगल भटिमा का प्रयोग संस्कृत नाटकों की ही देन है।

अंकिया नाटकों का दूसरा प्रमुख स्रोत है - मध्ययुगीन भारत के विभिन्न रंगमंचीय अनुष्ठानों का प्रत्यक्ष अनुभव। शंकरदेव ने अपने जीवनकाल में दो बार तीर्थाटन किया था। असम के बाहर के विभिन्न नाट्य मंडलियों और संस्थानों के साथ वे स्वयं जुड़े रहे। इनमें कथकली, भागवत खेल नाटक, तेरकुर्तु, भवाई, ललित, रासलीला, रामलीला, नौटंकी आदि प्रमुख हैं। अंकिया नाटकों का तीसरा एवं एक महत्वपूर्ण स्रोत है - असम के स्थानीय नाट्यानुष्ठान। यद्यपि, उस समय असम में लिखित नाट्य साहित्य का अभाव था तथापि समाज में मनोरंजन के साधन के रूप में कुछ लोक नाट्यों का प्रचलन था, जिनमें ओजापालि, कठपुतली नृत्य, लोक नृत्य, ढुलिया नाच, देवधानी नृत्य आदि उल्लेखनीय हैं।

उपर्युक्त तीनों स्रोतों के आधार पर नाट्य साहित्य का सृजन करने के बावजूद शंकरदेव की रचनाओं में उनकी अपनी विलक्षण प्रतिभा और एक पृथक रचना शैली का परिचय मिलता है। विशेषकर अंकिया नाटकों का कला कौशल और कथानकों के चयन में काफी मौलिकता दिखाई देती है।

'अंकिया नाट' शब्द की उत्पत्ति :

महापुरुष शंकरदेव और महापुरुष माधवदेव द्वारा रचित नाट्य साहित्य में उन्होंने कहीं भी 'अंकिया' शब्द का उल्लेख नहीं किया है। इस शब्द का प्रयोग परवर्ती समय में देखा जाता है। डॉ. सत्येंद्र नाथ शर्मा ने कहा है – 'अंकिया एक विशेषण शब्द है (अंक + इया), इसके साथ नाट शब्द जोड़कर 'अंकिया नाट' शब्द प्रचलन में आया।'

संस्कृत नाट्य साहित्य में अंकित शब्द का अर्थ है चिह्न। इसके माध्यम से कथानक के विभिन्न स्तरों को चिह्नित किया जाता है। कुछ विद्वानों का मानना है कि एक अंक का होने के कारण इसका नाम अंकिया नाट पड़ा होगा। शंकरदेव और माधवदेव ने नाटक की अभिव्यक्ति के लिए 'नाट' या 'नाटक' और 'यात्रा' शब्द का प्रयोग किया था। परवर्ती समय में इन दो महापुरुषों द्वारा रचित नाट्य साहित्य को विशेषता प्रदान करने के लिए शायद उसे 'अंकिया नाट' कहा गया।

अंकिया नाटों के प्रकार और विशेषताएं :

अंकिया नाटों को मुख्य रूप से तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है। नाट, यात्रा और झुमुरा। अंकिया नाटों का अध्ययन करने पर उनमें निम्नलिखित सामान्य विशेषताएं देखी जा सकती हैं –

1. सूत्रधार की प्रधानता या महत्वपूर्ण भूमिका
2. काव्यधर्मी गीत
3. श्लोक या पयार की अधिकता
4. ब्रजावली भाषा का प्रयोग
5. लयात्मक गद्य का प्रयोग
6. संगीत नृत्य

अंकिया नाट की उल्लेखनीय विशेषता है – सूत्रधार की प्रधानता। अंकिया नाटों में सूत्रधार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यद्यपि नाटक में सूत्रधार की परिकल्पना संस्कृत नाटकों से ली गई है तथापि शंकरदेव ने इसमें अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचय देते हुए उसे स्थानीय रूप दिया है। संस्कृत नाटक में सूत्रधार का कार्य नाटक के आरंभ में ही समाप्त हो जाता है, लेकिन अंकिया नाटों में सूत्रधार नांदी गीत गाकर नाटक की शुरुआत करता है और पूरे नाटक में अपनी उपस्थिति दर्ज कराता हुआ मुक्ति मंगल गाकर नाटक की समाप्ति तक अपना पार्ट अदा करता है। अंकिया नाट का सूत्रधार गायक, नर्तक, परिस्थिति व्याख्याकार, निर्देशक आदि सभी भूमिका निभाता है। अंकिया नाट में सूत्रधार की भूमिका को देखते हुए हम यह कह सकते हैं कि वह वास्तव में नाटक के अभिनेताओं और दर्शकों के बीच वह सेतु समान होता है। सामान्य दर्शकों को नाटक की कहानी समझने में सूत्रधार काफी सहायक होता है।

अंकिया नाटों की भाषा ब्रजावली है। मैथिल कोकिल विद्यापति की पदावलियों का प्रभाव ब्रजावली में देखा जा सकता है। अंकिया नाट आरंभ से अंत तक गीतिधर्मिता की विशेषताओं से युक्त होता है। नांदी श्लोक से नाटक का आरंभ होता है और अभिनेताओं तथा नाटककार का परिचय देते हुए मुक्ति मंगल भटिमा से पहले गाए जाने वाले श्लोक के साथ नाटक समाप्त किया जाता है। महापुरुष शंकरदेव असमिया नाट्य साहित्य के साथ-साथ असमिया गद्य साहित्य के भी जनक हैं। पारंपरिक लीक से अलग हटते हुए नाट्यकार शंकर देव ने अंकिया नाटों में सर्वप्रथम भाषा की सामान्य कथित शैली को साहित्यिक भाषा की मर्यादा प्रदान की। अंकिया नाटों के भाओरिया (पात्रों) के संवादों में गद्य शैली का सर्वप्रथम प्रयोग किया गया।

मंच सज्जा और अभिनय उपकरण :

अंकिया भाओना अभिनय के लिए किसी ऊंचे या बड़े मंच का इस्तेमाल नहीं किया जाता। नामघर अथवा अस्थायी मंच पर जमीन में ही इसका मंचन किया जाता है। भाओना में चरित्र के प्रकार अथवा गुणगत भेदों के अनुसार कुछ चरित्रों के अंग अथवा चेहरे में रंग लगाया जाता है। इसके लिए आमतौर पर सफेद, नीला, लाल,

गेरुवा अथवा काले रंग का प्रयोग किया जाता है। भाओना में अस्वाभाविक या भयानक रूप वाले कुछ चरित्रों को मुखौटे भी पहनाए जाते हैं। गणेश, रावण, बराह, गरुड़, ब्रह्मा, असुर आदि चरित्रों के चेहरे में मुखौटा धारण करने की परंपरा है।

अंकिया नाट में रस विचार :

भरतमुनि के रस सूत्र द्वारा अंकिया नाट पर विचार कर पाना असुविधाजनक होने की बात करते हुए डॉ. सत्येंद्र नाथ शर्मा कहते हैं 'चूंकि असमिया नाटकों का मूल उद्देश्य दर्शकों को काव्य का रसास्वादन कराना नहीं बल्कि उनमें भक्ति रस जगाना है।' यही कारण है कि साधारण काव्य नाटकों में पाए जाने वाले नौ रसों का अंकिया नाट में अभाव दिखाई देता है। इसमें दिखाई देने वाले शृंगार या वीर रस को भी भक्ति रस का सहायक उपादान माना जाता है। शंकरदेव के कुल छह नाटकों में से राम के चरित्र पर आधारित नाटक की समीक्षा करना इस शोध पत्र का मूल उद्देश्य है। अत: यहाँ शंकरदेव के राम विजय नाटक की चर्चा करते हुए तुलनात्मक समीक्षा प्रस्तुत की जाएगी।

राम विजय शंकर देव की अंतिम रचना है। 1490 ईस्वी में चिलाराय या शुक्लध्वज की प्रेरणा से इस नाटक की रचना की गई। शंकरदेव के नाटकों में सिर्फ राम विजय नाटक की कहानी ही रामायण से ली गई है। मूल कथानक रामायण से ग्रहण किए जाने के बावजूद राम विजय में नाटककार ने ऐसे कई प्रसंग डाले हैं, जिनका रामायण में उल्लेख नहीं मिलता। इसमें महानाटक या हनुमंती काव्य का प्रभाव दिखाई देता है। नाटक के विकास को ध्यान में रखते हुए डॉ. सत्येंद्र नाथ शर्मा ने असमिया नाट्य साहित्य में पंच संधि के उपस्थापन को इस प्रकार दिखाया है - प्रथम चरण 'आरंभ' सीता के रूप-गुण का वर्णन सुनकर राम के मन में सीता के प्रति आकर्षण, द्वितीय चरण 'यत्न' राम का मिथिला भ्रमण और धनुष भंग, तृतीय चरण 'प्राप्तयाशा' सीता-राम स्वयंवर तथा परशुराम का विरोध, चतुर्थ चरण में परशुराम के बाधा का निस्तारण 'नियताप्ति' और सीता के साथ अयोध्या में उपस्थिति और मिलन है पंचम चरण 'फलागम'। (असमिया नाट्य साहित्य पृष्ठ 58)

अपने नाटकों का मूल उद्देश्य धर्म प्रचार होने के कारण शंकरदेव ने नाटकों के चरित्र चित्रण को अधिक महत्व नहीं दिया। उनका एकमात्र उद्देश्य था भगवान विष्णु अथवा कृष्ण के चरित्र का गुणगान, जिसके कारण नायक रूपी भगवान के चरित्र पर ही पूरा नाटक केंद्रित रहता था। राम विजय नाटक में भी भगवान विष्णु के अवतार रूप भगवान राम के चरित्र को उभारने में जितना ध्यान दिया गया है। उतना अन्य चरित्र पर नहीं दिया गया। रामचंद्र को एक वीर क्षत्रीय के रूप में नाटक में प्रस्तुत किए जाने के साथ-साथ इस बात पर अधिक जोर दिया गया है कि भगवान राम त्रिभुवन के अधिपति हैं।

शंकर देव ने अपने नाटक राम विजय में कुछ ऐसे प्रसंगों की कल्पना की है, जिनका रामायण में उल्लेख नहीं मिलता। कुछ ऐसे प्रसंग निम्न है -

1. मूल रामायण में राम लक्ष्मण को गुरु विश्वामित्र शिक्षा आश्रम से धनुष यज्ञ दिखाने ले गए थे, स्वयंवर के लिए नहीं, लेकिन शंकरदेव के राम लक्ष्मण स्वयंवर के उद्देश्य से ही मिथिला जाते हैं।

2. गुरु विश्वामित्र के मुँह से सीता के अपरूप सौंदर्य और गुणों की बात सुनकर राम के मन में सीता के प्रति आकर्षण पैदा होने की बात भी मूल रामायण में नहीं है।

3. स्वयंवर सभा का वर्णन और सीता को देखकर सभा में उपस्थित राजाओं के मन में होने वाली प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति आदि मूल रामायण में दिखाई नहीं देती।

4. स्वयंवर सभा में शिव-धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाने का प्रयास करने वाले राजाओं का लज्जित होने का प्रसंग भी मूल रामायण से अलग है।

5. भगवान राम द्वारा धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाने से पूर्व उत्कंठित होकर सीता द्वारा धरती माता को कहे गए वाक्य भी मूल रामायण के नहीं हैं। महानाटक या हनुमंती काव्य में इस प्रसंग का उल्लेख मिलता है।

6. आयोध्या लौटते हुए रास्ते में होने वाले परशुराम और विश्वामित्र युद्ध की कथा भी रामायण में नहीं है।

7. राम विजय नाटक में सीता को जातिस्मर के

रूप में दिखाया गया है। रामायण के आदिकांड में सीता के जातिस्मर होने का उल्लेख नहीं मिलता। रामायण के उत्तर कांड में सीता के जातिस्मर होने का उल्लेख मिलता है। यद्यपि शंकरदेव के रामविजय का कथानक आदिकांड रामायण से लिया गया है, तथापि उत्तर कांड रामायण से यह प्रसंग लाकर शंकरदेव ने अपने नाटक में उसे स्थान दिया है और इस तरह कथानक की प्रासंगिकता को बनाए रखने में शंकरदेव ने अपनी नाट्य प्रतिभा का परिचय दियाहै।

उत्तर भारत का प्रसिद्ध लोकनाट्य 'रामलीला' का मूलाधार है - गोस्वामी तुलसीदास कृत 'रामचरितमानस'। परंपरागत रूप से मंचस्थ होने वाले रामलीला में भगवान राम के संपूर्ण जीवन की नाटकीय प्रस्तुति की जाती है।

अंकिया नाट की मंचीय व्यवस्था पौराणिक चरित्रों को ध्यान में रखकर किया गया है। यहाँ दर्शक या जनता का भी एक महत्वपूर्ण स्थान है।

अंकिया नाट में राम जन्म पूर्व की कथा, राम जन्म और राम का राज्याभिषेक आदि प्रसंगों को स्थान नहीं दिया गया है। यहाँ राम जन्म के पूर्व की घटनाओं को प्रमुखता नहीं दी गई है तथा राम के जीवन के कई प्रसंगों को छोड़ दिया गया है। व्यक्तिगत रूचिबोध और दर्शकों की रुचिबोध आदि विभिन्न कारणों से अंकिया नाट की कथावस्तु में भिन्नता पाई जाती है। अधिकतर रामाख्यान पुराण पर आधारित है। इसमें बहुत कम परिवर्तन देखने को मिलता है। अंकिया नाट में पात्रों में नवीनता और युगानुरूप मौलिकता प्रदान करने के कुछ प्रयोग देखे जा सकते हैं। कथावस्तु में निषाद कथा, शबरी कथा, बाली वध, मेघनाद वध, सीता की खोज, रावण कथा, सीता वनवास आदि का प्रयोग नूतन और अभिनव शैली में देखा जा सकता है। अंकिया नाट में कुछ ऐसे प्रसंग लिए गए हैं, जिनका रामायण में उल्लेख नहीं मिलता, यथा : राम-हनुमान युद्ध, लक्ष्मण दिग्विजय, सीता के द्वारा रावण वध आदि। शंकर देव ने अपनी प्रतिभा का परिचय देते हुए अंकिया नाट में ऐसे कई प्रसंगों का संयोजन किया है, जो बिल्कुल मौलिक हैं।

अंकिया नाटकों के प्रमुख पुरुष पात्र हैं : राम, लक्ष्मण, दशरथ, हनुमान, रावण, विभीषण आदि। अंकिया नाट में संपूर्ण नाटक का संचालन सूत्रधार करता है। इनके अलावा सुग्रीव, बाली, निषाद, खरदूषण, अंगद, कुंभकर्ण, मेघनाद आदि का चरित्र चित्रण किया गया है। उसी प्रकार उल्लेखनीय नारी चरित्र हैं - सीता, कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा तथा सहायक नारी पात्रों में मंदोदरी, शबरी, तारा, शूर्पणखा, अहल्या, मंथरा आदि का नाम लिया जा सकता है। राम के पक्ष के जितने भी चरित्र हैं, उनमें उदारता और मानवता के गुण देखे जा सकते हैं। सीता के चरित्र चित्रण में नाटककार ने अपनी कुशलता का परिचय दिया है।

अंकिया नाट का सूक्ष्म एवं गहन अध्ययन करने पर पता चलता है कि नाटकों के संवाद अपने आरंभिक समय से आज तक की यात्रा में काफी परिवर्तित हो चुके हैं, जिसमें समय और परिस्थिति के अनुसार विकासोन्मुख परिवर्तन माना जा सकता है। इन नाटकों के संवाद सहज-सरल, प्रवाहमान, और प्रौढ़ हैं। भाषा की दृष्टि से भी दोनों नाटकों के संवाद काफी आकर्षक, असरदार और रुचिकर हैं। हालांकि, इन नाटकों में राम के चरित्र के माध्यम से बोले जाने वाले संवादों में काफी वैषम्य पाया जाता है। इन संवादों में संबोधन शब्द, भाषा शैली और भाषा प्रयोग में समानता देखी जा सकती है। उदाहरण के तौर पर अवधी और ब्रज भाषा की बात की जा सकती है। इनके अलावा मैथिली, उर्दू मिश्रित भाषा के शब्दों का आगमन देखा जा सकता है।

सभी नाटकों में गद्य शैली का प्रयोग दिखाई देता है। प्रारंभिक नाटकों में गद्य का प्रयोग सूत्रधार कथा प्रसंगों को जोड़ने के उद्देश्य से करता था। शंकरदेव के अंतिम नाटक राम विजय में पूर्ण रूप से गद्य शैली का प्रयोग किया गया है और पद्य का प्रयोग केवल गीतों के रूप में किया गया है। मनोभावों को उद्वेलित करने के लिए गीतों का सहारा लिया गया है। राम विजय नाटक गद्य शैली का सुंदर उदाहरण है। इस नाटक में पद्य अथवा गीतों की तुलना में गद्य का प्रयोग अधिक मात्रा में है।

रंगमंचीयता :

अंकिया नाट के मंचन के लिए किसी विशेष मंच का निर्माण नहीं किया जाता बल्कि यह खुले स्थान में किया जाता है। 'रभा' नामघर के अंदर ही निर्मित किया जाता है अथवा नामघर परिसर में अलग

से अस्थायी पंडाल लगाकर जमीन पर ही इसका मंचन किया जाता है। दर्शकों के बैठने के लिए चटाई या कालीन आदि की व्यवस्था की जाती है। अंकिया नाट में नृत्य, गीत, संगीत की मुख्य भूमिका होती है, कारण मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र चित्रण में गंभीर वातावरण बनाए रखने के लिए वहाँ नृत्य, संगीत का स्थान गौण हो जाता है। अंकिया नाट में पहले हजारों दीपक जलाकर उस स्थान को रोशन करने की परंपरा थी, जो अब लगभग समाप्त हो चुकी है। अभिनेताओं की वेशभूषा का महत्व सर्वोपरि है। अंगों को रंगना, मुखौटों का प्रयोग दोनों नाटकों में देखा जा सकता है।

अंकिया नाटक की रचना में एक विशेष उद्देश्य निहित रहता है। शंकरदेव ने 'एकशरण नाम धर्म' के प्रचार के उद्देश्य से अशिक्षित, ग्रामीण, सहज-सरल लोगों के बीच अंकिया नाटों की शुरुआत की थी। लोगों में भक्ति रस की धारा प्रवाहित करना ही इसका मूल उद्देश्य था। इसके अलावा वात्सल्य, करुण, वीर, रौद्र, वीभत्स, शांत आदि रसों का भी सुंदर प्रयोग सुंदर प्रयोग देखा जा सकता है।

अंकिया नाटक में अन्यान्य रसों का महत्व कम देखा जाता है। लोकोक्ति, कहावत और मुहावरों का प्रयोग दोनों में देखा जा सकता है। शंकरदेव ने अंकिया नाट में सहज, सरल लोगों तक अपनी बात सहजता से पहुंचाने के उद्देश्य से लोकोक्ति एवं कहावतों का खूब प्रयोग किया है, जिसके कारण उनकी भाषा में एक विशेष प्रवाह देखा जा सकता हैं।

शैली के दृष्टिकोण से अंकिता नाट में भावात्मक, दार्शनिक, कथावाचक, उपदेशपरक, आशीर्वादात्मक, वर्णनात्मक, लाक्षणिक, आदेशात्मक, ओजपूर्ण, व्याख्यात्मक और आलंकारिक शैली का प्रयोग देखा जा सकता है।

उपसंहार :

अंकिया नाट मूलत: दोनों भारतीय समाज की संस्कृति से संपृक्त एक धार्मिक अनुष्ठान है। मध्ययुग के भक्ति आंदोलन की साधना पद्धति के एक मुख्य मार्ग के रूप में इसका विशेष महत्व है। अंकिया नाट लिखने और उसे मंचस्थ करने का शंकरदेव का एक विशेष उद्देश्य था - आम जनता में भक्ति का प्रचार-प्रसार। इसलिए आम जनता की रुचिबोध को ध्यान में रखकर उन्होंने नाटकों की भाषा और शैली में कुछ नयापन लाया।

भक्ति आंदोलन की नींव पर निर्मित इस नाट्य शैलियों का मूल उद्देश्य जनता को ईश्वर का साक्षात दर्शन कराकर उनके मन में ईश्वर के प्रति आस्था जगाना है। इन नाटकों का जनजीवन के साथ गहरा संबंध है। आज संचार-क्रांति और सूचना-प्रौद्योगिकी के युग में भी इस प्रकार के नाटकों का अपना अलग महत्व बना हुआ है। असमिया समाज जीवन में अंकिया नाट या भाओना का महत्वपूर्ण स्थान है।

उपर्युक्त अध्ययन से यह बात स्पष्ट होता है कि इन नाटकों का उद्देश्य मनुष्य के मन को सांसारिक लोभ, मोह से छुटकारा दिलाकर आत्मा और परमात्मा के मिलन की ओर उद्‌बुद्ध करना है। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

01. स्नातक विजयेन्द्र : हिंदी साहित्य का इतिहास, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली 2009
02. गुप्त, गणपति चंद्र : हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 1994
03. शर्मा, सत्येंद्र नाथ : असमीया नाट्य साहित्य सौमार प्रकाशन गुवाहाटी 2010
04. दुवरा, पूरवी : (संपादक) नाट्य वीक्षा, महाविद्यालय प्रकाशन प्रकोष्ठ धेमाजी 2010

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

कार्बी जनजाति के लोकगीत : एक अध्ययन

पूजा बरुवा

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
नगांव महाविद्यालय (ऑटोनोमस),
ए.टी. रोड, नगांव, असम-782001
मो. 8822864938
ईमेल : pujabaruah7274@gmail.com

प्रस्तावना :

पूर्वोत्तर भारत अनेक जाति तथा जनजातियों की संस्कृति, साहित्य, सभ्यता, दर्शन आदि से समृद्ध है। असम पूर्वोत्तर भारत का एक ऐसा राज्य है, जहाँ कई जनजातियों का बसेरा है। सांस्कृतिक दृष्टि से यहाँ की जनजातियाँ काफी समृद्ध है। उन जनजातियों में से एक प्रमुख है कार्बी। लोक-गीतों को संस्कृति का द्योतक कहा जाता है। किसी भी संस्कृति को जानने के लिए उस संस्कृति से जुड़े लोकगीतों को जानना जरूरी है, क्योंकि लोक-गीत संस्कृति का दर्पण हैं। लोक-गीत मूलत: सुख, दुख, ऐतिहासिक घटना, कथा, उत्सव आदि के प्रतिनिधि होते हैं। कार्बियों में अनेक लोक-गीत प्रचलित हैं। विभिन्न उत्सव एवं समारोहों में ये लोक-गीत गाए जाते हैं। उनमें से विवाह-गीत, लोरी गीत, प्रेम-गीत, 'हाम्फु' देवता के गीत, शराब प्रस्तुत करते समय गाए गए गीत, लक्ष्मी देवी के गीत, वर्षा देवी के गीत, रामायण के गीत या छाबिन आलुन, प्रार्थना गीत, अतीत के गीत आदि अनेक लोक-गीत प्रमुख हैं। इन लोक-गीतों में पूरा कार्बी समाज प्रतिफलित हुआ है। इनको छोड़कर कार्बी जनजाति की संस्कृति का विश्लेषण कर पाना असंभव है।

विश्लेषण :

कार्बी असम की एक प्रमुख जनजाति है। कार्बी मूलत: मंगोलीय या चीनी-तिब्बतीय प्रजाति की जनजाति है। कार्बी शब्द उनकी जनजाति और भाषा दोनों के लिए प्रयुक्त होता है। कार्बियों का जो साहित्य है, वह अधिकतर मौखिक रूप में ही पाया जाता है। लोक-गीतों के क्षेत्र में कार्बी जनजाति अद्वितीय है। ये गीत उनके बीच युगों-युगों से अधिकतर मौखिक रूप से चलते आ रहे हैं। उन लोगों के बीच प्रचलित गीत लोगों के मुख से गुजरते हुए विकसित हुए हैं। कार्बी जनजाति लोक-गीतों में अत्यंत समृद्ध है और वे अलग-अलग अवसरों पर अलग-अलग गीत गाते हैं। कार्बी लोग

विभिन्न उत्सव एवं समारोहों के अवसर पर विविध लोक-गीत गाते हैं। उनके पारंपरिक लोक-गीत और धार्मिक गीत सामान्यत: उन विशेषज्ञों द्वारा ही गाया जाता है, जो उनके अर्थ भी समझते हैं और जिनकी आवाज भी अच्छी हो। अब हम निम्न बिंदुओं के आधार पर प्रस्तुत शोध-पत्र की चर्चा करेंगे -

(क) विवाह गीत :

कार्बी में विवाह कार्य को 'पिछॉ पांगरि' कहा जाता है। कार्बी शादी में विवाह-गीतों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। कार्बी विवाह में गाए जाने वाले गीतों को 'आदाम आसार' कहा जाता है। इन गीतों में कार्बी गीति साहित्य तथा संस्कृति की झाँकी देखने को मिलती है। इसमें कार्बी समाज के रीति-रिवाज, दूल्हा-दुल्हन की समस्याएँ, कन्यादान की विरह-वेदना, दुल्हन को दिए गए उपदेश आदि का यथार्थ चित्रण मिलता है। लड़के वाले और लड़की वालों के बीच विवाह-गीत के माध्यम से एक-दूसरे के उद्देश्य और मतों का आदान-प्रदान होता है। ये गीत उभय पक्षों के गायकों द्वारा गाए जाने का नियम है, पर इस विषय में निपुण कोई व्यक्ति दोनों पक्षों में से किसी एक पक्ष की ओर से गा सकता है। विवाह की रात को मामा के घर में दोनों पक्षों द्वारा गाए जाने वाले गीत का एक उदाहरण देखिए -

थेलु (मामा) :
जु छांगलिन पेन क्लिरमे-
आन छार आंगहांग फुहे
बंगछुक पांगफार चे
खिमा रिमरॉ चे
देंग किन्दु तकचे (ले)
थेलु आहुम मे
पत लॉ हुमरि नांगले ?
पालात आफंगमे (तंग)
लॉ हुमरि छांगले (मा)
आहुत ले उनए (तंग)
लॉ हुमरि मा हे ? (दास 1998 : 26)

(भावार्थ- मामा कहते हैं कि पूजनीय बहन और जीजाज ! आप लोगों के इस वृद्ध अवस्था में हमारे इस गरीब खाने में आप लोगों के आगमन का क्या उद्देश्य है ? आपके मामा की हालत अत्यंत खराब है। इस दयनीय अवस्था में हम कैसे आपका आदर-सत्कार कर सकते हैं ?)

शादी की रात को सभी नियमों का पालन कर अगले दिन निर्धारित समय में लड़के वाले दुल्हन को साथ लेकर अपने घर लौटते हैं। दूल्हे के घर पर भी गीतों के माध्यम से दोनों समधियों के बीच बातें चलती हैं। उसका एक उदाहरण देखिए-

छांगलिन :
जु थेलु मान्दुंग
ने नांग छांगलिन मान्दुंग (पेन)
नांगलि क्लिर मान्दुंग
आरुण बचेदून (के)
जु लामथे लाम-मुंग।
वफ़ पेन वॉथुंग (छन)
नाथन रिनरान फुन
कावेदेत बिथुंग।
दाम-छार पिंथेदुन (ता)
चोजाक नेलितुम (लॉ)
थेलु मान्दुंग। (दास 1998-28)

(भावार्थ - आपकी बहन और जीजाजी का सांसरिक जीवन एकदम दुखजनक है। कपोत और गौरैया के घोंसलों की तरह हमारा घर-बार भी अस्थायी है। हमारी

आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं है। फलस्वरूप शादी करवाके हम काफी लज्जित हुए हैं।)

(ख) रामायण के गीत :

कार्बियों में रामायण की कहानी को लेकर भी अनेक गीत प्रचलित हैं। रामायण की कथा के पद्य रूप को कार्बी लोग 'छाबिन आलुन' कहते हैं। इसमें रामायण की घटनाएँ कार्बी संस्कृति में ढल चुकी हैं और इसीलिए इन गीतों में कार्बी समाज और संस्कृति की भी झलक मिलती है। अब तक संग्रहीत 'छाबिन आलुन' में 560 दो पंक्तियों वाले पद मिलते हैं। 'लुंचेप' इन पदों को गीतों के रूप में लोगों के सामने प्रस्तुत करते हैं। रामायण में घटित अनेक घटनाओं का वर्णन कार्बी गीतों में इस प्रकार मिलता है –

निचॉ चाबिन मिरलरि
कांगतांग राम पेनखन बेनि
इंगच्छिन आ लिठाइ थेपि
जनक रिचॉ ऑ चॉ पि
आमेन सीता कुंगरिपि
मारनांग कारकक् आर्नि
आरवि रुंगकक् नांग केबि
रिचो जुदेत आलाम दि।
ला आन आ लिठाइ थेपि
ला ले रुंग उन् तांग तेति
ने चोपि सीता कुंगरि
लाचि सीता पिन नांगजि।

(भट्टाचार्य 2008–104)

(भावार्थ – राम और लक्ष्मण दोनों बाहुबली हैं। सीता जनक की पुत्री हैं। जनक के पास एक लोहे का धनुष था। एक दिन आँगन में झाड़ू लगाते समय सीता उस धनुष को अपने दोनों हाथों से इधर से उधर करती हैं। उसे देखकर राजा जनक कहते हैं कि इस बड़े से धनुष को जो भी तोड़ सकेगा, उसी के साथ सीता का विवाह होगा।)

(ग) हाईमु के गीत :

कार्बियों में 'छाबिन आलुन' की तरह 'हाईमु आलुन' गीति काव्य भी काफी महत्वपूर्ण है। इसमें कार्बी युवती हाईमु और कार्बी युवक लंग टेरण की प्रेम–कथा का मार्मिक वर्णन है। हाईमु अत्यंत सुंदर थी। उसकी सुंदरता से मुग्ध होकर राज दरबारी बरलिदि ने उससे जबर्दस्ती शादी की, पर फिर भी उसे नहीं पा सका। हाईमु ने अपनी इज्जत बचाने के लिए मौत को गले लगा लिया। मृत्यु के बाद हाईमु को कार्बी समाज में देवी के रूप में स्मरण किया जाता है। उसकी सुंदरता का वर्णन निम्नलिखित गीत में अत्यंत प्रभावी ढंग से किया गया है–

चिनाम के चिनाम
राजे मे चिनाम
देंग हंग कुप तत जान (के)
देंग हंग कुप तुर दांग । (बरुवा 1998–38)

(भावार्थ– हाईमु सच में रूपवती है। जब वह घर के सामने बैठती है, तब पूरे आँगन में रोशनी छा जाती है।)

(घ) पौराणिक कथा गीत :

'रूकाछेन आलुन' पौराणिक कथा गीत है। इसका अर्थ है काछेन दादाजी के गीत। इन गीतों में कार्बियों की उत्पत्ति, रीति–नीति, समाज, संस्कृति आदि की झलक मिलती है। कार्बियों के सांस्कृतिक प्रतीक 'जामबिलि आथन' के निर्माण प्रक्रिया के बारे में 'रूकाछेन आलुन' में इस प्रकार कहा गया है –

कटारी मेछि पेन
नांगछय पांग जांगहि
आंग देंग देंग आहि ।
पारदन वरालि
छयतांगलॉ आनछि । (बरुवा 1998–39)

(भावार्थ – कटार से बारीकी से पेड़ में फूल बनाए। वरालियों (एक प्रकार की चिड़िया) को डाल में बिठाकर जामबिलि आथन सजाया गया।)

(ङ) लोरी गीत :

कार्बियों में बहुत पहले से कई लोरियाँ मौखिक रूप से चलती आ रही हैं। इन गीतों को 'अचोकेबेइ आलुन' कहा जाता है। इन गीतों में बचपन की मासूमियत, भोलापन, हँसना–रोना और माँ की ममता आदि की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। बच्चे जिन जानवरों से डरते हैं, उनका एक काल्पनिक चित्र प्रस्तुत कर माँ बच्चे को सुलाने की कोशिश करती है। इस डर में भी माँ का प्यार

छुपा हुआ होता है। कार्बी लोरी में 'केंगलंगपॉ' नाम के एक कृतिम जीव का उल्लेख मिलता है। इसी का भय दिखाकर माँ बच्चों को सुलाती हैं। इसका एक उदाहरण देखिए –

ओ चिक्लोपी पेन चिक्लछ
नांगचो नांगपेन पितांगलॉ
पेपन आलिंग पेपन नांग।
बेहेम आटिकूपो टिकूप
छक नांगतक पांगदुक पांगदुक
तेपलॉ मा हारछुन आदुक ?
तेप तेलांग फेए आंगपंग
केंगलंगपॉ वांगफ्लुत
मेथान चेकर दुत
हतन बेलंग पारकूप फ्लुप
ऑछोमार बेफ्लुंग । (बरुवा 1998–39)

(भावार्थ – ओ चाँद और तारा, तुम्हारे लड़के को ले गया। धान का कुटना, लहसुन पीसना खत्म हुआ कि नहीं ? केंगलंगपॉ आया है और कुत्ते भी झगड़ रहे हैं। डोलची, टोकरी उल्टा कर रख दो। सभी बच्चे भाग गए हैं।)

(च) प्रेम गीत :

कार्बियों के प्रेम–गीत का भंडार काफी विशाल है। कार्बी युवक–युवती अपने मन के भावों को गीतों के जरिए ही प्रकट करते हैं। ये गीत लिखित न होकर मौखिक होते हैं। इन गीतों में प्रेमी–प्रेमिकाओं का निश्च्छल प्रेम, मिलन की उत्सुकता, विरह की व्याकुलता आदि का सजीव चित्रण मिलता है। मिलन की अनिश्चयता से व्याकुल हुए किसी प्रेमी की व्यथा का एक सुंदर उदाहरण देखिए –

रानाम नांगलॉ लॉ इलि
नेले नांगरेणमो कालि
क्रय क्रेलपंग पेन हार्टि
जक जेलॉ छेंग केऑ नांगजि।

(बरुवा 1998–41)

(भावार्थ – ओ मेरी जान तुम्हें अपना बनाने की चाहत में मेरा रोम–रोम तड़प रहा है। पर तुम्हारा बाप मुझे अलग जाति का कहकर हमें एक नहीं होने दे रहा है।)

(छ) बिहू गीत :

असमीया की तरह कार्बियों में भी वसंत के आगमन के साथ बिहू गीत गाए जाते हैं। वसंत के आते ही युवक–युवतियों के मन में प्रेम का संचार होता है और वे एक–दूसरे से मिलने के लिए व्याकुल हो उठते हैं। उनकी व्याकुलता, मिलन की आस आदि का यथार्थ चित्रण निम्नलिखित गीत में देखने को मिलता है –

मांगवेपी नांगले
फारकंग पेन फारचे
कांगथु चिबाते ;
लाचि ने छेंगवे
इंगजारजि मनए
छेंगचिबेर उनए। (बरुवा 1998–41)

(भावार्थ – प्रेमातुर युवा युवती से कहता है कि वसंत आ गया है। शिमलु, मदार भी खिल चुके हैं। तुम्हें पाने के लिए मेरा मन व्याकुल हो उठा है। मेरा मन पंख लगाकर उड़ने लगा है और मैं उसे नहीं रोक पा रहा हूँ।)

(ज) 'हाचा केकान' में गाने वाले गीत :

'हाचा केकान' कार्बियों का एक बहुत बड़ा उत्सव है। इसमें सब लोग मिलकर नाचते–गाते हैं। ये गीत अत्यंत आकर्षक होते हैं। निपुण गायकों द्वारा इन गीतों को गाया जाता है। आधी रात तक नृत्य करके थके हुए युवक गाते हुए गृहस्थ से कहते हैं –

हच्छंग वच्छक तेलिरांग,
केकान आहान चलनांग,
हाचाकान पांग थांग कार तांग,
क्लिमचॉ जान नन कान आहान तांग।

(भट्टाचार्य 2008–103)

(भावार्थ – आधी रात हो चुकी है। सप्तर्षिमंडल सिर के ऊपर आ पहुँचा है। पूरी रात हँसते–गाते ही नहीं व्यतीत कर सकते। इसीलिए सबको खिला–पिलाकर विदा कीजिए।)

(झ) 'चॉमांगकान' में गाए जाने वाले गीत :

कार्बी लोग श्राद्ध को 'चॉमांगकान' कहते हैं और

इस पर्व में माचिरा कोहिर नामक गीत गाए जाते हैं। 'माचिरा कोहिर' सामान्य गीत न होकर पवित्र मंत्र जैसा है, जिन्हें केवल बाप-दादाओं के श्राद्ध में ही गाया जाता हैं। 'माचिरा कोहिर' में उनका सृष्टि वृत्तांत होता है। निम्नलिखित मंत्र गाकर कार्बी लोग 'चॉमांगकान' की शुरुआत करते हैं -

इलि कार्बितांगते
नियमके कि दौकक
निहात के कि दौकक
किप्लांग च्छिंगथुम नांगकक
केफि च्छिंगथुम नांगकक
किप्लांग लापुहेल
केफि लापुहेल। (भट्टाचार्य 2008-101)

(भावार्थ - कार्बियों का जो नियम और सृष्टि वृत्तांत है, सब कुछ व्यक्त किया जाए।)

(ञ) लक्ष्मी पूजा के गीत :

कार्बी लोग देवी लक्ष्मी की पूजा करते हैं। लक्ष्मी पूजा को 'चकेरय' कहा जाता है। विजया दशमी के साथ जो पूर्णिमा तिथि होती है, उसी दिन कार्बी लोग इस पूजा का आयोजन करते हैं। 'चकेरय' में गाए जाने वाले गीतों को 'लक्षी केप्लांग' कहा जाता है। इसका एक उदाहरण देखिए -

कुकि चीन दाइपॉ
टेरण रंग छोपॉ
चार्नाम चेपिनत।
रेवंग काठि वेछॉ
कॉल लॉ छिद।
कुलेंग आबि दो
चूपी पाम रुंग फ्रॉ।
दंडिवार छार्पो
लॉ माथुम दाम फ्रॉ।
टिम पेन इम आर्ल,
नांगद तावे ओ
जॉ- आरनि चक्लो
रुण रुण छि लॉपो। (बरुवा 1998-47)

(भावार्थ - टेरण रंगछोप नाम के एक व्यक्ति ने सबसे पहले देवी लक्ष्मी का गुण-गान का प्रचार किया था। एक दिन जब वे जंगल में घूम रहे थे, तब एक झरने के किनारे उन्होंने पके धान देखे और धान के महत्व को समझ गए। दंडिवार छार्पो नाम के एक व्यक्ति ने एक शुभ दिन देखकर अपने साथ कई लोगों को लेकर देवी लक्ष्मी का अपने घर में स्वागत किया।)

(ट) 'हाम्फु' देवता के गीत :

'हाम्फु' कार्बियों के प्रमुख देवता हैं। वे उन्हें सृष्टिकर्ता मानते हुए उनका नाम स्मरण करते हैं। कार्बी लोग उनका गुणगान करते हुए निम्नलिखित गीत गाते हैं -

इन सुमसि सुमजा
लि सुम कारबि आजंग
सु उरति किंग रंगतंग
बंग पुठे मे कंगतंग
लपेन लंग मुकरंग
सेहि सुसुंगशी अफन
इ सरगनी अबंग
से करन आलोंग
मो सुंग कारबि आजंग
पुठे मन नेफांक मेनमेन
नेतेरंग के राइकोंगी पांगपांग।

(बरुवा 1990-52)

(भावार्थ - भाइयो सुनो, भगवान हाफु मुकरम, ने इस पृथ्वी का सृजन किया। पेड़ बनाए और पेड़ बड़े हुए, उसमें चिड़ियाँ खुशी से रहने लगीं। उसके बाद उन्होंने दुनिया में इंसान बनाए और यह घोषित किया कि पीढ़ियों के जरिये वे मानव जीवन में शांति लाएँगे। वे समाज से सभी बुराइयों को मिटा देंगे। इसीलिए हमें हाम्फु मुकरम का नाम स्मरण करना चाहिए।)

(ठ) वर्षा देवी के गीत :

कार्बियों में गीत और मंत्र में ज्यादा फर्क नहीं रहता। वे मंत्रों को भी गीत के रूप में ही गाते हैं। वर्षा देवी के स्तुति गीत इसका प्रमुख उदाहरण हैं। बारिश के न होने पर कार्बी लोग इस प्रकार वर्षा देवी के

स्तुति गीत गाते हैं –

क्रुकचुर मा क्रुकचुर
क्रुकचुर नांग केकुर
वांग बतर नांग चिंगथुर । (बरुवा 1998–49)

(भावार्थ – हे क्रुक चुर पक्षी, तुम अपने अमृत स्वर से वर्षा देवी को पृथ्वी पर उतार लाओ।)

(ड) राजाओं के प्रशस्तिपरक गीत :

कार्बी लोग अपने प्राचीन काल के राजाओं का गुणगान करते हुए गीत गाते हैं। इन गीतों में राजाओं का साहस, पराक्रम, यश, ख्याति, सहृदयता आदि का वर्णन होता है। कार्बी में राजा को पिंपमार और वे जिस स्थान में रहते हैं, उसको 'च्छचेंग' कहा जाता है। कार्बियों में राजा रेंग बंग हम का विशेष स्थान हैं। उन्होंने युद्ध का त्याग कर जयंतीया राजा के साथ मित्रता करके शांति की स्थापना की थी और इसीलिए कार्बी लोग उनकी कहानी का स्मरण करते हुए गीत गाते आए हैं। इसका एक उदाहरण देखिए–

केथे आर्नि रेंग बंग हम,
केथे आर्नि मे अंग
केथे जान्ता पेन वांग बन,
च्छचेंग पात आरंग थिरक्लंग
रंग कुंग चुपक आप लक बंग
आचीम आजात एटांग फ्रंग ।

(भट्टाचार्य 2008–107)

(भावार्थ – ख्यातिमंत राजा च्छचेंगर, महामानी रेंग बंग हम का नगर सु-सज्जित है। जिधर भी आँखें जाती हैं, वही मनोरम दृश्य देखने को मिलता है। वे जयंतीया राजा के मित्र हैं। उनमें कोई भी भय या संशय नहीं हैं और उनका शौर्य देखकर विदेशी तक भी हैरान रह जाते हैं।)

(ढ) प्रार्थना गीत और प्रस्थान गीत :

कार्बियों में भोजन ग्रहण करने से पहले प्रार्थना करने का नियम है। वे अपनी थाली से थोड़ा-सा खाना हाथ में लेकर अपने तथा परिवार वालों की मंगल कामना करते हुए ईश्वर के नाम पर अर्पण करते हैं।

इन प्रार्थनाओं को 'आरणाम किपु' कहा जाता है। किसी व्यक्ति के मरने पर उसकी आत्मा को स्वर्ग पहुँचाने के लिए कार्बी लोग प्रस्थान गीत गाते हैं। इन गीतों को 'काचारहे आलुन' कहा जाता है।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि कार्बी असम की प्रमुख स्वजातीय जनजाति है। इस जनजाति का सांस्कृतिक पक्ष काफी विशाल एवं समृद्ध है। इनमें लिखित साहित्य की संख्या अधिक नहीं है, पर मौखिक साहित्य जैसे लोक-गीत, लोक-साहित्य में ये अद्वितीय हैं। पहले के समय में कार्बियों की जो संस्कृति थी, परंपरा थी, उसमें समय के साथ-साथ कुछ बदलाव आ गए हैं; पर आधुनिकता में पड़कर वे अपनी संस्कृति को नहीं भूले हैं। आज भी वे गर्व से अपनी परंपरा का निर्वाह कर रहे हैं। ❑

संदर्भ सूची :

1. दास, नारायण, (संपा). असमर संस्कृति-कोष. द्वितीय. गुवाहाटी : ज्योति प्रकाशन, 2014
2. दास, लोंगकाम टेरन और करेन. कारबि कृष्टिर उत्सव. प्रथम. गोवालपारा : रत्नपीठ प्रकाशन, 1998
3. बरुवा, सुरेन्द्र. कारबि लोक समाज-साहित्य संस्कृतित अभूमुकि. प्रथम. गुवाहाटी : बह्मीमान प्रिंटर्स, 1998
4. भट्टाचार्य, प्रमोदचन्द्र, (संपा). असमर जनजाति. तृतीय. धेमाजि : किरण प्रकाशन, 2008
5. राभा, मलिना देवी, (संपा). असमर जनजाति आरु संस्कृति. द्वितीय. जोरहाट : असम साहित्य सभा, 2016
6. Baruah, Anil Kumar. The Karbis of the Hills. First. Guwahati: Abhiyatri Mudran Aru Prakashan, 1990

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

শ্রীমদ্ভগৱত গীতা, ভাগৱত পুৰাণ আৰু নামঘোষাত নিহিত আত্মতত্ত্বৰ স্বৰূপ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

ড° বিভূতি লোচন শর্মা

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
বড়োলেণ্ড বিশ্ববিদ্যালয়
বি. টি. আৰ, কোকৰাঝাৰ, অসম
ম'বাইল ঃ ৯৪৩৫৩৬৪৫৭০
ই-মেইল ঃ bls.nalbari@gmail.com

অৱতৰণিকা ঃ

আত্মতত্ত্বৰ প্রকৃত জ্ঞানৰ অভাৱত ভৌতিক জগতত সমস্যাবোৰ প্রতিদিনে বর্ধিত হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। পার্থিৱ জগতৰ বর্ণময় অৱস্থিতিয়ে আগুৰি ৰখা সংসাৰখনৰ স্থিতি ভয়ঙ্কৰ বুলি জানিও মানুহে স্বকীয় স্বার্থৰ খাতিৰত কৰা কামবোৰে পৃথিৱীখনক আৰু অধিক বেয়া অৱস্থাৰ ফালে লৈ গৈছে। শৰীৰ আৰু মনৰ ভেদ, ইন্দ্রীয়সমূহৰ কর্মবৈচিত্র্য, অহংকাৰৰ স্বৰূপ, বুদ্ধিৰ কার্য, চিত্তৰ স্থিতি, বিষয়াসক্তি আদিৰ প্রকৃত জ্ঞানৰ অভাৱত ইহজগতত মানুহবিলাকৰ মানসিক শান্তি প্রায় নোহোৱা হৈছে। প্রতিদিনেই মানুহৰ মাজত আত্মহত্যাৰ প্রৱণতা বাঢ়ি গৈ আছে। বিশ্ব স্বাস্থ্য সংস্থাৰ ২০১৯ বর্ষৰ প্রতিবেদন অনুসৰি **প্রতিবর্ষত ৭,০০,০০০ মানুহে আত্মহত্যা কৰে। এই সংখ্যা ছেকেণ্ডত হিচাপ কৰিলে প্রতি ৪০ ছেকেণ্ডত এজন মানুহে আত্মহত্যা কৰে।**[১] অর্থনৈতিক স্থিতিৰ শিখৰত আৰোহণ কৰাৰ লীপ্সাৰ দ্বাৰা অথবা ৰাজনৈতিক সামন্তবাদৰ প্রসাৰৰ তাড়নাৰ বাবে জনজীৱনৰ প্রমূল্যৰ চিন্তা ভূলুণ্ঠিত হৈছে। অর্থনৈতিক অসমতাৰ কৰালগ্রাসত পৰা সমাজৰ হিত চিন্তকসকলৰ কর্মোদ্যম ধ্বংস হৈছে। সন্ত্রাসবাদৰ বহুমাত্রিক স্থিতিয়ে জনজীৱন সন্ত্রস্ত কৰিছে। 'ভৌতিক সুখৰ উপলব্ধিয়েই জীৱনৰ লক্ষ্য' এই বিচাৰধাৰাৰে ভাৰাক্রান্ত সমাজব্যৱস্থা। ইয়াৰ ফলশ্রুতিত দেখা দিয়া নানান দুঃখ-কষ্টৰ পৰা পৰিত্রাণৰ উপায়েই হৈছে আত্মজ্ঞান। আত্মজ্ঞান অবিহনে শান্তি নাইবা ভগৱৎপ্রাপ্তিৰূপ শান্তি অসম্ভৱ।

প্রস্তাৱনা ঃ

জীৱন অকল ভৌতিক সুখৰ প্রাপ্তিৰ বাবেই নহয় ইয়াৰ সমান্তৰালভৱে আধ্যাত্মিক সুখ প্রাপ্তি পূর্বক জীৱনৰ প্রকৃত লক্ষ্যৰ উপলব্ধিৰ বাবেও। এই কথাটোৱেই নামঘোষা, ভাগৱত পুৰাণ আৰু শ্রীমদ্ভগৱত গীতা আদি বৈষ্ণৱ সাহিত্যত উপলব্ধ আত্মতত্ত্ব সম্পর্কীয় কথাবোৰৰ বিচাৰধাৰাৰে বোধগম্য হয়। আমাৰ আলোচনাত বিশেষ ভাৱে ওপৰোক্ত তিনিওখন শাস্ত্রত উপলব্ধ আত্মতত্ত্ব সম্পর্কীয় আধ্যাত্মিক চিন্তনৰ বিষয়বোৰৰ লগতে শৰীৰ সম্পর্কীয় কর্ণনাসিকাদি ইন্দ্রিয়সমূহৰ আৰু বুদ্ধি অহংকাৰ আদি অন্তঃসমূহৰ স্থিতি সম্পর্কে বিশ্লেষণ

আগবঢ়োৱা হ'ব। প্রয়োজনসাপেক্ষে কালিকাপুৰাণ, মনুসংহিতা আদি শাস্ত্রত থকা তথ্যসমূহৰো বিশ্লেষণ আগবঢ়োৱা হ'ব।

ইন্দ্রিয়ৰ বিষয় কর্ম আৰু প্রভাৱ ঃ

এই বিশ্বত শৰীৰ আৰু শৰীৰৰ বিষয়কেই মূল বুলি বিবেচনা কৰা মানুহৰ সংখ্যা অধিক। চকু, কাণ, নাক, জীহ্বা, আৰু চালৰ বিষয়বোৰত (ৰূপ, শব্দ, গোন্ধ, ৰস, আৰু স্পর্শ) অতিশয় আসক্তি বর্তমান যুগত অধিক দেখা যায়। ইন্দ্রিয়সমূহৰ নিজৰ নিজৰ বিষয়সমূহক ভোগ কৰিবলৈ সদায় মনে প্রেৰিত কৰি থাকে। এই বিষয়সমূহক ভোগ কৰাৰ লিপ্সা নিৰন্তৰ বাঢ়ি থাকে। মনৰ ওপৰতো বুদ্ধিতত্ত্ব আছে। গীতাত কোৱা হৈছে — **"ইন্দ্রিয়াণি পৰাণ্যাহু ইন্দ্রিয়েভ্যঃ পৰং মনঃ মনসস্তু পৰা বুদ্ধি..."** [২]

মনৰ ওপৰত থকা বুদ্ধিতত্ত্বৰো বিবিধতা আছে। ইষ্ট অনিষ্ট, বিপত্তি, ব্যৱসায়াত্মিকা, সংশয়াত্মিকা আদি গুণেৰে যুক্ত এই বুদ্ধিতত্ত্বৰ ক্রিয়া চাৰিওফালে। সেয়েহে বিষয়ৰ প্রতি থকা অতিশয় আসক্তিৰ নিয়ন্ত্রণ দুস্কৰ। বুদ্ধিক্ষয়কাৰী বা বুদ্ধি বিনাশকাৰী হেতুবোৰৰ সম্পর্কত কালিকাপুৰাণত কোৱা হৈছে যে **শোক, ক্রোধ, লোভ, কামনা, মোহ, পৰাসূতা (পৰাধীনতা), ঈর্ষা, মান, বিচিকিৎসা (সন্দেহ), কৃপা, অসূয়া, যুগুপ্সা (ঘৃণা) এই বাৰ প্রকাৰৰ বুদ্ধিনাশৰ হেতু মনৰ মলি স্বৰূপ আৰু নানা অপৰাধৰ মূল।** [৩] বুদ্ধিনাশৰ কাৰণতেই এই বিশ্বত অপৰাধবোৰ বৃদ্ধি পাইছে। সাম্প্রতিক কালত বিশ্বত সন্ত্রাসবাদৰ পৰিঘটনাৰ সংখ্যা ভয়ানক। **যোৱা ২০২১ বর্ষৰ পৰিসংখ্যা অনুসৰি সংঘটিত সন্ত্রাসবাদৰ পৰিঘটনা ১৮২৪৩৮ টা।** [৪] অকল আধুনিক যুগতেই নহয়, ৰামায়ণ-মহাভাৰতৰ কালতো পুত্রমোহ, অর্থপিপ্সা, সিংহাসনৰ লোভ আদি কাৰণৰ বাবে উৎপত্তি হোৱা সন্ত্রাসবোৰ লক্ষ্য কৰা যায়।

ইন্দ্রিয়সমূহৰ বিষয়বোৰত অনুকূলতা আৰু প্রতিকূলতা অনুসৰি ৰাগ (অনুৰাগ) আৰু দ্বেষ ব্যৱস্থিত হৈ থাকে। অতিশয় অনুৰাগ আৰু বিদ্বেষৰ দ্বাৰা অভিভূতসকলৰ প্রকৃতি অশুদ্ধ হৈ থাকে। বিষয়ৰ (ইন্দ্রিয়ৰ বিষয় সমূহৰ) অনুকূলতাৰ বাবে আসক্তি আৰু প্রতিকূলতাৰ বাবে ক্রোধ উৎপন্ন হয়, ফলস্বৰূপে অপৰাধ সংঘটিত হয়। শ্রীমদ্ভগৱদগীতাত কোৱাও হৈছে—

ইন্দ্রিয়স্যেন্দ্রিয়স্যার্থে ৰাগদ্বেষৌ ব্যৱস্থিতৌ।
তয়োর্ন ৱশমাগচ্ছেৎ তৌ হ্যস্য পৰিপন্থিনৌ।। [৫]

ইন্দ্রিয়ৰ বিষয়াসক্তিৰ ফলত হোৱা দুঃখৰ প্রসঙ্গত এই কথাটোৱেই ভাগৱতত এনেদৰে কোৱা হৈছে—

ছাৰি কৃষ্ণ সেৱা ৰত্ন বিষয়ক
কৰে যত্ন দুর্জন ইন্দ্রিয় নিৰন্তৰ।।
ধন জন পুত্র ভার্যা গজ বাজী নানা
প্রজা তাতে মাত্র মনৰ বিলাস।
স্বপ্নতো নাহিকে আন কেৱল বিষয়
ধ্যান তথাপি নুপূৰে তাৰ আশ।।
নিমিলয় কিছু সুখ কেৱলে পাৱয়
দুখ এৰি কৃষ্ণ সেৱা নৱনিধি। [৬]

অর্থাৎ মানুহে কৃষ্ণসেৱাৰূপ ৰত্নক ত্যাগ কৰি দুর্জ্জন ইন্দ্রিয়ৰ বিষয়ত আসক্ত হৈ পৰে, ধনজন পুত্র ভার্যা হয় হস্তি আদি বিষয়ৰ ধ্যান মনৰ বিলাসহে মাত্র, সেইবোৰ সপোনৰ ব্যতিৰেকে একো নহয়, তথাপি মানুহৰ আশাৰ শেষ নাই। এইবোৰৰ ফলত কেৱল দুঃখহে পোৱা যায়।

ইন্দ্রিয় নিয়ন্ত্রণৰ উপায় ঃ

বিষয়ত আসক্ত হৈ থকা ইন্দ্রিয়সমূহ কেৱল জ্ঞানৰ দ্বাৰাহে নিয়ন্ত্রণলৈ আনিব পাৰি। মনুসংহিতাত সেই কথাটো এনেদৰে কোৱা হৈছে—

ন তথৈতানি শক্যন্তে সংনিয়ন্তুমসেৱয়া।
বিষয়েষু প্রয়ুক্তানি য়থা জ্ঞানেন নিত্যশ।। [৭]

অর্থাৎ বিষয়ত আসক্ত ইন্দ্রিয়সমূহ যেনেদৰে জ্ঞানৰ দ্বাৰা নিয়ন্ত্রণলৈ আনিব পাৰি, তেনেদৰে বিষয়সমূহক ভোগ নকৰাকৈ নিয়ন্ত্রণলৈ আনিব নোৱাৰি (সেয়েহে বিষয়সমূহৰ প্রভাৱ বা ক্রিয়াৰ জ্ঞানৰ দ্বাৰা ইন্দ্রিয়সমূহক নিয়ন্ত্রণ কৰিব পাৰি)।

মায়াময় জগতত মানুহৰ অৱস্থা ঃ

এই মায়াময় বা জড়ময় জগতৰ প্রকৃত স্বৰূপ সাধাৰণ লোকে বুজি নাপায় নাইবা ইয়াৰ প্রকৃত জ্ঞান পাবলৈ সময় বা সুবিধা তেওঁলোকৰ নাথাকে। এনেকুৱা সমস্যাৰ পৰা পৰিত্রাণ পাবলৈ হৰিনামেই যে একমাত্র ঔষধ এই কথাটো মাধৱদেৱৰ নামঘোষাত নিহিত উপদেশসমূহৰ পৰা বুজা যায়। মাধৱদেৱৰ মতে মানুহে চৈতন্যৰূপ (চেতন তত্ত্ব)

শুদ্ধাত্মা কৃষ্ণক পৰিত্যাগ কৰি নাইবা ব্যাধিৰূপ দুৰ্ঘোৰ সংসাৰৰ ঔষধৰূপ হৰিনামক এৰি জৰৰূপ সংসাৰৰ ভজনা কৰি আছে। নামঘোষাত কোৱা হৈছে—

মায়া আদি কৰি যত সমস্তে জগত
জৰ কৃষ্ণেসে চৈতন্য আত্মা শুদ্ধ।
চৈতন্য কৃষ্ণক এৰি জৰক ভজিয়া
মৰে কিনো লোক অধম মুগুধ।।৪৭।।...
দুৰ্ঘোৰ সংসাৰ ইটো ব্যাধিৰ ঔষধ
মহা তেজি হৰি নামক সম্প্রতি।। ৫০।।[৮]

মুমুক্ষুলোকে অবিদ্যাজনিত সুখৰ পৰা যেতিয়া বিৰক্ত হয় তেতিয়া তেওঁলোকে আত্মবিষয়তে ৰমণ কৰে আৰু বিধিৰূপ কিঙ্কৰৰ পৰা পৰিত্রাণ পায়। নামঘোষাত কোৱা হৈছে—

মুমুক্ষুজনৰ যেৱে অবিদ্যাজনিতসুখে
বিৰকতি ভৈল আতিশয়।
কেৱলে আত্মাত মাত্র সদায় ৰমণ
কৰে তেৱে বিধিকিঙ্কৰ গুচয়।।[৯]

ইন্দ্রিয়বোৰৰ কৰণীয় কর্মৰ নির্দেশ ঃ

মাধৱদেৱে জিহ্বা আদি ইন্দ্রিয়বোৰৰ কর্মৰ নির্দেশনা কৰি বিষয়গত আসক্তিৰ নিয়ন্ত্রণেৰে সকলো দুঃখৰ পৰা মুক্তি আৰু পৰমানন্দ প্রাপ্তিৰ ৰাস্তা সুগম কৰিছে। জিহ্বাক সম্বোধন কৰি তেখেতে কৈছে—

হে জিহ্বা তোৰ মধুৰেসে মাত্র প্রিয় জান তঞি ৰসৰ সাৰক।
আন তেজি নিৰন্তৰে কৰিয়োক মাত্র পান নাৰায়ণ নাম অমৃতক।।[১০]

ইয়াত জিহ্বাৰ মধুৰপ্রিয়তা, ৰসসাৰত্বৰ বিষয় উপস্থাপন কৰি নাৰায়ণামৃত পান কৰাৰ উপদেশ দিয়া হৈছে। মাধৱদেৱৰ আক্ষেপো ইয়াত পৰিলক্ষিত হৈছে। তেওঁৰ মতে সংসাৰ সাগৰৰ সন্তৰণৰ উপায় সুদৃঢ় নৌকাৰূপ হৈছে হৰি। গতিকে জিভাৰ অগ্রভাগত হৰিৰ নাইবা ৰামৰ নাম নিৰন্তৰ থাকিব লাগে বুলি মাধৱদেৱে আগ্রহ প্রকাশ কৰিছে। সেয়েহে জিহ্বাক সম্বোধন কৰি আৰু আক্ষেপ প্রকাশ কৰি জিহ্বেন্দ্রিয়ৰ কর্মৰ উপদেশ কৰি কৈছে—

হে জিহ্বা তঞি সদা আম্নাত নির্দয়
ভৈলি কেন নোবোলস ৰাম বাণী।
সংসাৰসাগৰে ইটো হৰিসে সুদৃঢ়
নাৱ জানি হৰি বুলিও কল্যাণী।।[১১]

পাণ্ডৱী গীতাতো একেধৱণেই কোৱা হৈছে—

হে জিহ্বে ৰসসাৰজ্ঞে সর্বদা মধুৰপ্রিয়ে।
নাৰায়ণাখ্যমমৃতং পিৱ জিহ্বে নিৰন্তৰম্।।
হে জিহ্বে ময়ি নিস্নেহে হৰিং কিং ত্বং ন ভাষসে।
হৰীতি ৱদ কল্যাণি সংসাৰার্ণৱনৌ হৰিঃ।।[১২]

ইয়াতো জিহ্বাক সম্বোধন কৰি কৈছে যে— "হে ৰসৰ সাৰৱস্তুৰ জ্ঞাতা, সর্বদা মধুৰপ্রিয় জিহ্বাহ্লু তুমি নাৰায়ণ নাম্র অমৃত নিৰন্তৰ পান কৰা। হে জিহ্বাহ্লু মোৰ প্রতি দয়া নেদেখুৱাই তুমি হৰিৰ নাম নল'বানে? সংসাৰ ৰূপ সমুদ্রৰ নৌকাসদৃশ হৰিৰ নাম লোৱা।"

কর্ণক সম্বোধন কৰি মাধৱদেৱে নামঘোষাৰ

আত্মোপদেশখণ্ডত কৈছে যে— হে কৰ্ণ! তোমাৰ সদায় শব্দ প্ৰিয়, তুমি শব্দক মধুৰ বুলি জানা। (কিন্তু) অমৃততকৈও কৌটিগুণ পৰম মধুৰ যিটো শব্দ কৃষ্ণ-নাম-যশস্যা ৰূপ সেইটো সদাই শ্ৰৱণ কৰিবা। তুলনীয়—

হে কৰ্ণ সদা তোৰ শব্দ মাত্ৰসে
প্ৰিয় তত্ৰিঃ শব্দ মধুৰ জানস।
কোটি অমৃততোধিক পৰমমধুৰ
শব্দ শুন সদা কৃষ্ণ নাম যশ। [১৩]

কৃষ্ণনামৰ শ্ৰৱণ কিয় কৰিব লাগে সেই সম্পৰ্কে নামঘোষাৰ আদিতেই পঞ্চদশ সংখ্যক ঘোষাত কোৱা হৈছে যে কৰ্ণ পথেৰে নামৰূপে হৃদয়ত প্ৰৱেশ কৰি কৰি হৰিয়ে দুৰ্বাসনাবোৰ হৰণ কৰে। যেনেদৰে শৰৎ কালে লেতেৰা মলিযুক্ত পানীক নিৰ্মল কৰে তেনেদৰে মনুষ্য হৃদয়ৰ কলুষতাবোৰ কৃষ্ণনামৰ শ্ৰৱণৰ দ্বাৰা নাইকিয়া হৈ হৃদয় নিৰ্মল হৈ পৰে। সেই কথাটো এনেদৰে কোৱা হৈছে—

কৰ্ণপথে ভকতৰ হিয়াত প্ৰৱেশি হৰি দুৰ্বাসনা হৰে সমস্তয়।
কৰ্ণপথে ভকতৰ হিয়াত প্ৰৱেশি হৰি দুৰ্বাসনা হৰে সমস্তয়।। [১৪]

সংকল্প আৰু বিকল্প এই দুয়ো দিশতেই মনৰ গতি। অযথাই মনে মিছা কামনাবোৰ কৰে। পাৰিপাৰ্শ্বিক অৱস্থাত সংকল্প লওঁতে সততে অসুবিধাৰ সন্মুখীন হোৱা যায়। সেয়েহে কৃষ্ণনামেই মনৰ একমাত্ৰ সংকল্প হ'ব লাগে বুলি নামঘোষাত কোৱা হৈছে—

হে মন তোৰ কাম সঙ্কল্প বিকল্প ধৰ্ম
তেজি মিছা কামনা সকল।
সদায়ে সঙ্কল্প মাত্ৰ কৰীয়ো সুহৃদ মন
কৃষ্ণনাম পৰম মঙ্গল।। [১৫]

হৃদয়, বুদ্ধি আৰু অহংকাৰৰ বাবে উপদেশ ঃ

হৃদয়, বুদ্ধি আৰু অহংকাৰ তত্ত্বকো সম্বোধন কৰি আত্মোপদেশ খণ্ডত পৰমেশ্বৰবিষয়ক জ্ঞান দিয়াৰ যত্ন কৰা হৈছে। ইয়াত কোৱা হৈছে যে—"**হে হৃদয়! তুমি শুনা; সমস্ত ব্ৰহ্মাণ্ডত যিমান বস্তু আছে সেইবোৰ তোমাক নুজুৰে। সেই সকলোবোৰ পৰিত্যাগ কৰি কৃষ্ণনামৰ অমৃত পান কৰা আৰু সন্তোষ লাভ কৰা। হে বুদ্ধি! বিনাশকাৰী বিষয় পৰিত্যাগ কৰি পৰম শুদ্ধ, সুমঙ্গল, আৰু অক্ষয় পৰমেশ্বৰ ৰূপ কৃষ্ণত আত্মনিয়োগ কৰা। হে অহঙ্কাৰ! তুমি আত্মবিনাশৰ চিন্তা নকৰিবা। মিছা অনিত্যবিষয়ত অহম্মক ভাৱ পৰিত্যাগ কৰা। তুমি পৰমেশ্বৰৰ দাস হোৱা, সাধুসকলৰ লগত কৃষ্ণৰ ভজনা কৰা।**" [১৬]

মুকুন্দমালাত পূৰ্বোক্ত কথাবোৰৰ দৰেই জিহ্বা, মন, হাত, কাণ, চকু, ভৰি, নাক, মূৰ আদিৰ নিজৰ নিজৰ বিষয়ৰ স্থানত কৃষ্ণনামক বিষয় হিচাপে ল'ব লাগে বুলি কৈছে—

জিহ্বে! কীৰ্তয় কেশৱং মুৰৰিপুং চেতো!
ভজ শ্ৰীধৰং পাণিদ্বন্দ্ব!
চৰ্মৰ্চয়াচ্যুতকথাং শ্ৰোত্ৰদ্বয়! ত্বৰং শৃণু।
কৃষ্ণং লোকয় লোচনদ্বয়!
হৰেৰ্গচ্ছাঙঘ্ৰিয়ুগ্মালয়ং জিঘ্ৰ ঘ্ৰাণ!
মুকুন্দতুলসীং মূৰ্ধন্নমাধোক্ষজম্।। [১৭]

অৰ্থাৎ হে জিহ্বা তুমি কেশৱৰ কীৰ্তন কৰা, হে মন মুৰ নামৰ অসুৰৰ বধকাৰী কেশৱক চিন্তা কৰা। হে হস্তযুগল! শ্ৰীধৰক ভজনা কৰা। অচ্যুতৰ কথা শুনা। হে লোচন দ্বয়! কৃষ্ণক দৰ্শন কৰা। হে পাদদ্বয়! হৰিৰ আলয়লৈ যোৱা। হে নাক! কৃষ্ণৰ বাবে অৰ্পিত তুলসীপত্ৰৰ ঘ্ৰাণ লোৱা। হে শীৰ! অক্ষয় বিষ্ণুৰ ওচৰত অৱনত হোৱা।

কাম ক্ৰোধ আৰু লোভৰ পৰিত্যাগ আৰু কৃষ্ণৰ উপাসনাঃ

এই সংসাৰত যিমান অনৰ্থ হৈছে সেইবোৰৰ উৎপত্তি তিনিটা স্থানৰ পৰা হয়। সেইকেইটা হৈছে কাম, ক্ৰোধ, আৰু লোভ। এই তিনিওতা কাৰণৰ বিষয়ত অৱগত হৈ সেইবোৰৰ পৰিত্যাগ কৰি কৃষ্ণভক্তিকেই সাৰ ৰূপেৰে গ্ৰহণ কৰিব লাগে। এই কাম, ক্ৰোধ আৰু লোভ আত্মনাশৰ হেতু আৰু নৰকৰ দ্বাৰ বুলি নামঘোষাত কোৱা হৈছে—

যতেক অনৰ্থ আছে সংসাৰত তাতে তিনি বিধ সাৰ।
কাম ক্ৰোধ লোভ আপুন নাশন জানি কৰা পৰিহাৰ।।
আত্মনাশ হেতু কামক্ৰোধলোভ নৰকৰ তিনি দ্বাৰ।
জানি তাক তেজি কেৱলে কৃষ্ণৰ ভকতিক কৰা সাৰ।। [১৮]

যিজনে শুদ্ধ ভাৱত নিজকে হৰিত শৰণ লৈ আৰু হৰিক সুহৃদ বুলি ভাবে হৰিৰ কৃপাত বিঘিনিৰ মুৰতে ভৰি দি তেওঁ হৰিৰ গুণ-গান কৰি নৃত্য কৰে, অৰ্থাৎ তেওঁৰ হৰিৰ কৃপাত অমঙ্গল নহয়। সেই কথাটো নামঘোষাত কোৱা হৈছে এনেদৰে—

যিটোজনে শুদ্ধভাৱে হৰিত শৰণ

লৈয়া হৰিক সুহৃদ বুলি আছে।
হৰিৰ প্ৰসাদে সিটো বিষ্ণিৰ মুণ্ডত
ভৰি দিয়া হৰিগুণ গায়া নাচে।। [১৯]

যিজনে মুক্তিৰ প্ৰতিও নিস্পৃহ তেওঁলোকৰ ইহজগততে কি বিষয়ত মতি নাইবা ৰতি হ'ব লাগে এই সংশয়ৰ জিজ্ঞাসাত ক'ব পাৰি যে কৃষ্ণভক্তসকল ভক্তিৰ বিষয়তে ৰতিমন্ত বা মতিমন্ত হয়। যাৰ নামোচ্চাৰণ মাত্ৰই পাপীসকলৰো ভৱসিন্ধুৰ সন্তৰণ ঘটে সেই সদানন্দ সনাতন কৃষ্ণৰ উপাসনা হৃদয়তে কৃষ্ণভক্তসকলে সৰ্ৱথা কৰি থাকে।

মুক্তিতো নিস্পৃহ যিটো সেহি ভকতক
নমো ৰসময় মাগোহো ভকতি।
সমস্ত মস্তক মণি নিজ ভকতৰ
বৈশ্য ভজো হেন দেৱ যদুপতি।।
যাৰ নাম কৃষ্ণ নাম নাৱে ভৱসিন্ধু
তৰি পাৱে পৰম্পদ পাপী যত।
সদানন্দ সনাতন হেনয় কৃষ্ণক সদা
উপাসা কৰোহো হৃদয়ত।। [২০]

ভক্তিৰত্নাৱলীতো কথাটো একেধৰণে কোৱা হৈছে—

যে মুক্তাৱপি নিস্পৃহাঃ প্ৰতিপদপ্ৰোন্মিলদানন্দদাম্।
য়ামাস্থায় সমস্তমস্তকমণিং কুৰ্ৱন্তি য়ং স্বে ৱশে।।
তান্ ভক্তানপি তাঞ্চ ভক্তিমপি তং ভক্তিপ্ৰিয়ং শ্ৰীহৰিম্।
ৱন্দে সন্ততমৰ্থয়েহনুদিৱসং নিত্যং শৰণ্যং ভজে।। [২১]

কৃষ্ণৰ স্ৱৰূপৰ ব্যাখ্যা কৰিবলৈ গৈ ৯৬ আৰু ৯৭তম্ ঘোষাত কৃষ্ণৰ শুদ্ধত্ব, বুদ্ধত্ব, ঈশ্বৰত্ব, পৰমাশ্ৰয়ত্ব, ঈষ্টদেৱত্ব, সুহৃদত্ত্ব, বন্ধুত্ব, মতিত্ব, গতিত্ব, ৰতিত্ব আৰু আত্মৰূপত্ব আদি তাত্ত্বিক বিষয়ৰোৰৰ উপস্থাপন কৰা হৈছে। এই কথাটো ক'বলৈ গৈ জ্ঞানালয় চিত্তক সম্বোধন কৰি মাধৱদেৱে পৰম ৰহস্যময় কথাটো এনেদৰে কৈছে—

শুনিয়োক চিত্ত হেৰ পৰমৰহস্য বাণী
তুমি শুদ্ধ জ্ঞানৰ আলয়।
কৃষ্ণ নিত্য শুদ্ধ বুদ্ধ পৰম ঈশ্বৰ দেৱ
নছাৰিবা তাহান আশ্ৰয়।।
কৃষ্ণ নিজ ইষ্টদেৱ আত্মা প্ৰিয়তম
গুৰু সুহৃদ সোদৰ বন্ধুজন।
কৃষ্ণ মোৰ মতি গতি কৃষ্ণত ভকতি
ৰতি কৃষ্ণ পাৱে নিমজোক মন।। [২২]

এই পাৰ্থিৱ জগতৰ অজ্ঞানে মানুহক বিপথে পৰিচালিত কৰে। প্ৰকৃত জ্ঞানৰ দ্বাৰা এই অজ্ঞানক বিনাশ কৰিব পৰা যায়। ভাগৱতৰ চতুৰ্থ স্কন্ধত পৃথুৰ প্ৰতি মহৰ্ষি সনৎকুমাৰৰ আত্ম-তত্ত্বোপদেশৰ প্ৰসঙ্গত পাতনিতে জ্ঞানে কেনেদৰে অজ্ঞানক ধ্বংস কৰে সেই কথাটোৰ অৱতাৰণা কৰা হৈছে এনেদৰে—

যেন বিজু বাংসৱনে অন্যো অন্যে
ঘৰিষণে উঠে তাত অগনি প্ৰচণ্ড।
পাচে যিটো মহা বহ্নি লাগে সবে বন
ছানি দহিয়া কৰয় ৰণ্ড ভণ্ড।।
সেহি নয় জ্ঞানচয় হৃদয়তে উপজয়
ভস্ম কৰে অজ্ঞান যতেক।
গুচৈ দুষ্ট অহঙ্কাৰ সংসাৰৰ অনিৰ্ব্বাৰ
হোৱে সুখ সুখ ব্যতিৰেক।। [২৩]

জ্ঞানৰ শক্তি সম্পৰ্কে অৱগত কৰাই মহৰ্ষি সনৎকুমাৰে এই সংসাৰখন যে মিথ্যা তথা সকলো (ইন্দ্ৰিয়ৰ) বিষয় যে সপোন সদৃশ আৰু হৰি ভকতিৰ ফলত প্ৰকৃত চেতনা লাভৰ পিছত স্বপ্নবিভোৰ মানুহে টোপনিৰ পৰা সাৰ পাই উঠাৰ দৰে যে অৱস্থাপ্ৰাপ্ত হয়, সেই কথাটো এনেদৰে কৈছে—

যেন কোনো পুৰুষেক শয়নত
আছিলেক তাতে নানা স্বপন দেখিল।
পাচে শয়নক ছাৰি দুৰ্ঘোৰ নিদ্ৰাক এৰি
যেন পুনু চেতনা লভিল।।
পুৰুষৰো সেহি নয় ভৈল যেৱে
জ্ঞানোদয় হৰি ভকতিৰ প্ৰসাদত।
পাচে যিটো স্বপ্নময় যতেক বিষয়
চয় দেখে সিটো সমস্তে লোকত।। [২৪]

উপসংহাৰ ঃ

পাৰ্থিৱ জগতৰ অবিদ্যাই সৃষ্টি কৰা অজ্ঞানে মানুহক প্ৰকৃত লক্ষ্যৰ পৰা বিচলিত কৰে। ফলস্ৱৰূপে অজ্ঞানজনিত অনেক সমস্যাই মানুহক ভাৰক্ৰান্ত কৰে। প্ৰকৃত ঈশ্বৰতত্ত্বৰ প্ৰাপ্তিয়েই সেই সকলো সমস্যাৰ পৰা মানুহক মুক্তি দিয়ে। ভগৱদ্ভক্তিয়ে সেই পৰমেশ্বৰৰ বিষয়ত মানুহক সচেতন কৰে আৰু জীৱনৰ প্ৰকৃত লক্ষ্যত উপনীত হ'বলৈ সহায় কৰে। শ্ৰীমদ্ভগত গীতা, ভাগৱত পুৰাণ, নামঘোষা আদি শাস্ত্ৰত নিহিত আত্মতত্ত্বৰ অধ্যয়নে মানুহক জীৱনৰ প্ৰকৃত লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্যৰ সন্ধান দিয়ে। ❑

সন্দর্ভসূত্র নির্দেশ ঃ

১. More than 700 000 people die by suicide every year, which is one person every 40 seconds. Suicide is a global phenomenon and occurs throughout the lifespan. (WHO Report) https://www.who.Int/teams/mental-health-and-substance-use/data-research/suicide-data#:~:text=More%20than%20700%20000%20people, and%20occurs%20throughout%20the%20lifespan.
২. শ্রীমদ্ভগৱদগীতা-৩/৪২
৩. শোক ঃ ক্রোধশ্চ লোভশ্চ কামো মোহঃ পৰাসুতা।
ঈর্ষা মানো ৱিচিকিৎসা কৃপাসূয়া জুগুপ্সতা।।
দ্বাদশৈতে বুদ্ধিনাশহেতবো মানসা মলাঃ।
নানাপৰাধানামপি মূলমিতি নেত্যুক্তিঃ। ১৮/৮৪-৮৫ কালিকা পুৰাণ-পৃ ১৭৩
৪.https://en.wikipedIa.org/wiki/Global_ Terrorism_Database
৫. শ্রীমদ্ভগৱদগীতা–৩/৩৪
৬. ভাগৱত পুৰাণ- ৩৫৯৬-৯৭
৭. মনুসংহিতা ২/৯৬
৮. নামঘোষা; পদসংখ্যা-৪৭, ৫০
৯. তত্রৈৱ; পদসংখ্যা-১২৫
১০. তত্রৈৱ; পদসংখ্যা-৮৯
১১. তত্রৈৱ; পদসংখ্যা-৯০
১২. মহাপুৰুষ মাধৱদেৱ বাক্যামৃত পৃ-৪৩৯
১৩. নামঘোষা; পদসংখ্যা-৯১
১৪. তত্রৈৱ; পদসংখ্যা-১৫
১৫. তত্রৈৱ; পদসংখ্যা-৯২
১৬. তত্রৈৱ; পদসংখ্যা-৯৩-৯৫
১৭. শব্দকল্পদ্রুম (খণ্ড-২), পৃ–৫৩৫
১৮. নামঘোষা; পদসংখ্যা-২০৮-২০৯
১৯. তত্রৈৱ; পদসংখ্যা-৬
২০. তত্রৈৱ; পদসংখ্যা - ১-২
২১. ভক্তিৰত্নাৱলী কান্তিমালা টিকা- মঙ্গলাচৰণম্
২২. নামঘোষা; পদসংখ্যা - ৯৬-৯৭
২৩. ভাগৱত পুৰাণ-৩৫৯৪
২৪. ভাগৱত পুৰাণ-৩৫৯৫

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

১. Hazarika(Ed), Devendra nath. Kalika Puran. Bani mandir, GuwahatI, 2008.
২. গোস্বামী, নাৰায়ণ চন্দ্র, সম্পা. নাম-ঘোষা আৰু কীর্তন-ঘোষা, দ্বিতীয় প্রকাশ, ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্টৰচ্, কলেজ হষ্টেল ৰোড, গুৱাহাটী, অসম, ২০০১.
৩. ত্রিপাঠী, কৃষ্ণমণি, সম্পা. ভক্তিৰত্নাৱলী. ডাইৰেক্টৰ, ৱিচার্চ ইন্সটিটিউট, বাৰানসীয় সংস্কৃত বিশ্ববিদ্যালয়, ১৮৯০ শকাব্দঃ.
৪. দত্তবৰুৱা, হৰিনাৰায়ণ, সম্পা. শ্রী ভাগৱত. দত্ত বৰুৱা পাব্লিচিং কোম্পানী প্রাঃ লিঃ, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী, (অসম), ২০১২.
৫. বেম্পটি, কুটুম্ব, সম্পা. শব্দকল্পদ্রুমঃ (১-৬ খণ্ড).ৰাষ্ট্রিয় সংস্কৃত সংস্থান, ইন্ষ্টীট্যুশনেল এৰিয়া, জনকপুৰী, নতুন দিল্লী, ২০০৬.
৬. হাজৱিকা, হৰিপ্রসাদ, সম্পা. মহাপুৰুষ মাধৱদেৱৰ বাক্যামৃত. শ্রীমন্ত শংকৰদেৱ সংঘ, নগাৱ, অসম, ২০০৯.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

হোমেন বৰগোহাঞিৰ ‘হাতী’ আৰু ‘গৰখীয়া’ গল্পত পাৰিৱেশিক চেতনা ঃ এক অধ্যয়ন

ড° জ্ঞানেন্দ্র বর্মন

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়, পানবজাৰ
গুৱাহাটী - ৭৮১০০১
ম'বাইল ঃ ৯৮৬৪৪৪৪৯৮৬
ই-মেইলঃjnanendrabarman9@gmail.com

প্রস্তাৱনা ঃ

মনুষ্যকেন্দ্রিক মতাদর্শই মানুহক ব্রহ্মাণ্ডৰ কেন্দ্রত ৰাখি প্রকৃতিক প্রান্তীয় স্থানলৈ পর্যবাসিত কৰে। ই মানুহ আৰু প্রকৃতিৰ শান্তিপূর্ণ সহ-অৱস্থানক অস্বীকাৰ কৰি প্রকৃতিৰ ওপৰত শোষণক নায্যতা প্রদান কৰিব বিচাৰে। প্রকৃতিৰ অৱক্ষয়ে সমগ্র মানৱ সভ্যতালৈ ভাবুকি কঢ়িয়াই আনিছে।

পৰিৱেশ সংৰক্ষণৰ সজাগতাই সাহিত্য ক্ষেত্রত পাৰিৱেশিক সমালোচনা সাহিত্যৰ উত্থানৰ বাট মুকলি কৰিছে। পাৰিৱেশিক দৃষ্টিকোণেৰে সাহিত্য অধ্যয়নৰ নতুন দিগবিন্যাসৰ ওপৰতো গুৰুত্ব আৰোপ কৰা হৈছে। মনুষ্যকেন্দ্রিক সাহিত্যৰ পৰিৱর্তে প্রকৃতিকেন্দ্রিক সাহিত্যক সন্মুখলৈ আনি সাহিত্যৰ মুখ্য বাগধাৰাত স্থান দিয়া হৈছে।

অসমীয়া সাহিত্যৰ গভীৰ, বস্তুনিষ্ঠ অধ্যয়নে পাৰিৱেশিক চেতনাৰ এক সুঁতি আমাৰ সন্মুখত উন্মোচিত কৰিব পাৰে। আমাৰ প্রস্তাৱিত গৱেষণা প্রবন্ধটিত অসমীয়া সাহিত্যৰ এক প্রখ্যাত লেখক হোমেন বৰগোহাঞিৰ নির্বাচিত দুটি চুটি গল্প - “হাতী” আৰু “গৰখীয়া”ত এই সুঁতি কিদৰে প্রবাহমান হৈ আছে সেয়া পাঠকৰ সন্মুখত উপস্থাপন কৰা হ'ব। উপযোগিতাবাদ আৰু যান্ত্রিকতাৰ আগমনে কিদৰে এই সুঁতিটো মৰা সুঁতিত পৰিণত কৰিব খুজিছে তাৰ ছবিও দাঙি ধৰা হ'ব।

মুখ্য শব্দ ঃ

পাৰিৱেশ চেতনা, হাতী, গৰখীয়া, প্রকৃতি, সহঅৱস্থান ইত্যাদি।

অৱতৰণিকা ঃ

সাহিত্য একাডেমী বঁটা প্রাপ্ত হোমেন বৰগোহাঞি একেধাৰে কবি, গল্পকাৰ, সমালোচক আৰু সাংবাদিক। ১৯৩২ চনত অসমৰ ঢকুৱাখানাত জন্ম লাভ কৰা বৰগোহাঞিয়ে ১৯৫৪ চনত ইংৰাজী বিষয়ত অনার্ছ সহ স্নাতক ডিগ্রী লাভ কৰে। ১৯৫৫ চনত প্রশাসনিক সেৱাৰে কর্মজীৱন আৰম্ভ কৰা বৰগোহাঞিয়ে ১৯৬৮ চনত চাকৰিৰ পৰা পদত্যাগ কৰে আৰু সাংবাদিক জীৱন আৰম্ভ কৰে।

"পিতা-পুত্র", "অন্তৰাগ", "হালধীয়া চৰাইয়ে বাও ধান খায়" আদি তেওঁৰ উল্লেখযোগ্য উপন্যাস। "বিভিন্ন ক'ৰাছ", "প্ৰেম আৰু মৃত্যুৰ কাৰণে", "স্বপ্ন", স্মৃতি আৰু বিষাদ", "গল্প আৰু নক্সা" আদি বৰগোহাঞিৰ উল্লেখযোগ্য গল্প সংকলন। বৰগোহাঞিৰ গল্প সম্পৰ্কত ড° সত্যেন্দ্ৰ শৰ্মাই সঠিকভাৱে উল্লেখ কৰিছে যে 'বৰগোহাঞিৰ গল্পৰ বিষয়বস্তু প্ৰায়েই অসাধাৰণ আৰু সামাজিক ৰাজআলিৰ পৰা আঁতৰৰ অন্ধ গলিৰ মাজত সংঘটিত হোৱা ঘটনা-'বৰগোহাঞিৰ গল্পত মানৱ মনস্তত্ব, অস্তিত্ববাদ, পৰিৱেশ চেতনা আদি সুন্দৰ ৰূপত উপস্থাপন হোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়। সমালোচনাক সকলে বৰগোহাঞিৰ গল্পত সামাজিক চেতনা, চৰিত্ৰৰ অস্বাভাৱিক মনোবৃত্তি, ফ্ৰয়েদৰ মনঃসমীক্ষণ ৰীতিৰ প্ৰভাৱ আদিৰ ওপৰত পৰ্যাপ্ত আলোকপাত কৰিছে যদিও তেওঁৰ গল্পত পাৰিৱেশিক চেতনা সম্পৰ্কে আলোচনা হোৱা নাই।

"হাতী" আৰু "গৰখীয়া" অসমীয়া পাৰিৱেশিক সাহিত্যলৈ হোমেন বৰগোহাঞিৰ অনবদ্য অৱদান। প্ৰকৃতি জগতৰ সৈতে মানুহৰ একাত্মতাৰ চিত্ৰ ইয়াত অংকিত হৈছে।

পাৰিৱেশিক তত্ত্বৰ আলোকত "হাতী" আৰু "গৰখীয়া" ঃ

সাহিত্যত পাৰিৱেশিক তত্ত্বই পৰিবেশৰ লগত মানুহৰ সম্পৰ্কৰ ওপৰত আলোকপাত কৰে। The Ecocriticism Reader ৰ মতে পাৰিবেশিক সমালোচনা সাহিত্য হ'ল সাহিত্য আৰু পৰিবেশৰ সম্পৰ্কৰ অধ্যয়ন। Lawrence Buell ৰ মতেই হ'ল - 'The environmentally oriented study of literature and (less often) the arts more generally and to the theories that underlie such critical practice'.

বৰ্তমান বিশ্বত দেখা দিয়া পৰিবেশ সংকটৰ বাবে মনুষ্য কেন্দ্ৰিক বিচাৰধাৰাক (Anthropocentrism) জগৰীয়া কৰি পৰিবেশ তাত্ত্বিকসকলে পৰিবেশ কেন্দ্ৰিক সমতাবাদৰ পোষকতা কৰে। মনুষ্যকেন্দ্ৰিক বিচাৰধাৰাই মানুহক সকলো বাগধাৰাৰ কেন্দ্ৰত ৰাখি প্ৰকৃতিৰ প্ৰান্তীয় উপস্থিতিক হে মান্যতা দিয়ে, ইয়াৰ দ্বাৰা মানুহ আৰু প্ৰকৃতিৰ সু-সম্পৰ্কক অস্বীকাৰ কৰা হয়। প্ৰকৃতিৰ স্বতন্ত্ৰ বা পবিত্ৰ উপস্থিতিক অস্বীকাৰ কৰি মানুহে প্ৰকৃতি শোষণৰ বাট মুকলি কৰিছে। মনুষ্য কেন্দ্ৰিক বিচাৰধাৰাত মানুহে কৰ্তাৰ (Subject) স্থান লৈ প্ৰকৃতিক কৰ্মৰ (Object) স্থানত ৰাখি উপযোগিতাবাদৰ দৃষ্টিৰে প্ৰকৃতিৰ সম্পদসমূহৰ ওপৰত নিজৰ আধিপত্য চলাই আহিছে। এই বিচাৰধাৰাত মানুহৰ স্বাৰ্থই সকলো, সকলো কথাৰে মুখ্য বিন্দু মানুহ। প্ৰটাগ'ৰাছে কোৱাৰ দৰে, "Man is the measure of all things".

ভাৰতীয় পৰম্পৰাত কৰ্তা-কৰ্মৰ দ্বৈতবাদৰ পৰিৱৰ্তে একাত্মতাৰ স্বৰ শুনিবলৈ পোৱা যায়। মানুহ-প্ৰকৃতি সকলোৰে মাজত এক ব্ৰহ্ম বিদ্যমান। বিচিত্ৰতা এক আপাতঃ দৃষ্টি, অন্তৰ্নিহিত সত্তা এক। শংকৰদেৱ গুৰুজনাই কৈছে, "সুৱৰ্ণ কুণ্ডলে যেন নাহিকে অনন্ত...." জগতৰ সমস্ত প্ৰাণীৰ মাজতে ঈশ্বৰ বিদ্যমান, "জগততো সদা তুমিয়ে প্ৰকাশা অন্তৰ্যামী ভগৱন্ত"। গীতাত ভগৱান শ্ৰীকৃষ্ণই কৈছে,"য়ো মাং পস্যতি সৰ্বত্ৰং, সৰ্বংষ ময়ি পষ্যতিঃ (মই সকলোতে আছো, সকলোখিনি মোৰ মাজতেই আছে)।

ভাৰতীয় অদ্বৈতবাদৰ অনুপ্ৰেৰণাত গভীৰ পৰিবেশ আন্দোলনৰ হোতা আৰ্ণেছে জৈৱকেন্দ্ৰিক সমতা (Biocentric equality) আৰু "আত্মউপলব্ধি"ৰ ওপৰত গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। জৈৱকেন্দ্ৰিক সমতাই সকলো প্ৰজাতিৰ জীৱৰ সমানতাৰ স্বীকৃতি দিয়ে। ই বিশ্বাস কৰে যে সকলো প্ৰজাতিৰ জীৱৰ জীয়াই থকাৰ আৰু নিজস্ব ধৰণে বিকশিত হোৱাৰ অধিকাৰ আছে। মানৱ প্ৰজাতিৰ বা হম' চেপিয়েন্স আন অলেখ প্ৰজাতিৰ ভিতৰত এটা প্ৰজাতি; যুক্তি ক্ষমতাৰ বাবেই মানুহ আন প্ৰজাতিৰ নিয়ন্তা হৈ নাযায়, আন প্ৰজাতিৰ ওপৰত আধিপত্য স্থাপন আৰু শোষনক মানুহে নিজৰ অধিকাৰ হিচাপে লোৱা উচিত নহয়। জীৱকুলৰ এক প্ৰজাতি হিচাপে মানুহৰ অস্তিত্ব আন প্ৰজাতিৰ লগত আন্তঃসম্পৰ্কিত। টেইলৰৰ মন্তব্য এই ক্ষেত্ৰত প্ৰণিধানযোগ্য ঃ "From the perspective of biocentric outlook we see ourselves as biological creatures. Without denying our special abilities or our uniqueness, we nevertheless become fully aware that we are but species of animal life"(Taylor 157)

যুক্তি নহয়, অনুভৱ কৰিব পৰা ক্ষমতাই প্ৰমূল্যভিত্তিক আচৰণৰ ভিত্তি হোৱা উচিত। অনুভৱ কৰিব পৰা পৰা ক্ষমতা কেৱল মানুহৰে নাই আন আন প্ৰজাতিৰ জীৱৰো আছে। পিটাৰ চিংগাৰে সঠিকভাবেই কৈছে, "Humans

are not only beings capable of feeling pain or of suffering . Most non human animals- certainly all the mammals and birds that we habitually eat, like cows, pigs, sheep and chickens- can feel pain"(Singer 67)

Fritz Capra ৰ মন্তব্যও এই ক্ষেত্ৰত প্ৰণিধানযোগ্য ঃ

"...in the emerging theory of living systems, mind is not a thing, but a process.It is cognition, the process of knowing identified with the process of life itself.Thus a bacteriam or a plant has no brain, but has a mind. The simplest organisms are capable of perception and thus of cognition. They donot see but they perceive changes in their environment—differences between light and shadow, hot and cold, higher and lower concentration of some chemicals and the like..."

আধুনিক সাহিত্যত পাৰিবেশিক সাহিত্য তত্ত্ব বা দৰ্শনৰ উত্থান আৰু বিদ্যায়তনিক অধ্যয়ন আৰম্ভ হোৱাৰ আগতেই অসমীয়া সাহিত্যত পৰিবেশকেন্দ্ৰিক বা পাৰিবেশিক চেতনাসম্পন্ন সাহিত্য ৰচনা হোৱা দেখিবলৈ পোৱা যায়। হোমেন বৰগোহাঞিৰ নাম এই ক্ষেত্ৰত প্ৰণিধানযোগ্য। বৰগোহাঞিৰ "হাতী" আৰু "গৰখীয়া" চুটিগল্পৰ সূক্ষ্ম অধ্যয়নে এক গভীৰ প্ৰকৃতি সংবেদশীলতাৰ দিশ উন্মোচিত কৰে। বলোৰামে ডেকা বয়সতে ঘৰলৈ অনা হাতীটো তেওঁৰ বাবে কামৰ উপযোগী এটা জন্তু নহয়; বলোৰামৰ হৃদয়ত হাতী 'বাপধনে বৰপুত্ৰৰ দৰেই এখন আসন পাই আহিছে'। সন্ধিয়া ঘৰলৈ আহি পোৱাৰ লগে লগে বলোৰাম বুঢ়াই আৰম্ভ কৰে 'বাপধনৰ লগত নানা সুখ-দুখৰ কথা বার্তা'। বলোৰাম বুঢ়াই বাপধনৰ সুখ-দুখৰ লগত একাত্ম। বাপধনৰ গাত ঘা দেখি বুঢ়াই চটফটাই উঠিছে ঃ

"ঈস, ঈস তোৰ গাত এইবোৰ ঘা লাগিল কেনেকৈ? ৰাতিয়াটো কম পাষণ্ড নহয়। সি নিশ্চয় তোক ক'ৰবাৰ কাঁইটীয়া জংঘলত সুমুৱাই দিছিলগৈ । তাক মই ইমানকৈ কৈছোঁ- বাপধনৰ গাটো বৰ ভাল নহয়-- এইকেইদিন তাক জংঘললৈ নিব নালাগে।"

বাপধনে ঘৰ আহিয়েই বলোৰাম বুঢ়াক তাৰ স্নেহ স্পৰ্শৰে আহ্লাদিত কৰে ঃ "শুঁৰডাল মেলি সি বুঢ়াৰ কপালখন স্পৰ্শ কৰিলে। বাপধনৰ সেই চিৰ পৰিচিত স্নেহ স্পৰ্শত বুঢ়াৰ কঙ্কাল-সাৰ দেহটো ভৰিৰ পৰা মূৰলৈকে

এটা অদ্ভুত আৱেগত শিহৰিত হৈ উঠিল। হেৰোৱা মণিক বিচাৰি পোৱাৰ দৰে খপ কৰে বাপধনৰ শুঁৰডালত ধৰি তেওঁ পৰম আৱেগেৰে হাত বুলাবলৈ ধৰিলে, যেন বহুদিনৰ মূৰত ঘৰলৈ ঘূৰি অহা পুতেক এটাকহে তেওঁ আদৰ কৰিছে।"

প্ৰকৃতি জগতত আন আন জীৱ বা সত্তাৰ লগত নিজকে চিনাক্ত কৰি মানৱ সত্তাক পাৰিবেশিক সত্তালৈ উত্তৰণ ঘটাব পাৰি। এই চিনাক্তকৰণে মানুহ-প্ৰকৃতিৰ মাজত কর্তা / কর্মৰ সম্পর্কক নির্গঠণ কৰি মানুহ-প্ৰকৃতিৰ সম্পর্কত নৱ দিগবিন্যাসৰ ইংগিত দিয়ে। "হাতী" গল্পত বলোৰাম বুঢ়াৰ বাপধনৰ লগত থকা সম্পর্ক কর্তা / কর্মৰ সম্পর্ক হৈ থকা নাই; এই সম্পর্ক পিতা-পুত্ৰৰ সম্পর্কৰ দৰে হৈ পৰিছে।

চাৰি-কোঠালীয়া ভঁৰাল এটা বিক্ৰী কৰি বলোৰামে হাতাটো কিনি আদৰতে নাম থৈছিল বাপধন। বাপধনে সেইদিন ধৰি বুঢ়াৰ হৃদয়ত বৰপুত্ৰৰ দৰেই এখন আসন পাই আহিছে ঃ "বাপধন বলোৰাম মেধিৰ ঘৰৰ লক্ষ্মী। বাপধনক তেওঁ নয়ণৰ মণি যেন জ্ঞান কৰিবলৈ ধৰিলে। নিজে সদায় আগত থাকি তেওঁ তাৰ গা ধুওৱাই দিয়ে,

যত্ন কৰি আহাৰ খুওৱায়, গধূলি সি ঘৰত সোমোৱাৰ লগে লগে তেওঁ এনেকৈ তাক গা-মূৰ পিটিকি আদৰ কৰি কথা পাতে যে মানুহে শুনিলে ভাবিব -- বহুদিন ধৰি হেৰোৱা পুতেক এটাকহে যেন তেওঁ ঘুৰাই পাইছে।" (বৰগোহাঞিঃ, ২৭৪)

"আচলতে এটা পুতেকতকৈ বাপধনৰ মূল্য তেওঁৰ চকুত কোনোগুণে কম নহয়...." (২৭৫)

কিন্তু বস্তুবাদী বিচাৰধাৰাৰ আগমনৰ লগে লগে এই সম্পৰ্কৰ অৱনতি ঘটিল। গাড়ী মটৰ অহাৰ লগে লগে বাপধনৰ উপযোগীতা কমি আহিল। এতেকে বলোৰাম বুঢ়াৰ পুতেকে বাপধনক বিক্রি কৰি দিয়াৰ কথা চিন্তা কৰিলে। বলোৰামে এই কথা সহজে গ্রহণ কৰিব নোৱাৰিলে; বুঢ়াই চিৎকাৰ কৰি উঠিল, "কি ক'লি? বাপধনক বেছি মটৰ কিনিব খোজা?"

বুঢ়াই (লাহে লাহে) অনুভৱ কৰিলে তেওঁ ঘৰত যেনেকৈ লাহে লাহে অৱহেলিত হৈ আহিছে, বাপধনো ঠিক সমানেই অৱহেলিত।

উপযোগিতাবাদ সৰ্ব্বোচ্চ নতুন পৃথিৱীখন বুঢ়া আৰু বাপধনৰ কাৰণে অপৰিচিত আৰু অনাত্মীয়। বাপধন 'পদুলিত থিয় হৈ থকাটোকো বৰমাইনাহঁতে লাজৰ কথা বুলিহে ভাবিবলৈ ধৰিলে (২৭৬) বাপধনক কেনেকৈ ঘৰৰ পৰা দূৰ কৰিব পাৰি সেই চিন্তাহে পুতেকহতে কৰিব ধৰিলে; চিন্তা কৰি দেখিলে ঠিকাদাৰক হাতীটো ভাৰালৈ দিলে মাহে কেবাশকৈ টকা পোৱা যাব।'

বলোৰাম বুঢ়াই এই কথাবোৰ গ্রহণ কৰিব পৰা নাই; বাপধনে এটা সময়ত বলোৰাম বুঢ়াৰ পৰিয়ালৰ প্রচুৰ সেৱা আগবঢ়াই থৈছে। বাপধন আছিল বলোৰাম মেধিৰ ঘৰৰ লক্ষ্মী, বাপধনে বলোৰামৰ ঘৰলৈ আনি দিছিল অভাৱনীয় প্রতিপত্তি আৰু সন্মান। সেই বাপধনৰ উপেক্ষা, অৱহেলা বুঢ়াৰ সহ্য হোৱা নাই। এতিয়া এই বয়সত হাতীটোক ভাৰালৈ দিব বিচৰা কথাত বুঢ়া ক্ষুণ্ণ হৈছে ঃ "বাপধনে কাঠ-টনা কুলীৰ কাম কৰিব? হে হৰি, কি কথাবোৰ শুনিবলৈ মই ইমান দিন জীয়াই থাকিলোঁ। হেৰ! তহঁতৰ হৈছে কি? বাপধনে তহঁতৰ মূৰত উঠি খাইছে যে তহঁত তাৰ পিছত ইমানকৈ লাগিছ....?"

বৰমাইনাহঁতৰ দৃষ্টিত বাপধন মাত্র এটা পশু--- 'সি পশুৰ কাম কৰিব'। বৰমাইনাহঁতৰ চিন্তা উপযোগীতাকেন্দ্রিক; গতিকে বাপধন বুঢ়া হলেও তাক ঠিকাদাৰলৈ ভাৰা দি পইচা উপার্জন কৰাটোহে অধিক গুৰুত্বপূর্ণ। কিন্তু বলোৰাম বুঢ়াই বাপধনক এই বয়সত কাঠ টনা কামত নিয়োজিত কৰা কথাটো মানি লব পৰা নাই।

মানুহৰ দৰে আন জীৱকুলৰো জীয়াই থকাৰ আৰু বিকাশ লাভ কৰাৰ অধিকাৰ আছে। নিজৰ স্বার্থ পূৰণৰ বাবে প্রকৃতি বা জীৱ জন্তু পক্ষী আদিক আদৰ কৰাটো অগভীৰ চিন্তা। প্রকৃতি মানুহৰ প্রয়োজনৰ বাবে নহয়, নিজৰ বাবেই স্বতন্ত্র ভাবে জীয়াই থকাৰ অধিকাৰ আছে আৰু সেই অধিকাৰক মান্যতা দিয়াৰ প্রয়োজন। যুক্তিৰ আহিলাৰ অধিকাৰী হোৱা বাবেই মানৱে প্রকৃতিৰ ওপৰত শোষন নির্যাতন চলোৱা অনুচিত। ভাৰতীয় সনাতন পৰম্পৰাত ঈশ্বৰৰ কোনোধৰণৰ সৃষ্টিৰ প্রতি অনিষ্ট সাধন নকৰাকৈহে ঈশ্বৰৰ কৰুণা লাভ কৰা সম্ভৱ। বিশিষ্ট লেখক ও পি দ্বিবেদীয়ে এই ক্ষেত্রত বিষ্ণু পুৰাণৰ তৃতীয় খণ্ডৰ অষ্টম অধ্যায়ত উল্লেখ থকা কথালৈ উনুকিয়াইছে ঃ "ভগৱান কেৱল সেই ব্যক্তিৰ প্রতি প্রসন্ন হয় যিয়ে অমতা প্রাণী বা জীৱ জন্তুৰ প্রতি কোনো অনিষ্ট সাধন নকৰে।"

ভাৰতীয় দর্শনত ভগৱানে নিজে বিভিন্ন প্রজাতিৰ প্রাণীৰ ৰূপত অৱতাৰ লৈছে। কৃষ্ণ অৱতাৰত শিশু কৃষ্ণই গ্রাম্য পৰিবেশত সমনীয়াৰ সৈতে গৰু চৰায়; কৃষ্ণৰ বাঁহীৰ সুৰত গৰুবোৰেও আপোন পাহৰা হৈ পৰে; বাঁহীৰ সুৰেৰে গৰুবোৰ ওচৰলৈ মাতে।

প্রকৃতি সুৰক্ষা দৃষ্টিৰে পাৰিবেশিক তাত্ত্বিক সকলে নগৰীয়া জীৱনৰ পৰিৱর্তে গ্রাম্য সৰলতাক গুৰুত্ব দিয়ে। গ্রাম্য জীৱনৰ প্রকৃতিৰ সৈতে মানুহৰ ওচৰ সম্বন্ধ দেখিবলৈ পোৱা যায়। গ্রাম্য জীৱনৰ মধুৰতাক বহু পৰিমাণে প্রতিনিধিত্ব কৰে গৰখীয়া জীৱনে। প্রকৃতি সুৰক্ষাৰ দৃষ্টিভঙ্গীৰে সেয়েহে গৰখীয়া জীৱনৰ বিশেষ গুৰুত্ব আছে। গৰখীয়া বা চহা সাহিত্যই সেয়েহে নগৰীয়া জীৱনৰ পৰিৱর্তে গ্রাম্য জীৱনক আদর্শ ৰূপত দাঙি ধৰে। হোমেন বৰগোহাঞিৰ "গৰখীয়া" নামৰ গল্পটিত গ্রাম্য জীৱনৰ সৰলতাৰ লগতে মানুহ আৰু আন জীৱৰ মাজত একাত্ম সম্পৰ্কৰ এক সুন্দৰ চিত্র অংকিত হেছে।

গল্পটোৰ আৰম্ভণিতে আমি চহা মালিতাৰ সুৰ প্ৰতিধ্বনিত হোৱা দেখিবলৈ পাওঁ। এই সুৰ ধ্বনিত হৈছে মুখ্য চৰিত্ৰ বুধিৰামৰ ক্ৰন্দনত। বুধিৰাম অকণহঁতৰ ঘৰত পাঁচ বছৰ ৰখীয়া হৈ আছিল। এতিয়া সি অকণহঁতৰ ঘৰৰ পৰা যাবলৈ; চিৰদিনৰ কাৰণে। অকণহঁতৰ ঘৰত পোৱা চেনেহ আৰু গৰখীয়া জীৱনত লগৰীয়াৰ পৰা পোৱা মৰম চেনেহে তাক আপ্লুত কৰি ৰাখিছিল ৫ বছৰ ধৰি। এতিয়া বিদায় বেদনা অনুভৱ কৰি সি কান্দিছে। অকণহঁতৰ পৰিয়ালৰ সদস্যবোৰৰ লগতে ওচৰ চুবুৰীয়াই আৰু গাই গৰুবোৰৰ লগত বুধিৰামৰ অন্তৰ আত্মাৰ নিবিড় সম্পৰ্ক গঢ় লৈ উঠিছিল। এই সকলোবোৰ এৰি থৈ সি গুচি যাব; সেয়েহে বুকুত এক শূন্যতা অনুভৱ কৰিছে বুধিৰামে।

কাতিমাহৰ মাজভাগত বিদায়ৰ আগদিনা বুধিৰামে শেষবাৰৰ কাৰণে অকণৰ লগত গৰু বিচাৰিবলৈ যায়। তেতিয়া শালিধানৰ পথাৰবোৰত ধানবোৰ গাখীৰতী হবলৈ আৰম্ভ কৰিছে মাত্ৰ। ইয়াত আমি গাঁৱলীয়া কৃষি প্ৰধান সমাজ এখনৰ ছবি দেখিবলৈ পাওঁ।

অকণৰ লগত গৰু আনিবলৈ যাওঁতে বিড়ি হুপি কথা পাতি অতীতৰ দুই এটা স্মৃতি ৰোমন্থন কৰি থাকোতে ক্ষণিকৰ বাবে বুধিৰামে বিদায়ৰ কথা পাহৰি আছিল; তাৰ এই মৰমৰ লগৰীয়াবোৰৰ, গৰু গাইবোৰ আৰু গাওঁখন এৰি থৈ সি যে কাইলৈ চিৰকালৰ কাৰণে গুচি যাব লাগিব সেই কথা বেছ কিছু সময়ৰ কাৰণে সি পাহৰিয়েই গৈছিল। ডম্বৰুৰ কথাত তাৰ কথাযাৰ মনত পৰিল আৰু দুই চকু পানীৰে ভৰি পৰিল। বুধিৰামে কনটিলোৰ ভনীয়েক বগীতৰাক প্ৰাণ ভৰি ভাল পাইছিল কিন্তু তাৰ ভালপোৱা প্ৰকাশ নকৰাকৈয়ে সি বিদায় লৈ গুচি যাব চিৰদিনৰ কাৰণে। গৰু লৈ ঘৰলৈ ওভোতাৰ পথত গোৱা বনঘোষাটো বিদায়ৰ কৰুণ সুৰ ধ্বনিত হ'ল ঃ

ম'হৰ গাখীৰ খিৰালো কলীয়া ভৰালোঁ
গৰু গাখীৰ খীৰালো ৰৈ
হাঁহিবৰ চলেৰে কান্দি থৈ আহিলো
তোমাৰ পদুলিত গৈ।

বুধিৰামৰ বুকুভৰা সুৰেৰে গোৱা 'হাঁহিবৰ চলেৰে কান্দি থৈ আহিলো, তোমাৰে পদুলিত ৰৈ' গীতফাঁকিয়ে যেন এক কৰুণ সুৰ তুলিলে লগৰীয়াবোৰৰ বুকুত । ঘৰ পায়েই বুধিৰামে গোহালিত সোমাই তাৰ মৰমৰ গৰুবোৰক মাত লগালে ঃ "দঁহা নামৰ গৰুটোৰ ডিঙিটোত দুই হাতেৰে সাৱতি ধৰি আলফুলকৈ তাৰ গালখনত চুমা খাই উঠি উচুপি উচুপি তাৰ কাণৰ কাষত কবলৈ ধৰিলে,"দঁহা , অ দঁহা , মই যে তহতক এৰি থৈ একেবাৰে গুচি যামগৈ সেই কথা গম পাইছ নে নাই, ইহ জনমত আৰু কেতিয়াও তই মোক দেখিবলৈ নাপাবি , সেই কথা জানিছনে নাই?"

ইয়াত 'মানুহ-জন্তু'ৰ দ্বৈতৰূপক সম্পৰ্কৰ ঠাইত দুটি সত্তাৰ আপোন সম্পৰ্কৰ ছবি ফুটি উঠিছে। এই সম্পৰ্কত যেন কোনো অনুক্ৰম (Hierarchy) নাই। বুধিৰামৰ বিদায় বিলাপ দঁহায়েও বুজিছে । সি ঘাঁহ পাগুলিয়াবলৈ এৰি স্থিৰ হৈ বুধিৰামৰ বিহ্বল, স্নেহ স্পৰ্শৰ ওচৰত আত্ম সমৰ্পণ কৰিলে। তাৰ পিছতে কজলা আৰু আন গৰু কেইটাৰ ওচৰলৈ গৈ সি তাৰ বিদায় বাৰ্তা দিলেগৈ । সি অনুভৱ কৰিলে যি জাক গৰু-গাই তাৰ জীৱনৰ দীঘলীয়া পাঁচটা বছৰৰ প্ৰতিটো উশাহ নিশাহৰ সঙ্গী আছিল সিহঁতৰ লগত এয়েই তাৰ শেষ দেখা, হঠাৎ ধুমুহাত কঁপা পথাৰৰ মাজত অকলশৰীয়া গছৰ দৰে তাৰ গাটো থৰথৰকৈ কঁপি উছিল আৰু সি গৰু বন্ধা খুটা এটা জোৰকৈ সাৱটি ধৰিলে। ইয়াত গ্ৰাম্য জীৱনত মানুহ আৰু আন প্ৰাণীৰ চেনেহৰ যি পবিত্ৰ সম্পৰ্ক ফুটি উঠিছে সিয়ে "গৰখীয়া" গল্পক সোণালীযুগৰ প্ৰতিনিধিত্ব কৰা এক শিল্পলৈ উন্নীত কৰিছে।

উপসংহাৰ ঃ

ওপৰক্ত আলোচনাৰ পৰা অসমীয়া সাহিত্যত মানুহ আৰু প্ৰকৃতি জগতৰ জীৱকুলৰ মাজত থকা সু-সম্পৰ্কৰ এক বাগধাৰা সুস্পষ্ট ৰূপত দেখিবলৈ পোৱা যায়। হোমেন বৰগোহাঞিৰ "হাতী" আৰু "গৰখীয়া" গল্পত উপস্থাপন হোৱা মানুহ আৰু প্ৰকৃতি জগতক প্ৰতিনিধিত্ব কৰা হাতী , গৰুৰ সম্পৰ্কই এক সোণালী যুগক প্ৰতিনিধিত্ব কৰে বুলি কব পাৰি।

পাৰিৱেশিক দৃষ্টিৰে "হাতী" গল্পৰ সূক্ষ্ম অধ্যয়নে

কেবাটাও দিশ আমাৰ সন্মুখত উন্মোচিত কৰে-

ক) পৰম্পৰাগত অসমীয়া সমাজত ব্যৱসায়িক কাৰণে হাতীৰ ব্যৱহাৰ হৈছিল যদিও হাতীক মানৱীয় মর্যদাৰে পৰিয়ালৰ এজন সদস্যৰ দৰে আচৰণ কৰা হৈছিল। "হাতী" গল্পত বাপধন নামৰ হাতীটো বলোৰাম বুঢ়াৰ সন্তানৰ দৰেই আদৰৰ আছিল। বাপধনেও বলোৰামৰ মৰম চেনেহক সঁহাৰি দিছিল, বলোৰাম বুঢ়াৰ অপত্য স্নেহ বাপধনে অনুভৱ কৰিব পাৰিছিল।

খ) উপযোগীতাবাদ আৰু যান্ত্রিকতাৰ গুৰুত্ব বঢ়াৰ লগে মানুহৰ মানৱীয় প্রমূল্যৰ ঠাই ল'লে লাভ-লোকচানৰ হিচাপ নিকাচে। বলোৰাম বুঢ়াৰ পুতেকে বয়স হোৱা বাপধনক এক বোজা যেন জ্ঞান কৰি তাক বিক্রী কৰাৰ কথা বিবেচনা কৰিছে অন্যথা ঠিকাদাৰক ভাড়ালৈ দিব খুজিছে। বাপধনক পুত্রসম জ্ঞান কৰা বলোৰাম বুঢ়াৰ বুকুৱে কান্দিছে যদিও তেওঁ অসহায় অনুভৱো কৰিছে।

গ) বলোৰাম-বাপধনৰ সম্পর্কই মানুহ প্রকৃতিৰ সমন্বয়ৰ সুঁতিক প্রতিনিধিত্ব কৰিছে। এই সুঁতিটো শক্তিশালী হ'লেহে প্রকৃতিৰ সৈতে ভাৰসাম্য ৰক্ষা কৰি এক সমমাত্রিক সমাজৰ কল্পনা কৰিব পাৰি।

আমাৰ আলোচ্য আনটো গল্প "গৰখীয়া"তো কেবাটাও গুৰুত্বপূর্ণ দিশ উন্মোচিত হোৱা দেখা যায় -

ক) "হাতী" গল্পৰ দৰে ইয়াতো মানুহ। প্রকৃতিৰ দ্বৈত ৰূপক (Binary) সম্পর্ক নির্গঠন হৈ মানুহ আৰু প্রকৃতি জগতক প্রতিনিধিত্ব কৰা গৰুৰ মাজত একাত্ম বা অভিন্ন এক সম্পর্ক দেখিবলৈ পোৱা যায়। বুধিৰামৰ গাই গৰুবোৰৰ লগত যি একাত্ম সম্পর্ক স্থাপন হৈছে সেই সম্পর্কই গল্পটোক এক শিল্পৰ পর্যায়লৈ উন্নীত কৰিছে।

খ) "দঁহা", "কজলা", "মাজুলিয়াল" আদিৰ লগত মানুহ-জন্তুৰ নহয়, মানুহৰ লগত যেন মানুহৰ সম্পর্কৰ ছবিহে দেখিবলৈ পোৱা যায়। বুধিৰামৰ 'উশাহ নিশাহ'ৰ সঙ্গী আছিল সিহঁতবোৰ যাক এৰি সি গুচি যাব চিৰদিনলৈ। চহা জীৱনৰ এক চিত্র ইয়াত দেখিবলৈ পোৱা যায় য'ত যান্ত্রিকতাৰ আচোঁৰ পৰা নাই। ❑

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

১। Borgohain, Homen. *35 short stories.* Guwahati: Student's stores 2013
২। Capra, Fritjof.*The Web of Life:A New Scientific Understanding of Living Systems.*New York:Anchor Books, 1996.
৩। Devall, Bill and George Sessions.*Deep Ecology:Living as if Nature Mattered.*Salt Lake City, Utah:Peregrine Smith, 1985.
৪। Garrard, Greg.*Ecocroticism.*London and New York:Routledge,2004.
৫। Glotfelty, C and Fromm, H.(eds).*The Ecocriticism Reader:Landmark in Literary Ecology.* London:University of Georgia Press,1996.
৬। Naess, Arne.*Ecology, Community and Lifestyle.*New York:Cambridge UP,1989.
৭। Singer, Peter.*Practical Ethics.Cambridge:*Cambridge University Press,2011
৮। Taylor, Paul W.*Respect for Nature.*Princeton and Oxforn: Princeton University Press,1986

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

ৰাজবালা দাসৰ আত্মজীৱনীত আত্মসত্তাৰ ৰূপায়ণ

ড° স্মৃতি ৰেখা ভূঞা

সহযোগী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী মহাবিদ্যালয়
ডাক ঃ বামুনীমৈদাম
পিন ঃ ৭৮১০২১, অসম
ম'বাইল ঃ ৯১০১৩৭৯২৩৮
ই-মেইলঃ smritirekhans@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসমীয়া আত্মজীৱনীৰ ইতিহাস ঊনবিংশ শতিকাতে আৰম্ভ হ'লেও মহিলা লিখকৰ আত্মজীৱনীৰ ইতিহাস কিন্তু পুৰণি নহয়। প্ৰথম অসমীয়া মহিলা লিখকৰ আত্মজীৱনী গ্ৰন্থ হৈছে ৰাজবালা দাসৰ 'তিনিকুৰি দহ বছৰৰ স্মৃতি'। সাহিত্যৰ অন্যতম গুৰুত্বপূৰ্ণ শাখা আত্মজীৱনী হৈছে এজন ব্যক্তিৰ আত্মনিষ্ঠ ৰচনা। লিখকে নিজৰ জীৱনৰ আৰু মনৰ এটা বিশেষ অৱস্থাত নিজক যিদৰে উপলব্ধি কৰে আত্মজীৱনীত সেই ৰূপটোকেই পাঠকে দেখিবলৈ পায়। গতিকে আত্মজীৱনী এজন ব্যক্তিৰ কেৱল জীৱনৰে প্ৰকাশ নহয়, ই তেওঁৰ ব্যক্তিত্বৰো প্ৰকাশ। আনহাতে মহিলা লিখকৰ আত্মজীৱনীত পুৰুষৰ আত্মজীৱনীতকৈ ব্যক্তিত্বৰ সত্য ৰূপৰ উদং উপস্থাপনত সমস্যা অনেক। ৰাজবালা দাসৰ আত্মজীৱনীখনত এগৰাকী মহিলা হিচাপে লিখকে কিদৰে নিজক তাত ৰূপায়ণ কৰিছে, ব্যক্তি হিচাপে আত্মজীৱনীখনৰ কেন্দ্ৰীয় বিষয় দাসৰ ব্যক্তিত্বৰ স্বতন্ত্ৰতা কিদৰে প্ৰকাশ পাইছে সেয়া নিৰ্ণয় কৰাই হৈছে এই গৱেষণা-পত্ৰৰ উদ্দেশ্য। ব্যক্তিগত আৰু সামাজিক পৰিসৰৰ বিভিন্ন কাম, চিন্তা, বিভিন্ন পৰিস্থিতিত এজন ব্যক্তিয়ে গ্ৰহণ কৰা অৱস্থান আদিৰ ভিত্তিতেই একোজন ব্যক্তিৰ আত্মসত্তাৰ এটা পৰিচয় বা ৰূপ নিৰ্মিত হয়। ৰাজবালা দাসৰ আত্মজীৱনী 'তিনিকুৰি দহ বছৰৰ স্মৃতি'ত দাসৰ ব্যক্তিসত্তাৰ কি ৰূপ নিৰ্মিত হৈছে সেয়া এই আলোচনাৰ জৰিয়তে স্পষ্ট হৈ উঠিব।

সূচক শব্দ ঃ

মহিলা লিখক, আত্মজীৱনী, আত্মসত্তা, ব্যক্তিত্ব ইত্যাদি।

আৰম্ভণি ঃ

সমগ্ৰ ভাৰতীয় আত্মজীৱনী সাহিত্যৰ ইতিহাসলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে ভাৰতীয় আত্মজীৱনীয়ে পুৰুষ লিখকৰ হাতত এক চহকী ৰূপ লৈ প্ৰকাশ হোৱাৰ বহু পিছতো মহিলা লিখকসকল আত্মপ্ৰকাশৰ বাবে প্ৰস্তুত হ'ব পৰা নাছিল। সমাজ আৰু চৌপাশৰ বাতাৱৰণ তেওঁলোকৰ অনুকূলে নথকাৰ বাবেই আত্মজীৱনী লিখিবলৈ মহিলাসকলে সাহস গোটাব পৰা নাছিল। ১৮৭৬ চনত ৰাসসুন্দৰী দাসীৰ 'আমাৰ জীৱন' প্ৰকাশৰ লগে লগে মহিলা লিখকৰ আত্মজীৱনীৰ ইতিহাস আৰম্ভ হ'ল। কিন্তু এই ইতিহাসলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে অনেক সময়তে মহিলাসকলে সম্পূৰ্ণ বিশুদ্ধ ৰূপত নিজক

উদঙাই দেখুওৱাৰ সংকোচ অতিক্রম কৰিব পৰা নাছিল। এটা কথা তেওঁলোকে জানিছিল যে মহিলা হিচাপে সমাজত মুখামুখি হোৱা সকলো প্রকাৰৰ সমস্যা, সংঘাত উদঙাই দেখুৱাবলৈ হ'লে সমাজতো বাদেই তেওঁলোকৰ নিজা পৰিয়াল আৰু ঘৰৰ পৰাও বিৰোধ আৰু নিন্দাৰ সন্মুখীন হোৱাৰ সম্ভাৱনাই অধিক। একান্ত নিজা পৰিয়ালৰ সৈতে হ'ব পৰা ব্যক্তিগত পর্যায়ৰ সংঘাত অথবা সামাজিক গঞ্জনা আৰু মুখলজ্বাৰ মুখামুখি হ'ব পৰাকৈ দৃঢ় হ'বলৈ ভাৰতীয় মহিলা লিখকসকল প্রস্তুত নথকাৰ বাবেই ব্যক্তিজীৱনৰ অনেক ৰূপ আত্মজীৱনীৰ পৰা দূৰৈত ৰাখিহে তেওঁলোকে আত্মজীৱনী লিখাত প্রবৃত্ত হৈছিল। অসমীয়া আত্মজীৱনীৰ ক্ষেত্রতো এই একেটা কথাই প্রযোজ্য। হৰকান্ত বৰুৱা সদৰামীনৰ হাতত ঊনবিংশ শতিকাত আৰম্ভ হোৱা ডায়েৰী ধর্মী লেখাই হেমচন্দ্র বৰুৱা, লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱা, পদ্মনাথ গোহাঞিঁ বৰুৱা আদিৰ হাতত স্পষ্ট ৰূপত প্রকাশ লাভ কৰিলেও অসমীয়া মহিলা লিখকৰ প্রথমখন আত্মজীৱনী পুথি প্রকাশ হ'ল ১৯৭১ চনতহে। সমগ্র ঊনবিংশ শতিকাত এনেধৰণৰ গ্রন্থৰ সম্ভেদ পোৱা নাযায়। অসমীয়া মহিলাৰ আত্মপ্রকাশৰ সংকোচ অথবা আত্মপ্রকাশৰ অনুকূল পৰিবেশৰ সৃষ্টি নোহোৱাৰ বাবে আমি ঊনবিংশ শতিকাৰ মহিলাৰ ব্যক্তিত্ব, জীৱন আদি বিস্তৃত ৰূপত অসমীয়া আত্মজীৱনী সাহিত্যত দেখাৰ সুযোগ নাই। ১৮৯৩ চনত জন্ম লাভ কৰা ৰাজবালা দাসৰ আত্মজীৱনীত আমি ঊনবিংশ শতিকাৰ সমাজ আৰু সেই সমাজৰ সদস্য হিচাপে ৰাজবালাই সমকালীন পৰিবেশৰ মাজত থাকি স্বসত্তাক কিদৰে গঢ় দিছিল সেয়া দেখিবলৈ পাওঁ।

গৱেষণা-পত্রৰ লক্ষ্য আৰু উদ্দেশ্য ঃ

ৰাজবালা দাসৰ আত্মজীৱনীত লিখকৰ ব্যক্তিত্বৰ স্বকীয় ৰূপ কিদৰে নির্মিত হৈছে সেয়া অন্বেষণ কৰাই হৈছে এই গৱেষণা-পত্রৰ মুখ্য উদ্দেশ্য। লিখক গৰাকী নিজা চিন্তাৰে পৰিচালিত এগৰাকী ব্যক্তি আছিল নে সমাজ নির্ধাৰিত সকলো কথাৰ অনুগামী আছিল সেয়া নির্ধাৰণ কৰাটো আমাৰ এক প্রধান লক্ষ্য। আনহাতে পৰিয়ালৰ সৈতে সম্পর্কৰ ক্ষেত্রত দাসৰ অৱস্থান স্বকীয়তা প্রকাশক হয় নে নহয় সেয়াও গৱেষণা-পত্রখনত উন্মোচন কৰাৰ চেষ্টা কৰা হ'ব। সামাজিক অথবা ব্যক্তিগত বিষয়ৰ উপস্থাপনৰ সময়ত লিখক দাসৰ অৱস্থান ক'ত সেয়া ব্যক্তিত্বৰ ৰূপ নির্ণয়ৰ ক্ষেত্রত গুৰুত্বপূর্ণ উপকৰণ। ৰাজবালা দাসে সেই পৰিসৰৰ সদস্য হিচাপে বিষয়সমূহৰ সৈতে নিজক সংপৃক্ত কৰি নিজা দৃষ্টিৰে বর্ণনা আগবঢ়াইছে নে তেওঁ কেৱল এজন কথকহে সেয়াও আলোচনাৰ জৰিয়তে নির্ণয় কৰাটো আমাৰ অন্যতম উদ্দেশ্য। অর্থাৎ আত্মজীৱনীখনৰ কেন্দ্রীয় চৰিত্রৰ পৰিয়ালকেন্দ্রিক স্থিতি, সামাজিক স্থিতি আৰু লিখক হিচাপে স্থিতি এই তিনিটা দিশৰ পৰা আত্মসত্তাৰ ৰূপ নির্ণয় কৰা আমাৰ লক্ষ্য।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি, পৰিসৰ আৰু সমল সংগ্ৰহ ঃ

আত্মজীৱনীৰ আধাৰত ৰাজবালা দাসৰ আত্মসত্তাৰ ৰূপ নিৰ্ণয় কৰিবলৈ যাওঁতে প্ৰধানকৈ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে। এইক্ষেত্ৰত আমাৰ মুখ্য উৎস হ'ল 'তিনিকুৰি দহ বছৰৰ স্মৃতি' গ্ৰন্থখন। দাসৰ আত্মজীৱনীৰ পৰা সমল সংগ্ৰহ কৰি সেইসমূহৰ বিশ্লেষণৰ আধাৰত তেওঁৰ আত্মসত্তাৰ ৰূপ বৰ্ণনাত্মকভাৱে তুলি ধৰা হৈছে। ৰাজবালা দাসৰ স্বসত্তাৰ ৰূপ নিৰ্ণয়ৰ ক্ষেত্ৰত আত্মজীৱনীখনৰ মাজতে অধ্যয়নৰ পৰিসৰ নিৰ্দিষ্ট কৰা হৈছে।

বিষয় বিশ্লেষণ ঃ

আত্মজীৱনীত সাধাৰণতে দুই ধৰণৰ ৰীতি পৰিলক্ষিত হয়। কেতিয়াবা লিখকৰ ব্যক্তিগত জীৱন কাহিনীয়ে তাত প্ৰাধান্য লাভ কৰে আৰু সেই ব্যক্তিগত কথাৰ গাত ভেজা দি তেওঁৰ সামাজিক জীৱনটো ৰচনালৈ আহে। আনহাতে কেতিয়াবা আকৌ লিখকৰ লক্ষ্য নিৰ্দিষ্ট হৈ থাকে কেৱল তেওঁৰ সামাজিক বা বহিঃজীৱনতহে। ব্যক্তিগত জীৱনৰ চিত্ৰায়ণ তেওঁৰ লক্ষ্যৰ ভিতৰত নাথাকে। সামাজিক ক্ৰিয়া-কলাপৰ মাধ্যমেৰে লিখকৰ বক্তিজীৱনৰ যিখিনি কথা অপৰিহাৰ্যভাৱে আত্মজীৱনীত সোমাই পৰে পাঠকে সিমানখিনিহে ব্যক্তিগত জীৱনত দেখিবলৈ পায়। 'তিনিকুৰি দহ বছৰৰ স্মৃতি' ৰচনাৰ ক্ষেত্ৰত লিখকৰ প্ৰধান অৱলম্বন হ'ল তেওঁৰ ৰাজহুৱা জীৱন। আনহাতে তেওঁৰ মুখ্য লক্ষ্য কঠোৰভাৱে নিৰিষ্ট হৈ আছে উনবিংশ শতিকাৰ নাৰীৰ জীৱন আৰু শিক্ষাৰ পৰিবেশ পোহৰলৈ অনাত। যিসকল ব্যক্তিয়ে বিভিন্ন প্ৰকাৰে উদ্যোগ লৈ অসমত নাৰীৰ উচ্চ শিক্ষাৰ পৰিবেশ ৰচনা আৰু বিস্তাৰৰ বাবে কষ্ট কৰিছিল সেইসকলৰ ভিতৰত অন্যতম আছিল ৰাজবালা দাস। আত্মজীৱনীখনেও এটা কথা স্পষ্টভাৱে প্ৰমাণ কৰে যে তেওঁৰ জীৱন সংক্ৰান্তীয় আন কোনো দিশ উপস্থাপন কৰাটো তেওঁৰ উদ্দেশ্য নহয়। সমকালীন অসমৰ নাৰীৰ অৱস্থা আৰু শিক্ষাৰ পৰিবেশ দেখুওৱাটোৱেই তেওঁৰ ঘাই লক্ষ্য আৰু তাকে কৰিবলৈ যাওঁতে নিজৰ জীৱনৰ পৰা যিসমূহ ঘটনা নিৰ্বাচন কৰি লোৱা দৰকাৰ সেইসমূহকেই তেওঁ আত্মজীৱনীলৈ আনিছে। আত্মজীৱনীৰ বাবে নিৰ্বাচিত এই ঘটনাসমূহৰ মাধ্যমেৰে দাসৰ স্বসত্তাৰো বিভিন্ন দিশ উন্মোচিত হৈছে।

লিখকৰ শৈশৱৰ বৰ্ণনাত দেখা গৈছে যে সেই সময়ত তেনেই সৰু থাকোঁতেই ছোৱালী এজনীক কঠোৰ সামাজিক নিয়মেৰে বান্ধি পেলোৱা হৈছিল। তেওঁৰ দহ-এঘাৰ বছৰীয়া বায়েকে এদিন বাটেদি যোৱা শোভাযাত্ৰা চাবলৈ ভনীয়েকহঁতৰ লগত আগফালে দৌৰ মাৰোতে কি পৰিবেশ হৈছিল সেয়া তেওঁ উল্লেখ কৰিছে।[১] কাৰণ তিৰোতামানুহ আনকি বায়েকৰ বয়সৰ ছোৱালীও আগচোতাললৈ ওলোৱা নিষেধ। দেখা যায় যে এগৰাকী সৰু ছোৱালী হিচাপে ৰাজবালা দাসো ঘৰৰ প্ৰচলিত কঠোৰ নিয়মৰ অধীন আছিল। এইসমূহৰ উচিত-অনুচিত বিচাৰ কৰিব পৰা বয়স তেওঁৰ নাছিল। অৰ্থাৎ ৰাজবালা দাস ইয়াত সম্পূৰ্ণভাৱে এগৰাকী মাক-দেউতাক আৰু ঘৰুৱা অনুশাসন অনুগামী জীয়াৰী। স্বতন্ত্ৰ এক ব্যক্তিসত্তাৰ বিকাশ হ'ব পৰাকৈ তেওঁৰ বয়সো হোৱা নাছিল। পৰৱৰ্তী সময়তো তেওঁ এগৰাকী আদৰ্শ জীয়েকৰ ভূমিকাতে বিভিন্ন সময়ত অৱতীৰ্ণ হৈছে। কিন্তু লিখক হিচাপে এটা পৰিপক্ক বয়সত যেতিয়া তেওঁ এইসমূহৰ বৰ্ণনা আত্মজীৱনীখনত দাঙি ধৰিছে তেতিয়াও এটা সৰ্ব স্থিতি গ্ৰহণ কৰা নাই। নাৰীৰ জীৱনক বান্ধি পেলোৱা ঘৰৰ তেনেবোৰ নিয়মৰ বিৰোধিতা কৰাৰ প্ৰমাণ আত্মজীৱনীত অনুপস্থিত। বিষয়সমূহৰ পৰা দূৰত অৱস্থান কৰি লিখকে কেৱল বৰ্ণনা আগবঢাইছে। লিখক তাৰ অংগীভূত হোৱা নাই। অৰ্থাৎ দহ-এঘাৰ বছৰীয়া বায়েকক আগচোতাললৈ যাবলৈ নিদিয়া কথাকে ধৰি ঘৰৰ আন বিভিন্ন বিষয়ৰ বৰ্ণনাৰ ক্ষেত্ৰত স্বসত্তাৰ স্থিতি দুৰ্বল। মাক-দেউতাকৰ বিচাৰ বা ঘৰুৱা সিদ্ধান্তৰ শক্তিশালী বিৰোধ কোনো বিষয়তে ক'তোৱেই তেওঁ কৰা নাই।

ঘৰুৱা ৰীতি-নীতিৰ অনুগামী স্থিতিত থাকিলেও ৰাজবালা দাসক সৰুতেও অৱশ্যে সমাজৰ কিছুমান বিষয়ে মনোকষ্ট দিছিল। তেওঁ দেখিছিল যে ছোৱালীবোৰক তেনেই সৰুতেই বিয়া দিয়াটো আছিল সামাজিক নিয়ম। আনকি কন্যাকাল হোৱাৰ আগতে উপযুক্ত দৰা নাপালে ঘৰখন সমাজৰ ৰোষত পৰাৰ ভয়ত নিজৰ পিতৃৰ বয়সৰ দৰালৈকো ছোৱালীক বিয়া দিয়া হৈছিল। কিশোৰী বিধবাৰ জীৱনৰ অবৰ্ণনীয় দুখ দুৰ্দশা দেখি নাৰীক সেই অৱস্থাৰ পৰা মুক্তি দিয়াৰ বাবে

তেওঁৰ মনত তীব্ৰ হেঁপাহ সৃষ্টি হৈছিল। অৰ্থাৎ ঘৰুৱাভাৱে বায়েক বা তেওঁৰ ওপৰত আৰোপ কৰা সেইসময়ৰ কঠোৰ অনুশাসনৰ বিৰোধ কৰাৰ কথা তেওঁৰ মনলৈ অহা নাছিল যদিও যিবোৰ নিয়মে ছোৱালীৰ জীৱনৰ প্ৰচুৰ ক্ষতি কৰে সেইবোৰৰ অন্ত পৰাটো বিচাৰিছিল।[২] লিখকৰ এক স্বতন্ত্ৰ ব্যক্তিত্বই এই খিনিৰ পৰাই আত্মজীৱনীখনত বিকাশ লাভ কৰিলে। ছোৱালীবোৰৰ সৰুতে বিয়া নহওক, বিনা কাৰণত এক দুৰ্দশাৰ জীৱন সিহঁতৰ ওপৰত আৰোপ কৰা প্ৰথাৰ পৰা ছোৱালীবোৰে মুক্তি পাওক, শিক্ষা ছোৱালীৰ বাবে অপৰিহাৰ্য হওক সেয়াই আছিল তেওঁৰ ইচ্ছা। পৰিবেশে ৰাজবালাৰ মনত সৃষ্টি কৰা অসন্তুষ্টিৰ বাবেই তেওঁৰ নিজৰ এটা চিন্তা এইক্ষেত্ৰত গঢ় লৈছিল।

সেইসময়ত তিৰোতাই ৰাজ আলিয়েদি খোজ কাঢ়ি যোৱা নিয়ম নাছিল। একেলগে দুই-তিনিগৰাকী লগ হৈহে ইফালে-সিফালে গৈছিল। গুৰুত্বপূৰ্ণ কামৰ দায়িত্ব তিৰোতাক দিয়া নহৈছিল। সম্ভ্ৰান্ত ঘৰৰ ছোৱালীক স্কুলত পঢ়িবলৈ নপঠিয়াইছিল। যিটো বয়সত ছোৱালী পঢ়াশালিলৈ যোৱা দৰকাৰ সেই সময়ত ছোৱালীবোৰক ঘৰুৱা কাম-কাজ শিকাই বিয়া দিয়া হৈছিল।[৩] এই গোটেই কথাবোৰ বৰ্ণনাৰ সময়ত লিখক নিজৰ লক্ষ্যত কঠোৰ। তেওঁ কেৱল দেখুৱাব বিচাৰিছে সমকালীন নাৰীৰ জীৱন। কিন্তু শৈশৱৰ এই পৰিস্থিতিসমূহত ৰাজবালা দাসে সক্ৰিয় হৈ বিৰোধিতা কৰাৰ উদাহৰণ যিদৰে নাই সেইদৰে লিখক হিচাপেও এইসমূহৰ বিপক্ষে মাত মতাৰ কোনো উল্লেখ নাই। অৰ্থাৎ লিখকৰ নিৰ্লিপ্ত অৱস্থানে সেইসময়ত তেওঁৰ ব্যক্তিত্বৰ স্বতন্ত্ৰ ৰূপক তুলি ধৰা নাই।

ৰাজবালা দাসে নাৰীৰ নৰকময় জীৱনৰ পৰা মুক্তিৰ আশা কৰিলেও নিজৰ জীৱনৰ শিক্ষাৰ বাবে প্ৰথম অৱস্থাত তেওঁ নিজে সক্ৰিয় হোৱা নাছিল। তাৰ পৰিৱৰ্তে ককায়েকেহে এই ক্ষেত্ৰত উদ্যোগ লৈছিল। ককায়েকে নিজে বেথুনত হেমপ্ৰভা দাসৰ লগত ৰাখি পঢ়ুৱাবলৈ উদ্যোগ লৈ তেওঁক কলিকতালৈ লৈ গৈছিল। এই ক্ষেত্ৰত ৰাজবালাৰ ভূমিকা নিস্ক্ৰিয়। তেওঁ নিজে সক্ৰিয় হৈ সকলো প্ৰতিকূলতা অতিক্ৰম কৰি বেথুনলৈ যোৱা নাছিল বা শিক্ষা গ্ৰহণৰ বাবে সংগ্ৰাম কৰাও নাছিল। তাৰ পৰিৱৰ্তে আত্মজীৱনীখনত উল্লেখ আছে যে ককায়েকে বেয়া পায় বুলিহে তেওঁ কলিকতালৈ গৈছিল।[৪] ৰাজবালাৰ এই কথাখিনি তেওঁৰ আত্মসত্তাৰ উন্মোচন প্ৰসংগত যথেষ্ট গুৰুত্বপূৰ্ণ। কলিকতাত হিন্দু ধৰ্মৰ ছোৱালীবোৰৰ সৰুতে বিয়া হোৱা কথা বৰ্ণনা কৰোঁতে, তেওঁৰ সহপাঠী সৰযূৰ বিয়াত দোলাত মুখ ঢাকি ওৰণি লৈ কইনা নিয়াৰ কথাবোৰ কওঁতে লিখকৰ ভূমিকা সম্পূৰ্ণভাৱে নিষ্ক্ৰিয়। ঘটনাৰ বাহিৰত অৱস্থান কৰি তেওঁ এফালৰ পৰা সেই পৰিবেশবোৰ তুলি ধৰিছে। কিন্তু সেই পৰিবেশৰ বিৰোধিতা কৰি, অসন্তুষ্টি প্ৰকাশ কৰি তেওঁৰ স্বসত্তাক প্ৰকাশ কৰিব পৰাকৈ কোনো কথাকে কোৱা নাই। আনকি ককাইদেৰেকে কলিকতাত থৈ অহাৰ পিছত বেথুন স্কুলত পঢ়ি থকা সময়তো তেওঁ মনে মনে সিদ্ধান্ত লৈছিল যে গৰম বন্ধত ঘৰলৈ গ'লে তেওঁ আৰু কলিকতালৈ ঘূৰি নাহে। এইক্ষেত্ৰত দেউতাক-মাক বা ঘৰখনৰ পৰা আতৰি থকাৰ দুখতকৈ আন এটা মনোভাৱেহে অধিক প্ৰভাৱিত কৰিছিল। তেওঁ যে স্কুলত শিক্ষা গ্ৰহণ কৰিছে সেই কথাটো সমাজৰ দৃষ্টিত নিন্দনীয়। পেহীয়েকৰ জীয়েক হেমপ্ৰভা দাসে কলিকতাত শিক্ষা গ্ৰহণ কৰা বাবে তেওঁলোকক সমাজে উপলুঙা কৰিছিল। গতিকে সমাজৰ দৃষ্টিত নিন্দা বা উপলুঙাৰ পাত্ৰ হোৱা কথাটো তেওঁ মানি ল'ব পৰা নাছিল।[৫] কি উচিত কি অনুচিত সেয়া বিচাৰ কৰি শিক্ষা গ্ৰহণৰ সপক্ষে সবলভাৱে থিয় দিব পৰা সত্তা তেওঁৰ মাজত সেইসময়ত নাছিল। ইয়াৰ পৰিৱৰ্তে ৰক্ষণশীল সমাজ অনুগামী এজনী পৰম্পৰাগত ছোৱালী ৰূপেহে আত্মজীৱনীখনত তেওঁক দেখা পোৱা গৈছে। ঘৰলৈ আহি তেওঁ কলিকতালৈ আৰু উভতি নগ'ল। ৰাজবালা দাসে স্পষ্টভাৱে উল্লেখ কৰিছে যে সমাজে লিখা-পঢ়া কৰা ছোৱালীক যিহেতু তল চকুৰে চাই সেই কথা তেওঁৰ মনত সোমাই গৈছিল। গতিকে পঢ়া-শুনাৰ পৰা আতৰি ঘৰত থাকি তেওঁ মাকৰ পৰা তাত বোৱাকে ধৰি ঘৰুৱা কাম শিকাত মন দিলে। ছোৱালীয়ে পাঠাৰ মঙহ খোৱা নিষেধ, আগচোতাললৈ ওলোৱা নিষেধ। এজনী সাধাৰণ ছোৱালীৰ দৰে এই সকলোবোৰ নিষেধ মানি তেওঁ চলি থাকিল। এইসমূহ কথাৰ বৰ্ণনাত লিখকৰ ভূমিকা সম্পূৰ্ণভাৱে নিৰ্লিপ্ত। সত্য দেখুওৱাৰ ক্ষেত্ৰত তেওঁ পিচ পৰা নাই। কিন্তু সেই সত্যৰ বিৰোধিতাৰে কোনো সবল স্থিতি আত্মজীৱনীলৈ সেইমূহুৰ্তত অনা নাই। আনকি ডিব্ৰুগড়ত সেইসময়ত যি দুই-এখন

প্রাইমেৰী স্কুল হৈছিল তালৈ অলপ-অচৰপ ছোৱালীৰ অহা-যোৱা চলিছিল যদিও তেওঁলোকৰ ঘৰৰ মানুহে আলিবাটেদি ছোৱালীক খোজকঢ়াই স্কুললৈ পঠিওৱাৰ কথাকে ভাবিব নোৱাৰিছিল। এইক্ষেত্ৰতো লিখক দাসে সক্ৰিয় হৈ পঢ়িবলৈ যাবলৈ ইচ্ছা কৰা নাই। ইয়াত তেওঁ ঘৰৰ সকলো উচিত-অনুচিত স্বীকাৰ কৰি লোৱা এগৰাকী বাধ্য জীয়াৰী। ন্যায়-অন্যায়ৰ প্ৰতি চকু নিদিয়াকৈ সমাজে যি কয় তাকে অনুসৰণ কৰা পৰম্পৰাগত ছোৱালী।

ৰাজবালাৰ সমাজৰ প্ৰতি থকা সমীহ দূৰত থকা অৱস্থাতো কমি যোৱা নাছিল। কলিকতাত থাকোঁতে তেওঁলোকক অসমীয়া ছাত্ৰৰ ক্লাবত হোৱা মিটিঙলৈ মাতিলেও তেওঁ কেতিয়াও যোৱা নাছিল। তেওঁ পোনপটীয়াকৈয়ে উল্লেখ কৰা কথাত স্পষ্ট হৈছে যে সেইসময়ত সভা সমিতিত যোগদান কৰাত অভিভাৱকৰ যিহেতু আপত্তি আছিল সেই আপত্তিৰ বিপৰীতে গৈ সভাত তেওঁ কেতিয়াও যোগ দিবলৈ সাহ কৰা নাছিল।[৭] সভাত আলোচিত বিষয়, তেওঁলোকৰ ক্ৰিয়া-কলাপ আদিৰ প্ৰতি লিখকৰ আকৰ্ষণ বা ইচ্ছা হ'লহেঁতেন যদিও সেইসমূহৰ প্ৰতি লক্ষ্য নিদি অভিভাৱকৰ এগৰাকী বাধ্য কন্যাৰ ভূমিকা লৈছিল। সেইদৰে মদন মোহন মালব্যই তেওঁক বেনাৰচ হিন্দু বিশ্ববিদ্যালয়ত এম. এ পঢ়িবলৈ ঠিক কৰি ১৫০ টকাৰ এটা কামো যোগাৰ কৰি দি টেলিগ্ৰাম পঠিয়াইছিল। কিন্তু ঘৰৰ মানুহৰ অনুমতি নোপোৱাৰ বাবে ৰাজবালাই পঢ়িবলৈ যাব নোৱাৰিলে। পঢ়াৰ ইচ্ছা থকাৰ পিছতো উচিত কথাত নিজৰ মত আৰু ইচ্ছাৰ সপক্ষে তেওঁ অৱস্থান লোৱা নাই। তাৰ পৰিৱৰ্তে পিতৃ-মাতৃৰ অনুগত হৈ তেওঁ মালব্যলৈ পঢ়িবলৈ যাব নোৱাৰাৰ অজুহাত দেখুৱাই চিঠি লিখিলে।[৮]

ৰাজবালা দাসে প্ৰথম অৱস্থাত নিজৰ বিবাহৰ ক্ষেত্ৰত এটা শক্তিশালী স্থিতি লৈ ইয়াৰ বিপক্ষে অৱস্থান লৈছিল। কিন্তু জীয়েক হিচাপে তেওঁ সকলো বিষয়তে কৰাৰ দৰে ইয়াতো অভিভাৱকৰ ইচ্ছাৰ অনুগামী হৈয়ে পৰৱৰ্তী সময়ত বিয়াৰ সিদ্ধান্তত সমৰ্থন দিছিল। দেউতাকৰ কথা ৰাখি ৰাজবালাই পূৰ্বে তেওঁ জ্যোতিষচন্দ্ৰ দাস সম্পৰ্কত কৰা মন্তব্যৰ বাবে দুখ প্ৰকাশ কৰি তেওঁলৈ চিঠি পঠিয়াইছিল। অৰ্থাৎ ঘৰুৱা পৰিসৰত বা পিতৃ-মাতৃৰ সৈতে সম্পৰ্কৰ ক্ষেত্ৰত ৰাজবালা দাসৰ ভূমিকা কেৱল এগৰাকী অনুগত জীয়েক হিচাপেহে। স্ব সত্তাৰে পৰিপুষ্ট স্বতন্ত্ৰ ব্যক্তি ৰূপে নহয়। দেউতাকৰ ইচ্ছাৰ তেওঁ নীৰৱ সমৰ্থক। সেই সময়ৰ ছোৱালী ৰাজবালাই তেওঁ নিজে সম্মুখীন হোৱা অথবা আন নাৰীৰ ক্ষেত্ৰত দেখা সমাজৰ অহেতুক নিয়ম আৰু পৰিস্থিতিৰ বিপক্ষে যিদৰে থিয় হোৱা নাই সেইদৰে আত্মজীৱনী লিখক ৰাজবালাৰো ভূমিকা নীৰৱ। লিখকৰ সত্তাৰ কোনো স্বকীয়তা ইয়াৰ মাজত নাই।

ৰাজবালা দাসৰ আত্মজীৱনীত যিখন সমাজৰ যিটো শ্ৰেণীৰ জীৱন স্পষ্ট হৈ উঠিছে সেয়া হৈছে সমাজৰ আঢ্যৱন্ত সম্ভ্ৰান্ত শ্ৰেণী। লিখক নিজে যিহেতু তেনে পৰিবেশতে জন্ম হৈছিল, ডাঙৰ-দীঘল হৈছিল, বিয়া-বাৰুও তেনে সম্ভ্ৰান্ত মানুহৰ লগতে হৈছিল সেয়েহে সেইখন সমাজেই আত্মজীৱনীখনত বিশেষভাৱে ঠাই পাইছে। সেই সম্ভ্ৰান্ত ঘৰৰ ছোৱালী হিচাপে তেওঁৰ বায়েকহঁতৰ সৰুতেই বিয়া হৈছিল। এইক্ষেত্ৰতো লিখকৰ স্বচিন্তা প্ৰকাশক কোনো প্ৰতিক্ৰিয়া আত্মজীৱনীখনত নাই। কিন্তু যেতিয়াই ঘৰত তেওঁৰ বিয়াৰ প্ৰসংগ আৰম্ভ হ'ল দেউতাক-মাক আৰু ককায়েকহঁতৰ মাজত তেওঁৰ বিয়াক লৈ হোৱা মতবিৰোধবোৰে লিখকৰ মনত সম্পূৰ্ণ সুকীয়া কিছুমান প্ৰতিক্ৰিয়া সৃষ্টি কৰিলে। এইখিনিৰ পৰাই লিখক দাসৰ স্বসত্তাৰ প্ৰকাশ আৰু বিকাশ কিছু পৰিমাণে আৰম্ভ হ'ল। তেওঁৰ ব্যক্তিত্বৰ প্ৰগতিকামী নিজা গুণসমূহ স্পষ্ট হ'বলৈ ধৰিলে। ঘৰৰ অনুগত কন্যা হৈ নাথাকি তেওঁ নিজৰ স্থিতি আৰম্ভ কৰিলে। সেই সময়ত ডাঙৰ ছোৱালীয়ে বাহিৰত পঢ়িবলৈ যোৱাটো অসম্ভৱ ধৰণৰ কাম। কিন্তু তেওঁ সক্ৰিয় হ'ল আৰু কলিকতাত বায়েক আৰু তেওঁক পঢ়ুৱাবলৈ মাকক খাটনি ধৰিলে। পঢ়াৰ হেঁপাহ তেওঁৰ মাজত ইমান প্ৰবল হৈ উঠিল যে মাকে শেষত তেওঁক ঘৰুৱাভাৱে পঢ়ুওৱাৰ ব্যৱস্থা কৰিবলৈ দেউতাকক ক'লে। সেই সময়ত ৰাজবালাৰ মন চিন্তা সকলো কেৱল অধ্যয়নতে বান্ধ খাই পৰিল। ভালকৈ পঢ়ি কলিকতাত কেনেকৈ ওপৰ শ্ৰেণীত নাম লিখাব পাৰি সেই চেষ্টাত তেওঁ নিয়োজিত হ'ল। অনেক যত্ন কৰি ঘৰতে নিজে নিজে সকলো বিষয় পঢ়িবলৈ ধৰিলে। নুবুজাখিনিৰ বাবে ভিনিহিয়েক আৰু ককায়েকৰ পৰা সহায় ল'লে। এইসমূহ বৰ্ণনাৰ মাজত লিখক ৰাজবালাৰ ব্যক্তিত্বৰ সৰুকালতে গঢ় লোৱা

বিদ্যানুৰাগ স্পষ্ট হৈ উঠিল।এইবোৰ সময়ত ৰাজবালাৰ ভূমিকা এগৰাকী বাধ্য জীয়াৰীৰ পৰিৱর্তে শিক্ষাৰ হেঁপাহে উদ্ৰাউল কৰা এজনী স্বতন্ত্ৰীয়া কিশোৰী।[৯] অৱশ্যে সম্পূর্ণভাৱে ঘৰৰ বিপৰীতে থিয় দি স্কুলত পঢ়িবলৈ ওলাই যাব পৰা মানসিকতা তেওঁৰ নাছিল। দেউতাকৰ সমুখত মাত মাতিবলৈ অলপো সাহস নকৰিছিল। কলিকতাত পঢ়িবলৈ যোৱা সম্পর্কত দেউতাকে নিজে তেওঁক সোধোতেও ৰাজবালাই দৃঢ় স্থিতি ল'ব পৰা নাই। দেউতাকক কথা কোৱাৰ মাধ্যম আছিল মাক। অর্থাৎ পিতাকৰ প্ৰতি শ্ৰদ্ধাশীল মনোভাৱে আচ্ছন্ন কৰি ৰখাৰ বাবে ৰাজবালাৰ স্বতন্ত্ৰ ব্যক্তিত্ব এনেবোৰ সময়ত মূৰ দাঙি উঠিব পৰা নাছিল। কিন্তু তেওঁলোকৰ পঢ়াৰ হেঁপাহ আৰু চেষ্টাৰ জৰিয়তে নিজৰ উদ্দেশ্য সিদ্ধি কৰি কলিকতাত পঢ়িবলৈ যাবলৈ সন্মতি আদায় কৰিছিল। এয়া ৰাজবালাৰ আত্মসত্তাৰ এক সবল দিশ।

বিবাহ পূর্ব জীৱনত ঘৰুৱা পৰিসৰত ৰাজবালা দাসৰ যিদৰে স্বসত্তাৰ উজ্বল প্ৰকাশ নাই, বিয়া হৈ অহাৰ পিছতো গুৱাহাটীৰ ঘৰত ৰাজবালাৰ ভূমিকা এগৰাকী অনুগামী পত্নী আৰু বোৱাৰী হিচাপেহে। তেওঁলোকৰ ঘৰুৱা নীতি-নিয়ম অতি কঠোৰ আছিল বুলি বর্ণনা আগবঢ়াইছে যদিও এইক্ষেত্ৰত তেওঁ স্বচিন্তাৰে এইবোৰৰ বিপক্ষে মাত মতা নাছিল। আনকি কিছুমান পৰিস্থিতিত যুক্তিহীন নিয়মবোৰৰ পৰা হোৱা অসুবিধাসমূহ নিজে বুদ্ধিৰে পৰিচালনা কৰিছিল। কিন্তু সেইসমূহৰ বিৰোধ কৰা বা দূৰীকৰণৰ বাবে চেষ্টা লোৱাৰ প্ৰমাণ আত্মজীৱনীখনত নাই। অভিজাত শ্ৰেণীৰ জীৱনৰ অধিকাৰী ৰাজবালাই বিয়াৰ পিছত ইফালে-সিফালে ফুৰিবলৈ যাওঁতে কাম কৰা ল'ৰাৰ হতুৱাই স্বামীয়ে তেওঁৰ জোতা গাড়ীত তুলি থোৱাইছিল।[১০] কিন্তু মহিলাই জোতাজোৰ মুকলিকৈ পিন্ধি ওলাই যোৱাৰ বাবে মাত মতা নাছিল। শৈশৱতে মাক-দেউতাকৰ লগত কৰাৰ দৰে স্বামীৰ ঘৰতো সেই যুক্তিহীন নিয়মসমূহৰ সংস্কাৰৰ চেষ্টা নকৰি ৰাজবালাই সেইসমূহৰ সৈতে সহাৱস্থান কৰিছিল। দাসৰ সংগ্ৰামী স্ব স্বসত্তাৰ উপস্থিতি ইয়াত নাই। তেওঁৰ স্বামীয়ে বিলাতৰ পৰা ঘূৰি আহিও ঘৰৰ ৰক্ষণশীল প্ৰথাৰ বিৰোধিতা কৰি অশান্তি গোটাব বিচৰা নাছিল আৰু সেইসমূহ মানি চলিছিল। ৰাজবালায়ো এইক্ষেত্ৰত এগৰাকী অনুগতা পত্নীৰ ভূমিকাতে অৱতীর্ণ হৈছিল। কিন্তু লিখকৰ সৌভাগ্য এয়ে যে আন বহু মহিলাৰ দৰে তেওঁ সমাজে মহিলাৰ ওপৰত আৰোপ কৰা অন্যায় প্ৰথা আৰু ৰীতি-নীতিৰ বাবে যন্ত্ৰণা ভূগিবলগা হোৱাৰ প্ৰমাণ আত্মজীৱনীখনত নাই। তাৰ পৰিৱর্তে সেইসমূহ ৰক্ষা কৰিও অসুবিধা নোহোৱাকৈ চলিব পৰাকৈ তেওঁৰ স্বামীয়ে তেওঁক ব্যৱস্থা কৰি দিছিল।

ৰাজবালাই শিক্ষা গ্ৰহণ কৰা গিৰিধি আৰু বেথুনৰ শিক্ষানুষ্ঠান, শিক্ষাৰ পৰিবেশ, দুই-এক অসমীয়া ছোৱালীয়ে কলিকতালৈ গৈ শিক্ষা লোৱা আৰু পৰৱর্তী সময়ত ডিব্ৰুগড়ত স্কুলীয়া শিক্ষাত তেওঁলোকৰ আত্মনিয়োগ আদি বিষয়বোৰৰ বর্ণনাত দূৰত অৱস্থান কৰি কেৱল বিষয় বা তথ্য হিচাপে এইসমূহ তুলি ধৰিছে। এনেবোৰ সময়ত লিখক হিচাপেই হওক বা সেইখন সমাজৰ এজন ব্যক্তি হিচাপেই হওক দাসৰ কোনো নিজস্বতা প্ৰকাশক অৱস্থান নাই। কলিকতাত থকা সময়ৰ বর্ণনাত কর্ণেল শিবৰাম বৰাৰ ঘৰত তেওঁলোকে মুখামুখি হোৱা পৰিবেশ, গান-বাজনাৰ অনুষ্ঠান আদিৰ প্ৰতি লিখকৰ দৃষ্টি আছিল সমালোচনাত্মক। এইসমূহ বর্ণনাত তেওঁ বৰাৰ ঘৰত হোৱা গান-বাজনা, পৰিবেশ আদিৰ প্ৰসংগত প্ৰয়োগ কৰা 'ফিৰিঙি সমাজ'[১১] শব্দকেইটা তীর্যক, তাৎপর্যপূর্ণ আৰু স্বতন্ত্ৰ চিন্তা প্ৰকাশক। সেইখন সমাজত অসন্তুষ্ট হৈ তেওঁলোকৰ ঘৰলৈ দ্বিতীয়বাৰ নোযোৱা কথাই লিখকৰ স্বাভিমানী সত্তাক উন্মোচন কৰিছে।

ডায়চেচান কলেজত পঢ়ি থকা অৱস্থাত মিছন হোষ্টেলত এগৰাকী নানে কৃষ্ণৰ বিষয়ে কটু সমালোচনা কৰি ৰাজবালাক খৃষ্টান ধর্মৰ প্ৰতি আকৃষ্ট কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা সময়ত লিখকৰ স্থিতি আছিল দৃঢ়। তেওঁ ছিষ্টাৰৰ কথাৰ বিৰোধিতা কৰিবলৈ সাহস কৰি নিজৰ শক্তিশালী অৱস্থান ঘোষণা কৰিছে। ৰাজবালাই স্পষ্ট ভাষাৰে তেওঁক জনাই দিছিল যে তেওঁ তাত পঢ়িবলৈহে আহিছে। গতিকে ধর্মৰ কথাৰে তেওঁক বিব্ৰত কৰা উচিত নহয়। সেই পৰিবেশত তেওঁলোকৰ মাজত থাকি ধর্ম সম্পর্কত তেনেদৰে কঠোৰ স্থিতি ল'ব পৰাটো নিঃসন্দেহে তাৎপর্যপূর্ণ।[১২] লিখকৰ সেই সময়ৰ স্থিতিক লৈ ছিষ্টাৰ আইৰণিৰ তেওঁ কোপ দৃষ্টিত পৰিছিল আৰু সংঘাত হৈছিল। ইমান দূৰৰ পৰা গৈ মিছনেৰি হোষ্টেল এটাত

থকা অৱস্থাত তেওঁলোকৰ বিৰুদ্ধে এনেদৰে মূৰ তুলি কথা ক'ব পৰাটো ৰাজবালাৰ নিজৰ মত আৰু চিন্তাৰ দৃঢ়তাৰ পৰিচায়ক। এয়া প্ৰতিকূল সামাজিক পৰিবেশতো সকলো কথাকে বিনাবাক্যে মানি লোৱাৰ পৰিৱৰ্তে ছাত্ৰাৱস্থাতে গঢ় লোৱা কঠোৰ ব্যক্তিত্বৰ প্ৰকাশ। ঈশ্বৰৰ প্ৰতি তেওঁ আস্থাশীল। ভয়ংকৰ বিপদৰ পৰা পৰিত্ৰাণত ঈশ্বৰেই সহায় কৰিব পাৰে বুলি তেওঁ বিশ্বাস কৰিছিল। ককায়েক মৃত্যুশৰ্যাত থাকোঁতে তেওঁ ঈশ্বৰক কাকূতি কৰিছিল সেই আসন্ন বিপদৰ পৰা ৰক্ষা পাবৰ কাৰণে। কিন্তু ধৰ্মৰ দৰে এটা বিষয়ত চিষ্টাৰ আইৰণিয়ে তেওঁক প্ৰভাৱিত কৰিব বিচৰা ৰীতি তেওঁ সমৰ্থন নকৰিছিল। ডায়চেচান কলেজৰ অধ্যক্ষা ছিষ্টাৰ মেৰী ভিক্তোৰীয়া প্ৰসংগত ৰাজবালাই আগবঢ়োৱা "দেখাত ওখই-পাখই সভাশুৱনী আছিল" [১৩] বুলি আগবঢ়োৱা বৰ্ণনা চমু কিন্তু তাৎপৰ্যপূৰ্ণ। ৰাজবালাৰ এনে বৰ্ণনাই এগৰাকী মহিলাৰ বাহ্যিক অবয়বকেন্দ্ৰিক সামাজিক ধাৰণাৰ উৰ্দ্ধলৈযে তেওঁ যোৱা নাছিল তাকে প্ৰমাণ কৰে।

মহাত্মাৰ আদৰ্শৰ অনুগামী হৈ ৰাজবালাই যেতিয়া অসমত কামত ধৰিছিল আৰম্ভণিৰ কালত দেখা যায় যে তেওঁ স্বতঃপ্ৰণোদিত হৈ কাম কৰাতকৈ ককায়েকৰ ইচ্ছাৰ জোৰহে তাত বেছি আছিল।আনকি ডিব্ৰুগড়ত গঠন কৰা কংগ্ৰেছ কমিতিৰ মহিলা শাখাৰ সম্পাদিকা পাতি দিয়াত তেওঁ যেতিয়া গান্ধীৰ অস্পৃশ্যতা দূৰীকৰণৰ আদৰ্শৰ বিষয়ে মানুহক বক্তৃতা দি বুজাব লগাত পৰিছিল অতিকে অস্বস্তিত ভুগিছিল। তেওঁৰ নিজৰ মনটোৱেই তেতিয়া অস্পৃশ্যতা মুক্ত হোৱা নাছিল আৰু সেই নতুন আদৰ্শও গ্ৰহণ কৰিব পৰা নাছিল। [১৪] অৰ্থাৎ প্ৰথমচোৱাৰ ৰাজবালাৰ সমাজকৰ্মী ভূমিকাৰ আঁৰত তেওঁৰ স্বতন্ত্ৰ সংগ্ৰাম, ত্যাগ, ইচ্ছাতকৈ ককায়েকৰ ইচ্ছাইহে ক্ৰিয়া কৰিছিল। ককায়েকৰ যিহেতু তেওঁ বিৰোধিতা নকৰে সেয়েহে তেওঁ যি কৰিবলৈ কৈছিল সেই অনুসৰিয়ে কাম কৰি গৈছিল। সেইসময়তো সামাজিক বিষয়সমূহত ৰাজবালাৰ চিন্তাৰ শক্তিশালী আৰু স্বতন্ত্ৰ ৰূপ এটা গঢ় লোৱা নাছিল। ৰাজবালা দাসে গয়া কংগ্ৰেছত অসমৰ মহিলাৰ হৈ অংশ লৈছিল। এইক্ষেত্ৰতো দেখা যায় যে দাসে নিজে বাধা-বিঘিনি অতিক্ৰম কৰি সংঘাত, সংগ্ৰামৰ মাজেৰে নিজে উদ্যোগ লৈ তালৈ যোৱা নাই। তেওঁৰ চৌপাশৰ পৰিবেশ আৰু মানুহে এটা বাতাবৰণ তৈয়াৰ কৰি দিছিল আৰু তেওঁক সেই কংগ্ৰেছত অংশ ল'বলৈ পঠিয়াইছিল। সেই অধিবেশনলৈ গৈ কংগ্ৰেছৰ সাধাৰণ মানুহ থকা শিবিৰত থাকিবলৈ তেওঁ অস্বস্তি অনুভৱ কৰা, শিবিৰৰ পৰা আতৰাই তেওঁক তম্বুত থাকিবলৈ অনা কাৰ্যই লিখকে বহন কৰা চাকচিক্যভৰা অভিজাত শ্ৰেণীৰ মানসিকতাক প্ৰতিফলিত কৰিছে। [১৫] সংগ্ৰামৰ বাবে প্ৰয়োজনীয় মানসিকতা এয়া নহয়। ইয়াত লিখকৰ স্বসত্তাৰ আদৰণীয়া বিন্যাস আৰু বিকাশ নাই। কিন্তু নীতিগত কথাত কঠোৰ স্থিতি ল'ব পৰাকৈ তেওঁ দৃঢ় আছিল। গয়া কংগ্ৰেছত থকা সময়তে তৰুণ ফুকনে তেওঁক গয়াতে ডাক্তৰ দাসৰ সৈতে বিয়া পতাৰ প্ৰস্তাৱ দিওঁতে তেওঁ সেই অনুৰোধ স্বীকাৰ কৰি লোৱা নাই। ফুকন এজন শীৰ্ষস্থানীয় ব্যক্তি হোৱা স্বত্ত্বেও তেওঁৰ কথাৰ বিৰোধিতা কৰিছে। অৰ্থাৎ ঘৰুৱা ক্ষেত্ৰতেই হওক বা বাহিৰতেই হওক উচিত-অনুচিত বিচাৰ কৰাৰ দক্ষতা তেওঁৰ আছিল। কিন্তু মাক-দেউতাকৰ সিদ্ধান্ত বা ঘৰুৱা মানুহৰ স্থিতিৰ বিপক্ষে উচিত কথাটো কোনোদিন থিয় হোৱা নাছিল। যুক্তিসংগত কথাটো সমাজৰ বিৰোধিতা নকৰি এজন নীৰৱ অনুসৰণকাৰীৰ ভূমিকা লোৱা ৰাজবালা দাসৰ কিছুমান বিষয়ত সাহসৰ অভাৱ দেখা নাযায়। কিন্তু তেওঁ সমাজৰ সৈতে সম্পৰ্কজড়িত বিষয়সমূহত সংঘাতত লিপ্ত হ'ব নিবিচাৰে।পুলিচ, ডাৰোগা আদিক ভয় কৰাৰ পৰিৱৰ্তে মুখামুখি হৈ নিজৰ বক্তব্য নিজ শক্তিৰে ক'ব পৰা সাহস তেওঁৰ আছিল। [১৬] ঘৰ খানাতালাচ কৰিবলৈ আহোঁতে লিখকে লোৱা ভূমিকাই এজন ব্যক্তি হিচাপে তেওঁৰ বুদ্ধিমত্তা, সাহস আৰু যুক্তিবাদী মনোভাৱক প্ৰতিফলিত কৰে। এইবোৰত তেওঁ অনুচিত সিদ্ধান্তৰ বিৰুদ্ধে স্থিতি লৈছিল।

সেইসময়ৰ সমাজৰ এজন সদস্য হিচাপে ৰাজবালা সামাজিক আৰু ব্যক্তিগত পৰিসৰত যিদৰে স্বসত্তাৰে পৰিচালিত এজন ব্যক্তি নহয়, সেইদৰে মহাত্মা গান্ধীৰ বিভিন্ন কাৰ্যসূচী, অসহযোগ আন্দোলনত অংশ লোৱা ব্যক্তিৰ ক্ষেত্ৰত চৰকাৰৰ শাস্তিমূলক কাৰ্য আদি বিষয়বোৰৰ বৰ্ণনাৰ ক্ষেত্ৰতো লিখকৰ সবল উপস্থিতি

নাই। তেওঁ কেৱল তথ্য প্রেৰণকাৰীৰ ভূমিকাৰেহে আত্মজীৱনীখনত গতি কৰিছে।

নাৰীৰ হকে কাম কৰা বা নাৰীৰ জীৱনৰ মান উন্নীত কৰাৰ বাবে ৰাজবালাৰ ইচ্ছা আছিল প্ৰৱল। কিন্তু এইক্ষেত্ৰত তেওঁ নিজে কৰা সংগ্ৰামৰ সমানে স্বামী দাসৰ সহযোগিতা আছিল যথেষ্ট বেছি। অসম মহিলা সমিতি প্ৰতিষ্ঠা, মহিলা সভাত অংশগ্ৰহণৰ বাবে কলিকতালৈ লৈ যোৱা, অসম মহিলা সমিতিক নিখিল ভাৰত মহিলা সভাত অন্তৰ্ভুক্তিৰ বাবে ব্যৱস্থা লোৱা, এম. এ পঢ়াৰ ব্যৱস্থা কৰি দিয়া, সন্দিকৈ কলেজৰ বাবে পইচাৰ সাহায্য বিচাৰি যোৰহাটৰ ৰাধাকান্ত সন্দিকৈৰ ওচৰলৈ যোৱা, বিদেশৰ শিক্ষা-ব্যৱস্থাৰ পৰা বিভিন্ন কথা শিকিব পৰাকৈ তেওঁক ভ্ৰমণৰ বাবে লৈ যোৱা আদি অনেক কামত জ্যোতিষচন্দ্ৰ দাসে গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা লৈছে। তেওঁলোকে মহিলা সভাৰ কামত কলিকতালৈ যাব লগা কথা কওঁতে তেওঁৰ স্বামীয়ে ঘৰ ভাড়া কৰি তাত থাকিব পৰাকৈ তেওঁক নিজে লৈ গৈছে। তেতিয়াৰ সেই বৰ্ণনাতো উল্লেখ আছে যে কামকৰা মানুহ এজন তেওঁলোকে লগত লৈ গৈছিল। কলিকতাৰে এজন ঠাকুৰ ৰাখি ৰাজবালাই খোৱা-বোৱাৰ তত্বাৱধান কৰিছিল।[১৭] অর্থাৎ এক আৰামদায়ক আৰু সুবিধাপূৰ্ণ ব্যক্তিগত পৰিবেশৰ মাজেৰে তেওঁ সামাজিক কামত নিয়োজিত হ'বলৈ সুযোগ পাইছিল। সমাজহিতৈষী আন বহু মহিলাই ব্যক্তিগত জীৱনত কৰিব লগা সংগ্ৰাম ৰাজবালাই কৰিব লগা হোৱা নাই। মহিলাৰ মাজত স্কুলীয়া শিক্ষাৰ বিস্তাৰ, কলেজ স্থাপন কৰি তেওঁলোকৰ মাজত উচ্চশিক্ষাৰ প্ৰচলন আদি বিষয়সমূহত ৰাজবালা দাসৰ দুৰ্বাৰ কৰ্মস্পৃহাৰ প্ৰকাশ ঘটিছে। কিন্তু কোনো ক্ষেত্ৰতে অকলে যুজাঁৰুৱৰ ভূমিকাত অৱতীৰ্ণ হ'ব লগা হোৱা নাই। সকলো সময়তে তেওঁক আগবঢ়াই দি সকলো প্ৰয়োজনীয় ব্যৱস্থা কৰি দিছে ডাক্তৰ দাসে। নাৰীৰ উন্নতিৰ বাবে লিখকৰ যি হেঁপাহ আৰু ইচ্ছা সেয়া পূৰণৰ বাবে তেওঁ অকলে যুঁজ দি প্ৰতিকূলতাৰ বিপক্ষে সংগ্ৰাম কৰাৰ নিদৰ্শন আত্মজীৱনীত নাই। সকলো সময়তে তেওঁক সহযোগিতা কৰি ডাক্তৰ দাসে অনুকূল পৰিবেশত সৃষ্টিত সহায় কৰিছিল। অর্থাৎ লিখকৰ মনৰ মাজত থকা নাৰী শিক্ষাৰ বিস্তাৰৰ হেঁপাহৰ মাজত তেওঁৰ আত্ম সত্তাৰ যি স্বতন্ত্ৰ ৰূপ দেখা যায় সেয়া অকলশৰীয়া আৰু স্বয়ংসম্পূৰ্ণ নাছিল। তেওঁ তেওঁৰ লক্ষ্য পূৰণৰ বাবে এককভাৱে প্ৰচুৰ সংগ্ৰামেৰে নিজক থিয় কৰোৱাৰ উদাহৰণ কম। তাৰ পৰিৱৰ্তে সকলো সময়তে তেওঁ লাভ কৰিছে স্বামীৰ সহযোগিতা। সেইবাবে সমকালীন ৰক্ষণশীল সমাজৰ নাৰী শিক্ষা বিৰোধী দমনমূলক মনোভাৱৰ বিৰুদ্ধে আন কিছুমান নাৰীৰ দৰে ৰাজবালাই অকলশৰীয়া সংগ্ৰামৰ পথ ল'ব লগা অৱস্থা হোৱা নাই। সেই কথা লিখকৰ বিভিন্ন বৰ্ণনাত পৰোক্ষভাৱে প্ৰকাশ হোৱাৰ উপৰিও তেওঁ নিজে স্বীকাৰো কৰিছে। অৱশ্যে মহিলা সমিতিৰ কাম-কাজ, কলেজ প্ৰতিষ্ঠা, কলেজ চৰকাৰীকৰণ, ছোৱালী শিক্ষাৰ বাবে কৰা অন্যান্য কামৰ জৰিয়তে ৰাজবালা দাসৰ প্ৰচুৰ সাংগঠনিক দক্ষতা, কাম কৰাৰ তীব্ৰ স্পৃহা, কষ্টসহিষ্ণুতা, শিক্ষাৰ নতুন নতুন সংস্কাৰৰ প্ৰতি হেঁপাহ আদি বিভিন্ন গুণেৰে তেওঁৰ আত্মসত্তা বা ব্যক্তিত্বৰ এটা স্বপৰিচিতি নিৰ্মিত হৈছে।

সামৰণি ঃ

ৰাজবালা দাসৰ আত্মজীৱনীখনত সন্নিৱিষ্ট তেওঁৰ জীৱনৰ বিভিন্ন ঘটনা আৰু লিখক হিচাপে তেওঁ আগবঢ়োৱা বৰ্ণনাৰ আধাৰত দাসৰ স্বসত্তাৰ ৰূপ নিৰ্ণয়ৰ ক্ষেত্ৰত তিনিটা সিদ্ধান্তত উপণীত হ'ব পৰা যায়। শৈশৱৰ পৰা ধৰি বিয়াৰ পিছলৈকে ঘৰুৱা সম্পৰ্কৰ ক্ষেত্ৰত যদি চোৱা যায় তেন্তে দাসৰ স্বসত্তাৰ বিশেষ কোনো সবল স্থিতি উপলব্ধ নহয়। মাক-দেউতাকৰ তেওঁ এগৰাকী অনুগত কন্যা, ককায়েকৰ অনুগত ভগ্নী আৰু স্বামীৰো তেওঁ এগৰাকী পৰম্পৰাগত পত্নী। এই মানুহখিনিৰ ইচ্ছাৰ বিৰুদ্ধে উচিত কথাতো ৰাজবালাই কেতিয়াও সৰব হোৱাৰ প্ৰমাণ আত্মজীৱনীখনত নাই। সমাজৰ সৈতে সম্পৰ্কৰ বিষয়বোৰত দেখা যায় যে ৰাজবালাৰ স্বসত্তা কোনো সময়ত উজলি উঠিছে আৰু কোনো সময়ত তেওঁ সেই ৰক্ষণশীল সমাজৰে এগৰাকী অনুসৰণকাৰীৰ ভূমিকাত অৱতীৰ্ণ হৈছে। তেওঁ নিজে শিক্ষা গ্ৰহণ কৰা সময়ত সমাজত থকা বিভিন্ন নিষেধ তেওঁ মানি চলিছে। কিন্তু পৰৱৰ্তী সময়ত নাৰী শিক্ষা প্ৰচলনৰ বাবে অহর্নিশে কৰা কাম, নাৰীৰ প্ৰগতিৰ বাবে মহিলা সমিতিৰ জৰিয়তে লোৱা কৰ্মসূচী, বাল্য

বিবাহৰ বিৰুদ্ধে লোৱা কঠোৰ স্থিতি আদিৰ জৰিয়তে সামাজিক পৰিসৰত ৰাজবালাৰ স্বসত্তা উজ্বল ৰূপত প্রতিষ্ঠিত হৈছে। কিন্তু ব্যক্তিগত পৰিমণ্ডলতে হওক বা সামাজিক ক্ষেত্রতে হওক লিংগবৈষম্যভিত্তিক আচৰণ, প্রথা আদিৰে ভৰপূৰ সমাজত থাকিও সেইসমূহৰ প্রতি তেওঁ প্রতিক্রিয়াশীল নাছিল। শিক্ষাৰ বাহিৰে আন কোনো ক্ষেত্রতে এনে বৈষম্যৰ বিৰুদ্ধে তেওঁ সৰৰ হোৱা নাই। আনহাতে লিখক হিচাপে আত্মজীৱনীখনত ৰাজবালাৰ স্বসত্তাৰ কোনো তাপর্যপূর্ণ বিকাশ পৰিলক্ষিত নহয়। দাস কেৱল এজন কথক আৰু বর্ণনাকাৰীহে। নির্দিষ্ট দূৰত নিজক সকলো সময়তে ৰাখি তেওঁ জীৱনৰ ঘটনাবোৰ উপস্থাপন কৰিছে। সেয়েহে তেওঁৰ শৈশৱৰ সমাজখনৰ অনুচিত কার্য আৰু প্রথাবোৰৰ বর্ণনাৰ সময়তো লিখক সত্তাৰ উপস্থিতি তাত নাই। এই সকলোবোৰ কথাৰ আধাৰত ৰাজবালা দাসৰ স্বসত্তাৰ মূল্যায়ন কৰি ক'ব পাৰি যে পৰিয়ালকেন্দ্রিক পৰিসৰত গুৰুত্বপূর্ণ বিষয়ৰ ক্ষেত্রতো ৰাজবালাৰ স্বসত্তা ক্রিয়াশীল হৈ এটা ৰূপ লাভ কৰা নাই। কিন্তু সামাজিক পৰিসৰত কোনোবা সময়ত নিষ্ক্রিয় হ'লেও অধিক সময়ত তেওঁৰ স্বসত্তাৰ বিকাশ লক্ষণীয়। ❑

অন্ত্যটীকা ঃ

১. দাস, ৰাজবালা : তিনিকুৰি দহ বছৰৰ স্মৃতি : চিত্রবন প্রকাশন, ২০০৪, পৃষ্ঠা ১৮
২. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ২০
৩. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ১৯
৪. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ২১
৫. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ২৩
৬. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ২০
৭. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ৩৯
৮. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ৪৭
৯. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ২৫
১০. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ৫৩
১১. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ৩৩
১২. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ৩৬
১৩. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ৩৪
১৪. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ৪২
১৫. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ৪৯
১৬. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ৪৪
১৭. প্রাগুক্ত গ্রন্থ, পৃষ্ঠা ৫৮

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

ওজা, দিগন্ত (২০১১) অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ বিৱর্তন, ভৱানী বুক্ছ
দাস, ৰাজবালা (২০০৪) তিনিকুৰি দহ বছৰৰ স্মৃতি, চিত্রবন প্রকাশন, গুৱাহাটী
মহন্ত, অপর্ণা (২০১৮) নাৰীবাদ, প্রকাশন শাখা, ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়
শর্মা, গোবিন্দপ্রসাদ (১৯৮৬) জীৱনী আৰু অসমীয়া জীৱনী, ষ্টুডেন্টচ ষ্ট'ৰচ, গুৱাহাটী

Dutta, Nandana(ed) (2016) Communities of Women in Assam, Routledge
Harish, Ranjana (1993) Indian Women's Autobiographies, Arnold Publishers
Olney, James (1981) Metaphors of self : The Meaning of Autobiography, Princeton University Press
Smith, Sidonie & Watson Julia(ed) (1998) Women, Autobiography, Theory A Reader, University Of Wisconsin Press

প্রবন্ধ

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰাচীন কামৰূপত শৈৱধৰ্মৰ বিকাশ আৰু অসমত প্ৰচলিত শৈৱ ধাৰাৰ লোকগীত

ড° পল্লৱিকা শৰ্মা

সহকাৰী অধ্যাপিকা
অসমীয়া বিভাগ
দৰং মহাবিদ্যালয়
ডাক ঃ তেজপুৰ, পিন ঃ ৭৮১০০৪
ম'বাইল : ৯৮৬৪৬০৬২৮৫
ই-মেইল ঃ pallabika.sarmah@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

ভাৰতীয় ধৰ্মীয় পৰম্পৰাত হিন্দু ধৰ্ম বা সনাতন ধৰ্ম অতি পুৰণি। হিন্দু ধৰ্মৰে অন্তৰ্গত এটা উল্লেখযোগ্য শাখা হৈছে- শৈৱ ধৰ্ম। শৈৱ ধৰ্মত শিৱ মূল আৰাধ্য দেৱতা। প্ৰাচীন অসমত শৈৱ ধৰ্মই বিকাশ লাভ কৰাৰ কথা ইতিহাসে আমাক জানিবলৈ দিয়ে। নৰক, বান, বৰ্মন-বংশীয়, শালস্তম্ভ-বংশীয় আৰু পাল-বংশীয় বিভিন্ন ৰজাৰ ৰাজত্বকালত প্ৰাচীন কামৰূপত শৈৱধৰ্মই বিকাশ লাভ কৰিছিল। প্ৰাচীন অসমত শিৱক পৌৰাণিক দেৱতাৰ লগতে লৌকিক দেৱতাৰূপেও উপাসনা কৰা হৈছিল। অসমীয়া লোকসাহিত্যত শিৱক বিভিন্ন ৰূপত উপস্থাপন কৰা দেখিবলৈ পোৱা যায়। বুঢ়া গোসাঁই, জটীয়া গোসাঁই , ভোলানাথ, পাগলা গোসাঁই, শংকৰ, ভাংৰা গোসাঁই আদি নামেৰে শিৱ অসমৰ লোকসমাজৰ উপাস্য দেৱতা। শিৱক কেন্দ্ৰ কৰিয়েই শিৱৰ নাম, পগলা-পাৰ্বতীৰ গীত, টোকাৰী গীত, বৈৰাগী গীত আদি বিভিন্ন ভক্তিমূলক লোকগীতৰ প্ৰচলন অসমত আছে। অসমত শৈৱ ধাৰাৰ গীত হিচাপে সদাশিৱৰ নাম, জাগাৰ পূজাৰ গীত, শিৱ মালচি গীত আদি বৰ্তমান লোকসমাজতো প্ৰচলিত হৈয়ে আছে। প্ৰস্তাৱিত গৱেষণা পত্ৰৰ বিষয়ৰ পৰিসৰত প্ৰাচীন কামৰূপত শৈৱধৰ্মই কেনেদৰে বিকাশ লাভ কৰিছিল আৰু লোক-পৰম্পৰাত প্ৰচলন থকা শৈৱধাৰাৰ অন্তৰ্গত বিভিন্ন লোকগীতক বিশ্লেষণ কৰা হ'ব। **'প্ৰাচীন কামৰূপত শৈৱধৰ্মৰ বিকাশ আৰু অসমত প্ৰচলিত শৈৱ ধাৰাৰ লোকগীত'** - শীৰ্ষক বিষয়ৰ বিশ্লেষণে অসমীয়া ভক্তি সাহিত্যৰ আলোচনাৰ ক্ষেত্ৰত এক নতুন দিশৰ উন্মোচন ঘটাব বুলি আশা প্ৰকাশ কৰিয়েই এই গৱেষণা পত্ৰখন যুগুত কৰি উলিওৱা হৈছে। গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুতকৰণৰ ক্ষেত্ৰত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ অৱলম্বন কৰা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ

শিৱ, শৈৱধৰ্ম, লোকগীত, উপাসনা ইত্যাদি।

০.০ প্ৰস্তাৱনা ঃ

মানুহৰ মনত ঈশ্বৰৰ প্ৰতি থকা অগাধ বিশ্বাস, ৰতি আৰু অনুকম্পাৰ বাবে ভক্তিভাবৰ উদয় হয়। ভক্তিয়ে মানুহক ঈশ্বৰৰ প্ৰতি আস্থাশীল কৰি তোলে।

"Bhakti Yoga is a real genuine search after the Lord a search begining continuing and end ending in love." (http://hdl.handle.net/10603/344037) ভক্তিৰ মাধ্যমেৰেই মানুহে ধৰ্মীয় উপাসনাত ৰত হয়। স্থান আৰু পৰিৱেশ অনুসৰি ধৰ্মীয় উপাসনা ভিন ভিন। প্ৰাগ-ঐতিহাসিক কালৰেপৰা ভাৰতবৰ্ষত বিভিন্ন ধৰ্মৰ প্ৰচলন আছে। প্ৰাক-বৈদিক যুগতেই শৈৱ ধৰ্মৰ আৰিৰ্ভাব হৈছিল। অসমত প্ৰচলন থকা ধৰ্মৰ ভিতৰত শৈৱ ধৰ্মও এটা প্ৰাচীন ধৰ্ম। অসমৰ শৈৱধৰ্ম তান্ত্ৰিকতাৰ পটভূমিত গঢ় লৈ উঠিছে, য'ত শক্তিতত্ত্বৰ লগত শৈৱতত্ত্বৰ সংমিশ্ৰণ সাধন হৈছে। শিৱ আৰ্য, অনা-আৰ্য উভয়ৰে আৰাধ্য দেৱতা।

লোকসাহিত্যৰ মাজেৰে লোকমন প্ৰতিফলিত হৈ উঠে। লোকসাহিত্যৰ বিভিন্ন ভাগৰ ভিতৰত লোকগীত অন্যতম। লোকগীতৰ মাধ্যমেৰেও লোকমনৰ অভিব্যক্তি প্ৰকাশ পায়। মানুহৰ মনত সৃষ্ট বিশ্বাস, অনুকম্পা আৰু ৰতিৰ পৰা ঈশ্বৰৰ প্ৰতি ওপজা ভক্তিভাব লোকগীতৰ মাজেৰেও ব্যঞ্জিত হৈ উঠা দেখা যায়। মহেশ্বৰ নেওগৰ মতে, 'ধৰ্মভাব সকলো ভাব-অনুভূতিতকৈ গভীৰ। গতিকে সকলোৰে হিয়া চুব নোৱাৰিলেও যি এবাৰ হিয়া চুইছে তাৰ গভীৰতম কোণবোৰ উদ্ঘাটন নোহোৱাকৈ থকা নাই।" (নেওগ ১৮) অসমত প্ৰচলিত ভক্তিমূলক লোকগীতৰ ভিতৰত শৈৱ-ধৰ্মীয় লোকগীতসমূহো বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য।

১.০০ গৱেষণা পত্ৰ প্ৰস্তুতকৰণৰ উদ্দেশ্য আৰু পদ্ধতি ঃ

প্ৰাচীন কালৰে পৰাই প্ৰাগজ্যোতিষপুৰ বা কামৰূপত শৈৱধৰ্মৰ প্ৰচলন থকাৰ কথা ইতিহাসে আমাক জানিবলৈ দিয়ে। বিভিন্ন ধৰণৰ শিলালিপি, তাম্ৰলিপি, ভূমি দানপত্ৰ (Land Grants) আদিয়ে ইয়াৰ সাক্ষ্য বহন কৰে। নৰক, বাণ, বৰ্মন বংশীয়, পালবংশীয় আৰু শালস্তম্ভ বংশীয় বিভিন্ন ৰজাই শিৱক উপাসনা কৰিছিল। চৰ্যাপদ, যোগিনীতন্ত্ৰ, কালিকাপুৰাণ, হৰগৌৰী সম্বাদ আদি গ্ৰন্থতো অসমত শৈৱধৰ্মৰ প্ৰচাৰ আৰু প্ৰসাৰৰ বিষয়ে উল্লেখ আছে। প্ৰাচীন কামৰূপত ৰাজপৃষ্ঠপোষকতাত শৈৱধৰ্মই কেনেদৰে বিকাশ লাভ কৰিছিল, সেই বিষয়ে আলোচনা দাঙি ধৰাৰ উদ্দেশ্যে আৰু অসমত প্ৰচলন থকা শৈৱ ধাৰাৰ অন্তৰ্গত বিভিন্ন লোকগীতসমূহকে আলোচনাৰ আওতালৈ আনিবৰ বাবেই '**প্ৰাচীন কামৰূপত শৈৱধৰ্মৰ বিকাশ আৰু অসমত প্ৰচলিত শৈৱ ধাৰাৰ লোকগীত**' - শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰখন যুগুত কৰি উলিওৱা হৈছে। গৱেষণাপত্ৰৰ বিষয়বস্তুৰ বিশ্লেষণে বিদ্যায়তনিক ক্ষেত্ৰত এক নতুন মাত্ৰা প্ৰদান কৰিব।

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুতকৰণৰ ক্ষেত্ৰত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ অৱলম্বন কৰা হৈছে।

২.০০ বিষয়ৰ পৰিসৰ ঃ

প্ৰাচীন কামৰূপত ৰাজকীয় পৃষ্ঠপোষকতাত শৈৱধৰ্ম বিকশিত হৈছিল। বৰ্তমান সময়তো শৈৱ ধৰ্ম অসমত বিশেষভাৱে প্ৰচলিত হৈয়ে আছে। '**প্ৰাচীন কামৰূপত শৈৱধৰ্মৰ বিকাশ আৰু অসমত প্ৰচলিত শৈৱ ধাৰাৰ লোকগীত**' - শীৰ্ষক গৱেষণাপত্ৰৰ পৰিসৰে শৈৱ ধৰ্ম, প্ৰাচীন কামৰূপৰ পৰিচয়, প্ৰাচীন কামৰূপৰ ৰাজবংশ, ৰাজবংশীয় পৃষ্ঠপোষকতাত শৈৱধৰ্মৰ প্ৰসাৰ, অসমৰ শৈৱধৰ্মীয় নিদৰ্শনসমূহ আৰু লোকগীতত শিৱৰ মাহাত্ম্য আদি বিষয়ৰ আলোচনাক সামৰি ল'ব।

৩.১ ভাৰতবৰ্ষত প্ৰচলন থকা ধৰ্মৰ ভিতৰত এটা প্ৰাচীন ধৰ্ম হৈছে সনাতন ধৰ্ম, যাক হিন্দু ধৰ্ম বুলিও জনা যায়। হিন্দুধৰ্মৰ বিভিন্ন শাখা-প্ৰশাখা আছে যদিও এই সকলোৰে মাজত সাদৃশ্যও বিৰাজমান। কে এম সেনৰ মতে, "Hinduism is more like a tree that has grown gradually than like a building that has been erected by some great architect at some definite point in time It contains within itself the influences of many cultures and the body of Hindu thought thus offers as much variety as the Indian nation itself." (Tiwari 8) শৈৱ ধৰ্ম হিন্দুধৰ্মৰ এটা প্ৰধান শাখা; য'ত মূল উপাস্য দেৱতা ভগৱান শিৱ। শিৱৰ উপাসনাক আধাৰ হিচাপে লৈ যি ধৰ্মমতৰ সৃষ্টি হৈছিল, তাক শৈৱবাদ বা শৈৱধৰ্ম নামেৰে জনা যায়। শৈৱবাদত শিৱক আন সকলো দেৱতাতকৈ উচ্চত স্থান দিয়া হয় আৰু ভক্তৰ সৈতে সম্পৰ্কৰ নিগূঢ়তা স্থাপন কৰা হয়। শিৱক প্ৰাক-আৰ্য দেৱতা হিচাপে গণ্য কৰা হৈছিল। প্ৰাচীন ভাৰতৰ অধিবাসীসকলৰ মাজত শৈৱধৰ্মই এটা গুৰুত্বপূৰ্ণ ধৰ্মৰূপে বিবেচিত হোৱাৰ লগতে ইয়াৰ অনুগামীৰ সংখ্যাও উল্লেখনীয় আছিল।

হেৰম্বকান্ত বৰপূজাৰীৰ মতে, "Saivism is a term which should precisely mean the Kashmir Saiva Darshana, a form of the Advaita Vedanta philosophy while ther is no prominent evidence of that philosophy being vigorously pursued in ancient Assam, We may understand the term to mean Siva-worsh to show that it was prevalent as aform of popular religion from the earliest times of Assam history. (Barpujari 313)

শৈৱধর্মত লিংগ পূজা আৰু মূর্তি পূজা—এই দুয়োটা ৰূপতে শিৱক উপাসনা কৰা হয়। লিংগ পূজা সাধাৰণতে অনা-আর্য (জনজাতীয়) লোকৰ দ্বাৰা কৰা হৈছিল, য'ত শৈৱ পূজাৰ পৰম্পৰাও সন্নিৰিষ্ট হৈ আছিল। শৈৱধর্মৰ সাধাৰণ উপাসকসকলৰ মাজতো লিংগ পূজাৰ প্ৰচলন আছিল। লিংগ পু�ৰাণ, শিৱ পুৰাণ, বায়ু পুৰাণ, ব্ৰহ্মাণ্ড পুৰাণ এই সকলোতে শিৱক লিংগৰূপত উপাসনা কৰাৰ কথা উল্লেখ আছে। সামাজিক প্ৰমূল্য বৃদ্ধি কৰা শৈৱ ধর্মৰ মূল মন্ত্ৰ আছিল। সংস্কৃত আৰু দ্ৰাবিড়ীয় ভাষাত ৰচনা কৰা 'শৈৱাগম'ক শৈৱধর্মৰ পৱিত্ৰ গ্ৰন্থৰূপে বিবেচনা কৰা হয়। শৈৱ ধর্ম মূলতঃ হিন্দু ধর্মীয় উপাসনাৰ এটা বিশেষ পন্থা যদিও উপাসনা আৰু বিশ্বাসৰ ভিন্ন ৰীতি অনুসৰি শৈৱবাদ কেইটামান ভাগত বিভক্ত। কাশ্মিৰা শৈৱবাদ আৰু বীৰা শৈৱবাদ শিৱধর্মৰ মূল দুটা পন্থা যদিও শৈৱ সিদ্ধান্ত, পাশুপাত, কাপালিকা আৰু কালামুখ পন্থাকো শৈৱধর্মৰ অন্তর্গত বিশেষ পন্থাৰূপেই বিবেচনা কৰা হয়।

৩.২ অসমক প্ৰাচীন কালত 'প্ৰাগজ্যোতিষ' (প্ৰাগজ্যোতিষপুৰ) নামেৰে জনা গৈছিল আৰু পৰৱর্তী সময়ত এই প্ৰাগজ্যোতিষপুৰেই কামৰূপ নামেৰে পৰিচিত হৈছিল। "Most of the scholars while dealing with the geography of early Assam have treated the same region for the state of Pragjyotisha - kamrupa. The scholars even sometimes,have used these two terms viz the 'early Assam' and the 'Pragjyotisha - Kamrupa' as synonym to them the state comprised a vast tract of land of north east and Eastern Indian covering roughly present Bhutan entire north eastern states north Benal and a bigger part of North Bangladesh" (N. Boruah 39) প্ৰাগজ্যোতিষপুৰৰ প্ৰথম উল্লেখ

ৰামায়ণ আৰু মহাভাৰতত পোৱা যায়। প্ৰাচীন অসম বা কামৰূপৰ চাৰিসীমা সময়ে সময়ে সলনি হৈ আছিল। যোগিনীতন্ত্ৰৰ মতে, প্ৰাচীন অসমৰ উত্তৰে কাঞ্চনজংঘা, পশ্চিমে কৰতোৱা নদী; পূবে দিখৌ নদী আৰু দক্ষিণে ব্ৰহ্মপুত্ৰ নদী অৱস্থিত।

হৰগৌৰি সম্বাদৰ মতে, কামৰূপক চাৰিখন পীঠত ভাগ কৰা হৈছিল। চাৰিখন পীঠৰ সীমা নদীৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি কৰা হৈছিল। কৰতোৱা আৰু স্বৰ্ণকোষৰ মাজত ৰত্নপীঠ, স্বৰ্ণকোষ আৰু কপিলীৰ মাজত কামপীঠ, পুষ্পিকা আৰু ভৈৰৱীৰ মাজত স্বৰ্ণপীঠ আৰু ভৈৰৱী আৰু দিক্ৰঙৰ মাজত সৌমাৰ পীঠ। "Four pithas marked by river boundaries viz 1) Ratnapitha between the karatoya and the Swarnakosha 2) Kamapitha between the swarnakosha and the kapila 3) Swarnapitha between the pushpika and the Bhairavi and 4)Saumarpitha between the Bhairavi and the Dikrang rivers."(Kakati 8)

কালিকা পুৰাণ অনুসৰি, কামৰূপ কৰতোৱা নদীৰ পূবফালে অৱস্থান কৰা ত্ৰিভুজাকৃতিৰ এশ যোজন দৈর্ঘ্যৰ আৰু ৩০ যোজন প্ৰস্থৰ সীমাখণ্ড আছিল; যাক দিক্কৰবাসিনী নদীয়ে পূবফালে আগুৰি আছিল। হিউৱেন চাঙে কুমাৰ ভাস্কৰ বর্মাৰ ৰাজত্বকালত ১৬৪০ খ্ৰীষ্টাব্দত

কামৰূপলৈ আহিছিল। হিউৱেন চাঙে তেওঁৰ টোকাত কামৰূপৰ ভূখণ্ডৰ বিষয়ে উল্লেখ কৰিছিল এনেদৰে, "As more than a myriad li or 1667 miles in circuit. He travelled from Pun - na - fa - tan - na (pundravardhana) on the east more than 900 li or 150 miles, crossed a large river and reached Kia-no-leu-po (Kamarupa). The T'ang Shu refers to this large river as Ka-lo-tu which undoubtedly meant the Karatoya. The pilgrim further stated that to the east of the country was a series of hills which reached as far as the confines of China." (S.L Baruah 75) কামৰূপৰ চাৰিসীমা যে নির্দিষ্ট নাছিল সেই কথা ওপৰত উল্লেখ কৰা মতৰ পৰা স্পষ্ট হয়। কোনো সময়ত কামৰূপ চাৰিসীমা সমুদ্রলৈকেও প্রসাৰিত হোৱা দেখা যায়। নালন্দা, কলিংগ, পাটলিপুত্র, মগধ, কোশল আদি অঞ্চল কামৰূপৰ চাৰিসীমাৰ ভিতৰুৱা হৈছিল আৰু কেতিয়াবা শ্রীহট্ট, গৌড় আৰু বর্তমান বাংলাদেশৰ বৃহৎ অংশও কামৰূপৰ ভিতৰুৱা আছিল।

৩.৩ প্রাচীন কামৰূপত ৰাজবংশীয় পৃষ্ঠপোষকতাত শৈৱধর্মৰ বিকাশ ঃ

প্রাগ-ঐতিহাসিক যুগত অসমত বা প্রাগজ্যোতিষপুৰত বা কামৰূপত বিভিন্ন ৰজাই ৰাজত্ব কৰিছিল। মহিৰঙ্গ দানৱ প্রাচীন অসমৰ প্রথমজন ৰজা আছিল। ঘটকাসুৰ, ৰত্নাসুৰ, হটকাসুৰ, নৰক বা ভৌম, ভগদত্ত, বজ্রদত্ত, ভীষ্মক, বাণাসুৰ অসমক প্রাগঐতিহাসিক কালৰ উল্লেখনীয় শাসক আছিল।

৩.৩.১ ভৌম-নৰকৰ শাসনকালত শৈৱধর্মৰ বিকাশ ঃ

নৰকে ত্রেতাযুগৰ আৰম্ভণিতেই ঘটকাসুৰক পৰাজিত কৰি প্রাগজ্যোতিষপুৰৰ বা প্রাচীন কামৰূপৰ ৰজা হৈছিল। কালিকাপুৰাণৰ মতে, Naraka was born in womb of Mother Earth begotten by Lord Vishnu in his Varah-rupa.Earth conceived him in her period of impurity." (Barpujari 87) ষোল্ল বছৰ বয়সত নৰকে তেওঁৰ পিতৃ বিষ্ণুৰ সাক্ষাৎ লাভ কৰিছিল আৰু তেতিয়াৰ পৰাই তেওঁ জনক ৰজাৰ ৰাজ্য বিদেহৰ পৰা প্রাগজ্যোতিষপুৰলৈ আহিছিল। সেই সময়ত প্রাগজ্যোতিষপুৰ ৰজা ঘটকৰ দ্বাৰা শাসিত হৈছিল আৰু তাত ভগৱান শিৱই বিশেষ দৃষ্টি নিবদ্ধ কৰিছিল। নৰকে ঘটকক পৰাস্ত কৰিছিল আৰু তেওঁক হত্যা কৰি প্রাগজ্যোতিষপুৰক নিজৰ অধীনলৈ আনিছিল। কিন্তু ভগৱান বিষ্ণুৱে নৰকক কেৱল মাত্র কামাখ্যা দেৱীৰ উপাসনা কৰিবলৈ নির্দেশ দিছিল। দেৱী কামাখ্যাক যোনিৰূপত পূজা কৰা হৈছিল আৰু এই পৰম্পৰাক ৰাজকীয় পৃষ্ঠপোষকতা প্রদান কৰা হৈছিল, যাৰ বাবে প্রাগজ্যোতিষপুৰত শৈৱধর্মৰ প্রচলন বন্ধ কৰা হৈছিল। শৈৱধর্মৰ প্রচলনক নিষিদ্ধ ঘোষণা কৰা হৈছিল যদিও শৈৱধর্ম গোপনে হ'লেও প্রাচীন কামৰূপত প্রচলিত হৈয়ে আছিল। ড° বাণীকান্ত কাকতিৰ মতে "Naraka confesses in one place that Siva remains hidden within his city." (Kalita 57) সতী যিহেতু পার্বতীৰ ৰূপত পুনৰ জন্ম হৈছিল সেয়েহে তেওঁৰ সৈতে শিৱৰ মিলন হৈছিল আৰু এই মিলনৰ প্রক্রিয়াটোত শিৱ আৰু দেৱী দুয়োকে সমান্তৰালভাৱে উপাসনা কৰা হৈছিল। যাৰ পৰিণতিত প্রাচীন কামৰূপত শৈৱ আৰু শাক্তধর্ম সমান্তৰালভাৱে প্রচলিত হৈছিল। লিংগপূজা আৰু যোনি পূজাই ইয়াৰ নির্দশন দাঙি ধৰে।

৩.৩.২ বাণৰ শাসনকালত শৈৱধর্মৰ বিকাশ ঃ

ৰজা বাণ আছিল শিৱৰ পৰম ভক্ত। উল্লেখ্য যে, বাণে বিশ্বনাথত দ্বিতীয় কাশীধাম প্রতিষ্ঠা কৰিব বিচাৰিছিল, যাৰ বাবে তেওঁ ভাৰতবর্ষৰ বিভিন্ন প্রান্তৰ পৰা এক কোটিৰো অধিক শিৱ লিংগ সংগ্রহ কৰিছিল। তেওঁৰ দিনত বিভিন্ন শিৱ মন্দিৰ স্থাপন কৰা হৈছিল। তাৰে ভিতৰত মহাভৈৰৱ দেৱালয়, নাগশংকৰ দেৱালয়ৰ বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। গুপ্তেশ্বৰ দেৱালয়ো তেওঁৰ সময়তে প্রতিষ্ঠা কৰা হৈছিল। হৰিনাথ শর্মাৰ মতে, "Not only Mahabhairava,Banasura placed each and every Sivalinga in his way from Agnigarh to his capital at every two kilometers distance." (Sharma Doloi 172)

৩.৩.৩ বর্মন-বংশীয় ৰজাৰ শাসনকালত শৈৱধর্মৰ বিকাশ ঃ

বর্মন বংশীয় ৰজাসকলে কামৰূপত প্রায় তিনি শতিকা ধৰি ৰাজত্ব কৰিছিল। পুষ্যবর্মনে এই ৰাজবংশ প্রতিষ্ঠা কৰিছিল। তেওঁ 'মহাৰাজাধিৰাজ' খিতাপ লাভ কৰিছিল। অসমৰ প্রকৃত ৰাজনৈতিক ইতিহাস বর্মনবংশীয় দিনৰ পৰাই আৰম্ভ হোৱা বুলি ক'ব পাৰি। পুষ্যবর্মনৰ পৰৱর্তী সময়ত বর্মন বংশীয় ৰজা হিচাপে শাসনত অধিষ্ঠিত হোৱা সমুদ্র বর্মনেও 'মহাৰাজাধিৰাজ' উপাধি

গ্রহণ কৰিছিল। তাৰ পাছত ক্ৰমে বলবৰ্মন (খ্ৰীঃ ৪০৫-খ্ৰীঃ ৪২০), কল্যাণ বৰ্মন (খ্ৰীঃ ৪২০-খ্ৰীঃ ৪৪৯), গণপতি বৰ্মন (খ্ৰীঃ ৪৪০-খ্ৰীঃ ৪৫০), মহেন্দ্ৰ বৰ্মন(খ্ৰীঃ ৪০০-খ্ৰীঃ ৪৮৫), নাৰায়ণ বৰ্মন (খ্ৰীঃ ৪৮৫-খ্ৰীঃ ৫১০), মহাভূতবৰ্মন (খ্ৰীঃ ৫১০-খ্ৰীঃ ৫৫৫) সুপ্ৰতিষ্ঠিত বৰ্মন (খ্ৰীঃ ৫৯৩-খ্ৰীঃ ৫৯৪), সুস্থিত বৰ্মন (খ্ৰীঃ ৫৮৫-খ্ৰীঃ ৫৯৩) আৰু ভাস্কৰ বৰ্মন (খ্ৰীঃ ৫৯৪- খ্ৰীঃ ৬৫০)য়ে বৰ্মন-বংশীয় ৰজা হিচাপে প্ৰাচীন কামৰূপত ৰাজত্ব কৰিছিল। এইসকলৰ ভিতৰত ভাস্কৰ বৰ্মাই অধিক কাল ৰাজত্ব কৰিছিল আৰু তেওঁ 'পূৰ্বাঞ্চলৰ ৰজা'ৰূপে পৰিচিত আছিল।

বৰ্মন বংশীয় ৰজাসকলৰ ভিতৰত ভাস্কৰ বৰ্মনৰ ৰাজত্ব কালতেই শৈৱধৰ্ম অধিক ৰূপত বিকশিত হৈছিল। ভাস্কৰ বৰ্মন সৰ্বস্তৰতে জনপ্ৰিয়, বিদ্যানুৰাগী আৰু কল্যাণকামী নৃপতিৰূপে পৰিচিত আছিল। তেওঁ শিৱৰ পৰমভক্ত আছিল। ডুবি তাম্ৰশাসন, নিধনপুৰ অনুশাসন আৰু তাম্ৰ ফলিত ভগৱান শিৱক স্তুতি কৰালৈ চাই তেওঁ যে শিৱৰ পৰমভক্ত আছিল সেই কথা সহজেই অনুমেয়। হিউৱেন চাঙৰ বিৱৰণীত উল্লেখ থকা মতে, কামৰূপত বৌদ্ধধৰ্মৰ বিপৰীতে দেৱ পূজা কৰিছিল আৰু দেৱ পূজা কৰিবৰ বাবে অসংখ্য মঠ-মন্দিৰ স্থাপন কৰিছিল। হৰ্ষ চৰিতৰ মতে, "From his vary boyhood he took a firen resolve not to pay nomeage to anybody other than the lotus feet of Siva." (Barpujari 314)

৩.৩.৪ শালস্তম্ভ-বংশীয় ৰজাৰ শাসনকালত শৈৱধৰ্মৰ বিকাশ ঃ

ভাস্কৰ বৰ্মনৰ মৃত্যুৰ পাছত শালস্তম্ভ বংশই কামৰূপত এক নতুন ৰাজবংশ প্ৰতিষ্ঠা কৰিছিল। শালস্তম্ভ শালস্তম্ভীয় বংশৰ প্ৰতিষ্ঠাতা আৰু শত্ৰুহন্তা আৰু শক্তিশালী ৰজা নামেৰে পৰিচিত আছিল। তেওঁৰ পৰৱৰ্তী ৰজাকেইজন হ'ল— বিজয়, পালক, কুমাৰ আৰু বজ্ৰদেৱ, শ্ৰীহৰ্ষ, বলবৰ্মন (২য়), শালম্ব, আৰথি, শ্ৰীহৰ্জৰ,বনমাল বৰ্মন, জয়মাল, বলবৰ্মন(৩য়) আৰু ত্যাগসিংহ। এই বংশৰ শক্তিশালী ৰজা বনমাল বৰ্মন আৰু হৰ্জৰ বৰ্মন শিৱৰ ভক্ত আছিল। বনমাল বৰ্মনৰ দিনত তিনিখন তাম্ৰশাসন ক্ৰমে তেজপুৰ, পৰ্বতীয়া আৰু কলিয়াবৰ তাম্ৰ শাসনত শিৱক উপাসনা কৰাৰ বিষয়ে জানিব পাৰি। তেজপুৰ শাসনাৱলীত শিৱৰ বিষয়ে উল্লেখ আছে এনেদৰে— "May that deity with a bow(Siva), on whose head the waters of the Ganges thrown about by the 'recaka' wind have assumed the beauty of a mass of stars,purify you." (D. Sarma 173) বনমাল বৰ্মনে হৰ্জৰ বৰ্মনে নিৰ্মাণ কৰা হেচুক শূলীন মন্দিৰৰ পুনৰ নিৰ্মাণ কৰাইছিল আৰু নৱনিৰ্মিত মন্দিৰলৈ মাটি-হাতী-দেৱদাসী আদি দান কৰিছিল।

বনমাল বৰ্মনৰ কালতেই শৈৱ পৰম্পৰাত দেৱদাসী নৃত্যই স্থান লাভ কৰিছিল। নগাঁও তাম্ৰফলক অনুসৰি বনমাল বৰ্মাই পুত্ৰক ৰাজকীয় দায়িত্ব অৰ্পণ কৰি মহেশ্বৰৰ চিন্তাত মগ্ন হৈ পৰে বুলি কোৱা হয়। তেওঁ জনসমাজত প্ৰতিষ্ঠা কৰা মন্দিৰসমূহ শিক্ষাৰ প্ৰধান কেন্দ্ৰস্থল আছিল। বনমাল বৰ্মনৰ সময়ত শৈৱ ধৰ্মক সাধাৰণ মানৱীয় ধৰ্মৰূপে গ্ৰহণ কৰা হৈছিল। "Lord Siva was regarded as the third god of HinduTrinity which indicates the stability of society. Saivism was regarded as the religion of the common people." (Kalita 72)

৩.৩.৫ পাল বংশীয় ৰজাৰ ৰাজত্বকালত শৈৱধৰ্মৰ বিকাশ ঃ

শালস্তম্ভ বংশৰ পাছত প্ৰাচীন কামৰূপত পালবংশীয় ৰজাসকলে ৰাজত্ব কৰে। ধৰ্মপালৰ তাম্ৰশাসনত উল্লেখ থকা মতে পালবংশত ইন্দ্ৰতুল্য সদৃশ শ্ৰদ্ধাশীল ব্ৰহ্মপাল নামৰ এজন ৰজাই ৰাজত্ব কৰিছিল। "Brahmapala took the tittle 'Pala' perhaps imitating the palas of Bengal and traced disdescent from Naraka.Before his accession,Brahmapala was possibly serving as a governor somewhere in the western part of the Kingdom." (S.L Baruah 122) ব্ৰহ্মপালৰ পাছত তেওঁৰ পুত্ৰ তথা পালবংশৰ শ্ৰেষ্ঠ আৰু শক্তিশালী ৰজাৰূপে পৰিচিত ৰত্নপালে শাসনভাৰ গ্ৰহণ কৰে। ইয়াৰ পাছত ক্ৰমে পুৰন্দৰ পাল, ইন্দ্ৰপাল, গোপাল, হৰ্ষপাল, ধৰ্মপাল আৰু জয়পালে পালবংশৰ ৰজা হিচাপে অধিষ্ঠিত হয়।

পালবংশীয় ৰজাসকলে অসমত শৈৱ ধৰ্মৰ প্ৰসাৰত বিশেষ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছিল। পালবংশৰ প্ৰতিষ্ঠাপক ৰজা ব্ৰহ্মপাল আৰু তেওঁৰ পৰিয়াল শিৱভক্ত আছিল। ৰত্নপালেও শিৱক আৰাধনা কৰিছিল। ৰত্নপালে তেওঁৰ ৰাজকীয় অনুদানৰ সকলোতে ভগৱান শিৱক শ্ৰদ্ধা

জনাইছিল। ৰত্নপালে প্ৰাগজ্যোতিষপুৰৰ নাম সলনি কৰি দুৰ্জয় কৰিছিল। তেওঁৰ শিলালিপিত শিৱক পৰোপকাৰী আৰু পৰম ঈশ্বৰৰূপে অংকন কৰিছে, "In the inscription of Ratnapala Lord Siva is conceived as a benefactors of all and supreme Lord in his concrete form" (Kalita 75) ইন্দ্ৰপালো শৈৱ উপাসক আছিল। গৌহাটী অনুদান অনুসৰি ৰজা ইন্দ্ৰপালে যৰ্জুবেদীয় ব্ৰাহ্মণক ভূমিদান কৰিছিল। তেওঁ অনুদানত শিৱক মংগলময় অৰ্থত ব্যৱহাৰ কৰিছে। দেশপাল একনিষ্ঠ শিৱ সাধক আছিল। তেওঁৰ পুত্ৰ গোপাল শৈৱধৰ্মৰ একান্ত অনুগামী আছিল। গছতলৰ তামৰ ফলকত ভগৱান শিৱক উদ্দেশ্যি মংগল পদ্য লিখোৱাইছিল। ধৰ্মপালো শিৱৰ উপাসক আছিল যদিও তেওঁ তান্ত্ৰিক বৌদ্ধধৰ্মৰ দ্বাৰাও প্ৰভাৱিত হৈছিল; যাৰ বাবে শিৱক অৰ্ধনাৰীশ্বৰৰূপে উপাসনা কৰা হৈছিল। তেওঁৰ দিনত উদ্ধাৰ হোৱা জাৰিকৰা খনামুখ আৰু শুভংকৰ পাটক তাম্ৰলিপিত ভগৱান শিৱক অৰ্ধনাৰীশ্বৰ ৰূপে উল্লেখ কৰাৰ লগতে ডিণ্ডিত এধাৰি নীলপদ্ম ধাৰণ কৰা আৰু আনফালে সৰ্পৰে মেৰিয়াই থোৱা আছিল আৰু কেশৰৰে ৰং কৰা উচ্চ স্তন, আনফালে ধ্ৰুমবৰ্ণসদৃশ দেহ দেখা যায় বুলি উল্লেখ কৰিছিল। "Lord Siva is conceived of as having half his form as woman(ardhayuvatisvara) and having on (one side of)the neck as blue lotus,(on the other side) a newelled hood of serpent attached;(on one side)a lofty breast painted with saffron; (on the other side)besmeared with ashes; who thus appears as it were an amalgamated creation of the amorous and dreadful sentiments" (78) ধৰ্মপাল শিৱভক্ত আছিল যদিও তেওঁৰ দিনতে শাক্ত ধৰ্ম প্ৰাচীন কামৰূপত অধিক প্ৰভাৱশালী হৈ পৰিছিল।

প্ৰাগবৈদিক যুগত আৱিৰ্ভাব হোৱা শৈৱধৰ্ম কালক্ৰমত সমগ্ৰ ভাৰতবৰ্ষত বিস্তাৰিত হৈ পৰে আৰু প্ৰাচীন অসমতো শৈৱধৰ্মই প্ৰসাৰতা লাভ কৰে। প্ৰাচীন অসমত শৈৱধৰ্মই ৰাজপৃষ্ঠপোষকতাত জনপ্ৰিয় আৰু প্ৰসাৰিত হোৱাৰ উমান আমি বিভিন্ন নিদৰ্শনৰ মাজেৰে পাব পাৰোঁ।

৪.০ অসমত প্ৰচলিত শৈৱধাৰাৰ লোকগীত ঃ

অসমত শৈৱ ধৰ্মৰ প্ৰচাৰ আৰু প্ৰসাৰৰ ইতিহাস অতি প্ৰাচীন। সাম্প্ৰতিক সময়তো অসমৰ বিভিন্ন অঞ্চলত বিভিন্নধৰণে ভগৱান শিৱৰ উপাসনা কৰা হয়। শৈৱধৰ্ম চৰ্চাৰ এই নিৰবচ্ছিন্ন প্ৰৱাহটোক পৰিপুষ্ট কৰাত শৈৱধৰ্মীয় লোকগীতসমূহে সহায় কৰিছে। অসমীয়া লোকসাহিত্যত শিৱক বিভিন্ন ৰূপত উপস্থাপন কৰা দেখিবলৈ পোৱা যায়। বুঢ়া গোসাঁই, জটীয়া গোসাঁই, ভোলানাথ, পাগলা গোসাঁই, শংকৰ, ভাংৰা গোসাঁই আদি নামেৰে শিৱ অসমৰ লোকসমাজৰ উপাস্য দেৱতা। শিৱক কেন্দ্ৰ কৰিয়েই শিৱৰ নাম, পগলা-পাৰ্বতীৰ গীত, টোকাৰী গীত, বৈৰাগী গীত আদি বিভিন্ন ভক্তিমূলক লোকগীতৰ প্ৰচলন অসমত আছে। অসমত শৈৱ ধাৰাৰ গীত হিচাপে সদাশিৱৰ নাম, জাগাৰ পূজাৰ গীত, শিৱ মালচি গীত আদি বৰ্তমান লোকসমাজতো প্ৰচলিত হৈয়ে আছে।

লোকগীতত শিৱৰ নানান ৰূপ বৰ্ণিত হৈছে। শিৱৰ মাজেৰে তেওঁৰ চৰিত্ৰৰ বিচিত্ৰ দিশ প্ৰতিভাত হৈছে। অসমৰ লোকসমাজত শিৱ কৃষিজীৱী, দৰিদ্ৰ, ভঙুৱা, চিৰতৰুণ, ৰুচিহীন, সৰল, আমোদপ্ৰিয় আৰু প্ৰেমিক ৰূপত চিত্ৰিত হৈছে। শিৱক বৈদিক আৰু অনা-আৰ্য (জনজাতীয়) ৰীতি-নীতিৰে উপাসনা কৰা হয় যাৰ বাবে তেওঁ সকলোৰে প্ৰিয় দেৱতা। মংগলময় শিৱ প্ৰলয়কাৰী ৰুদ্ৰ ৰূপত অধিষ্ঠিত হৈয়ো অসমৰ জনগণৰ বাবে লৌকিক দেৱতা। অৱতাৰী পুৰুষ বা ঈশ্বৰীয় শক্তিতকৈ লোকসাহিত্যত শিৱৰ লৌকিক ৰূপহে অধিক ৰূপত প্ৰতিভাত হৈছে। অৱশ্যে মৎস্য পুৰাণ, স্কন্ধ পুৰাণ, শিৱ পুৰাণ, কালিকা পুৰাণ আদিত শিৱৰ লৌকিক ৰূপো বন্দিত হৈছে। "The Sanskrit word saiva means relating to the god Shiva, and this term is Sanskrit name both for one of the principal sects of Hinduism and for a member of that sect. It is used as an practices, such as shaivism." (en.w.wikipedia.org)

৪.১ অসমত প্ৰচলন থকা শৈৱধাৰাৰ লোকগীতৰ ভিতৰত সদাশিৱৰ নাম, জাগাৰ পূজাৰ গীত, শিৱ মালচি গীত বিশেষভাৱে জনপ্ৰিয়। অসমৰ অবিভক্ত দৰং জিলাত সদাশিৱৰ নাম বহুলভাৱে প্ৰচলিত। লোকসমাজত ভিন্ন নামেৰে পৰিচিত শিৱই মানুহৰ মনত বিশেষ স্থান অধিকাৰ কৰি আছে। সদাশিৱৰ নামত শিৱক অনা-আৰ্য দেৱতা হিচাপে স্থাপন কৰা হৈছে। মূলতঃ শিৱৰাত্ৰিৰ দিনা বা শিৱপূজাত শিৱৰ বন্দনা কৰি নাৰীসকলে সদাশিৱৰ নাম

পৰিৱেশন কৰে। লৌকিক ৰূপত এইবোৰ গীতত শিৱ উপস্থাপিত হ'লেও শিৱৰ প্ৰতি থকা সস্নেহ ভক্তিভাব গীতৰ মাজেৰে প্ৰতিফলিত হৈছে—

"এ শিৱ তোমাৰ শিৰে গংগা বয়
ত্ৰিশূল ডম্বৰু হাতে
সৰ্পৰ মালা গলে
চন্দ্ৰই পোহৰ কৰি থয়।"

(http://hdl.handle.net/10603/344037)

শিৱৰ বেশভূষা তেনেই সাধাৰণ। লোকদৃষ্টিত বাঘৰ ছাল পৰিধান কৰোঁতা শিৱই হাতত ত্ৰিশূল, ডম্বৰু আৰু গলত সৰ্প লৈ ভাং খাই জীৱন অতিবাহিত কৰে। কৃষিকৰ্মত নিয়োজিত শিৱ অতি সহজে সন্তুষ্ট বুলি অসমৰ লোকসমাজত প্ৰবাদ আছে। সদাশিৱৰ নামত এনেধৰণৰ বৰ্ণনা পোৱা যায়—

"হে ভোলানাথ, ভাং খাই পগলা হ'লা
কুৱেৰক কঠিয়া/খোজাকৈ জটিয়া
ইন্দ্ৰক খোজাগৈ মাটি
ভাং খাই পগলা হ'লা ভোলানাথ।"(তথ্যদাতা-১)

সদাশিৱৰ গীতত শিৱৰ লগতে দেৱী পাৰ্বতীৰো গুণানুকীৰ্তন কৰা হয়। শিৱ-পাৰ্বতীৰ সংসাৰৰ বিচিত্ৰ দিশ এইসমূহ গীতত বৰ্ণিত হৈছে —

জণ্টা মেলি দিয়া চাওঁ মহাদেৱ
জণ্টা মেলি দিয়া চাওঁ।।
জণ্টাৰ ভিতৰে আছে ভাগীৰথী
আমি দৰিশান পাওঁ।

(http://hdl.handle.net/10603/344037)

৪.২ জাগাৰ পূজাৰ গীত ঘাইকৈ দৰং অঞ্চলত প্ৰচলিত। 'জাগৃ' ধাতুৰ পৰা জাগাৰ শব্দৰ উৎপত্তি হৈছে। যাৰ অৰ্থ হৈছে জাগৃত কৰা। জাগাৰ পূজাত ব্যাস ওজাপালিয়ে জাগাৰ গীত পৰিৱেশন কৰে। দৰং জিলাত প্ৰচলিত লোকবিশ্বাস মতে, চাৰিশ বছৰৰ পূৰ্বে পাতিদৰং গাঁৱত অৰ্ধনাৰীশ্বৰ শিৱৰ মূৰ্তি উদ্ধাৰ হৈছিল আৰু উক্তদিনতে জাগাৰ পূজা কৰা হয়। শিৱ জাগাৰ পৰিৱেশন কৰোঁতে মুদ্ৰা লোৱা হয়। মুদ্ৰাগীত সংস্কৃত আৰু অসমীয়া গীতৰ সংমিশ্ৰণ, য'ত ব্যাসৰ ওজাপালিয়ে নৃত্যৰ মাধ্যমেৰে গীত পৰিৱেশন কৰে —

"ও অশুদ্ধ পৃথিৱী অশুদ্ধ সংসাৰ।
অসুৰৰ মলমূত্ৰে পৃথিৱী একাকাৰ।।
অসুৰৰ মলমূত্ৰে পৃথিৱী ভৰি আছে।
অশুদ্ধ পৃথিৱীত নৃত্য কৰোঁ কেন কৰি।।"

(চহৰীয়া ২৫)

লোকসমাজত জাগাৰ পূজাৰ বাহিৰে আন সময়ত জাগাৰ গীত গোৱাতো নিষিদ্ধ বুলি বিবেচিত কিয়নো আন সময়ত এই গীত পৰিৱেশন কৰিলে গোবধ, ব্ৰহ্মবধ আদি মহাপাতক সিদ্ধ হয়।

৪.৩ ব্যাস ওজাপালিয়ে পৰিৱেশন কৰা মালচি গীত দৰং জিলাত ঘাইকৈ প্ৰচলিত। "জাগাৰ পূজাৰ প্ৰসংগত মুদ্ৰা গীত বা জাগাৰ গীত গোৱাৰ লগতে ব্যাস ওলাপালিয়ে মালাশ্ৰী ৰাগত বন্ধা অন্য কিছুমান গীত-পদ গায়। এইবোৰকে মালচি গীত বোলে।" (চহৰীয়া ২৬) মালচি গীত পুৰুষলোকে ৰাতি পৰিৱেশন কৰে। মালচি গীত লোকপৰিৱেশ্য কলাৰ অন্তৰ্গত। কিয়নো এই গীত গাওঁতে তালবাদ্য সংগত কৰা হয় আৰু নৃত্যৰ মাধ্যমেৰে পৰিৱেশন কৰা হয়। মালচি পূজাৰ গীত দুৰ্গাপূজাৰ অষ্টমী তিথিত ডেকা-গাভৰু উভয়ৰ দ্বাৰা পৰিৱেশিত হয়। অৱশ্যে সাম্প্ৰতিক সময়ত ধৰ্মীয় পূজা অবিহনেও এই গীত পৰিৱেশন কৰা হয়। মালচি পূজাৰ গীতত শিৱৰ বন্দনা ঘাইকৈ কৰা হয় যদিও শিৱৰ লগতে পাৰ্বতী আৰু তেওঁলোকৰ দুই পুত্ৰকো আৰাধনা কৰা হয় —

"অ' শংকৰ জাগ দিগম্বৰ ৰাজ
উঠা উঠা প্ৰভু নিদাৰ জাগিয়া
বিহান সূৰ্য গায় কাৰ্তিক গণপতি
তোমাৰ দুই পুত্ৰ দুখৰ উপৰি দুখ পায়।।"

(http://hdl.handle.net/10603/344037)

৪.৪ শিৱক যদিও এক পৰম ব্ৰহ্মশক্তি বুলি জ্ঞান কৰা হয়। কিন্তু অসমৰ পশুপতি, কৃষিৰ দেৱতা শিৱক আৰু ব্ৰহ্মা, বিষ্ণু, মহেশ্বৰ এই ত্ৰিশক্তিৰ এক মহান শক্তি হিচাপেও গণ্য কৰা হয়। অসমৰ লোক সাধাৰণৰ মাজত শিৱক পূজা, হোম-যজ্ঞ আদিৰে সেৱা জনোৱাৰ লগতে লৌকিকভাৱে জনসাধাৰণে শিৱৰ নাম গায়। এই নামৰ মূল অংশ গোৱাৰ পাছতে কীৰ্ত্তনৰ পদ, নামঘোষাৰ ভজন আদিৰ সহযোগত ৰূপায়িত কৰা হয়।

উদাহৰণ ঃ

কি কৰিছা, শিৱ তুমি বেলৰ তলত বহি।
তোমাৰ ভক্তই পূজা দিছে কৃতাঞ্জলি কৰি।।

সংযোগী পদ (কীৰ্ত্তন পুথিৰ পৰা) ঃ

প্রথমে প্রণামো ব্রহ্মৰূপী সনাতন।
তযু নাভি অৱতাৰৰ কাৰণ নাৰায়ণ।।
যুগে যুগে অৱতাৰ ধৰা অসংখ্যাত।

শিৱক মহা বৈষ্ণৱ বুলিও অসমৰ লোকৰ মাজত ধাৰণা আছে। উদাহৰণস্বৰূপে -

শুনা কৈলাসত নামৰ ধ্বনি শুনা।
মহাদেৱ গোসাঁয়ে ডম্বৰ বজাইছে
পার্ব্বতী বজাইছে বীণা। শুনা শিৱ গোঁসাই।
পার্ব্বতী বজাইছে বীণা- শিৱ গোঁসাই।
পার্ব্বতী বজাইছে বীণা।

(প্রথম অংশ)

মই দুৰাচাৰ শুনা কৈলাসত।
কেৱলে তোমাৰ শুনা কৈলাসত।
নামৰ ধ্বনি শুনা, মহাদেৱ গোসাঁইয়ে
ডম্বৰু বজাইছে পার্ব্বতী বজাইছে বীণা
কৈলাসত নামৰ ধ্বনি শুনা

(দ্বিতীয় অংশ)
ক্ষমিয়োক হৰি শুনা কৈলাসত।
লৈয়ো দাস কৰি শুনা কৈলাসত
পশিলো হেৰা শৰণ-শুনা কৈলাসত
নামৰ ধ্বনি শুনা।।
মহাদেৱ গোসাঁইয়ে ডম্বৰু বজাইছে।
পার্ব্বতী বজাইছে বীণা
কৈলাসত নামৰ ধ্বনি শুনা।
(শেষত) শুনা সর্বজন — শুনা কৈলাসত
নেৰিবা কীৰ্ত্তন — শুনা কৈলাসত
ডাকি বোলা ৰাম ৰাম।।

হে শুনা কৈলাসত ডাকি বোলা ৰাম ৰাম।

(তথ্যদাতা ২)

শিৱৰ অপৰিপাটী, বিশৃংখলিত ভঙুৱা জীৱনচিত্র লোকগীতত প্রকাশ পাইছে এনেদৰে -

"কৈলাসলৈ যোৱা যদি
সেইখন শিৱৰ বাৰী।
জুটুলা জুটুলি ভাং
ধঁতুৰাৰে শাৰী।।"

৪.৫ গাৰো পাহাৰ আৰু গোৱালপাৰা জিলাৰ বহু অঞ্চলৰ ডেকা ল'ৰাবোৰে দলীয়ভাৱে মাঘবিহুৰ আগৰে পৰা ভিক্ষা কৰি ফুৰে, যাক 'গাঁও মাগা' নামেৰে জনা যায়। এই 'গাঁও মাগা' প্রথাত তেওঁলোকে এক বিশেষ ধৰণৰ গীত গায় যাক 'শিৱ শিৱো' গীত বোলা হয়। এই শ্রেণীৰ গীত ধর্মীয় ভাৱাপন্ন লোকগীত নহয়; ইয়াত কেৱলমাত্র ভগৱান শিৱৰ নামোল্লেখহে পোৱা যায়। অসমত প্রচলিত বিভিন্ন লোকগীতত শিৱৰ নাম উল্লেখ আছে যদিও এই সকলো গীত ধর্মীয় নহয়। শৈৱধর্মীয় পৰম্পৰাত শিৱই এক বিশেষ স্থান লাভ কৰিছে।

৫.০ সামৰণি ঃ

প্রাচীন কামৰূপত ৰাজকীয় পৃষ্ঠপোষকতাত শৈৱধর্মই বিকাশ লাভ কৰিছিল। ৰাজকীয় পৃষ্ঠপোষকতাত গঢ়ি উঠা শৈৱধর্মই অসমৰ লোকসমাজতো সমাদৰ লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল। ৰাজকীয় পৃষ্ঠপোষকতাত গঢ়ি উঠা ধর্মক মানুহে সহজে অনুসৰণ কৰিছিল। প্রাচীন কামৰূপৰ বেছিভাগ শাসকেই যিহেতু শিৱৰ অনুগামী আছিল, সেই হেতুকে শৈৱধর্মই প্রাচীন কামৰূপৰ বৃহত্তৰ ভূমিভাগত বহুল ৰূপত বিকশিত হৈ পৰিছিল আৰু অসমক শৈৱ উপাসনাৰ কেন্দ্রস্থল হিচাপে গঢ়ি উঠাত সহায় কৰিছিল। প্রাচীন অসমত জল্লেশ্বৰে শিৱ পূজাৰ প্রচলন আৰম্ভ কৰে বুলি প্রবাদ আছে। শৈৱধর্ম প্রাচীন কামৰূপত পালবংশৰ ৰাজত্বকালত অধিক ৰূপত বিকশিত হোৱাৰ কথা ইতিহাসে আমাক জানিবলৈ দিয়ে। শিৱক বিভিন্ন ৰূপত উপাসনা কৰা হৈছিল, যাৰ উল্লেখ বিভিন্ন প্রাচীন সাহিত্য, বিভিন্ন মঠ-মন্দিৰ, কীর্তিচিহ্নৰ ধ্বংসাৱশেষ আৰু বিভিন্ন শিলালিপি,তাম্রলিপি, ভূমিদান পত্র আদিৰ মাজত পোৱা যায়। বৈদ্যদেৱৰ বাহিৰে বাকী প্রাচীন কামৰূপৰ সকলো শাসকে শিৱক উপাসনা কৰিছিল। প্রাচীন অসমত শিৱক পৌৰাণিক দেৱতাৰ

লগতে লৌকিক দেৱতাৰূপেও উপাসনা কৰা হৈছিল। অসমত বড়োসকলৰ 'বাথৌ শিব্রাই', চুতীয়া-বৰাহীসকলৰ 'বুঢ়া-বুঢ়ী', দেউৰী-চুতীয়াসকলৰ 'গিৰা-গিৰাচি', ৰাভাসকলৰ 'লাঙাৰজা', ৰাংখলসকলৰ মাজত 'বলিৰজা' নামেৰে শিৱৰ উপাস্য দেৱতা। বিভিন্ন সময়ত বিভিন্নধৰণে অসমত শিৱক উপাসনা কৰাৰ সাক্ষ্য ইতিহাসে বহন কৰে। অসমৰ লোকসমাজত শিৱ এজন সাধাৰণ লোক। প্ৰাচীন অসমত শিৱক লিংগ আৰু মূৰ্তি দুয়োটা ৰূপতে উপাসনা কৰাৰ লগতে অসমৰ জনসমাজত শিৱৰ মাহাত্ম্য সম্পৰ্কে যথেষ্ট চিন্তা-চৰ্চাৰ সূত্ৰপাত ঘটিছিল। যাৰ প্ৰতিফলন দেখা যায় অসমত প্ৰচলন থকা শৈৱধাৰাৰ লোকগীতৰ মাজত। ❑

প্ৰসংগ টোকা আৰু সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

অসমীয়া ঃ

১. গেইট,এডৱার্ড। অসম বুৰঞ্জী। গুৱাহাটীঃ লয়ার্ছ বুক ষ্টল, ২০১৫
২. চহৰীয়া, কনকচন্দ্ৰ। দৰঙী লোকগীত সংগ্ৰহ। ছিপাঝাৰ ঃ অসম সাহিত্য সভা, ২০০৫
৩. দৰঙী লোকসাহিত্যৰ ৰূপৰেখা। গুৱাহাটীঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ , ২০০৭
৪. দত্ত, শৰৎ কুমাৰ। অসম বুৰঞ্জী। গুৱাহাটীঃবুৰঞ্জীআৰু পুৰাতত্ত্ব বিভাগ , ১৯৯১
৫. নেওগ, মহেশ্বৰ। অসমীয়া গীতি সাহিত্য আৰু অন্যান্য প্ৰৱন্ধাৱলী। গুৱাহাটী ঃ চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, ২০০৮
৬. বৰগোহাঞি, যতীন্দ্ৰ কুমাৰ। অসমৰ উৎসৱ আৰু পূজা। যোৰহাট ঃ নৱীন পুস্তকালয়, ২০০৪।
৭. শৰ্মা, নবীন চন্দ্ৰ। অসমীয়া লোক-সংস্কৃতিৰ আভাস। গুৱাহাটী ঃ বাণী প্ৰকাশ প্ৰাইভেট লিমিটেড, ২০০৭
৮. শিৱপুৰাণ। গুৱাহাটী ঃ বাণী প্ৰকাশ, ১৯৯৫
৯. শৰ্মা, হেমন্ত কুমাৰ। অসমীয়া লোকগীতি সঞ্চয়ন। গুৱাহাটী ঃ নিজ প্ৰকাশন, ১৯৭৪
১০. শৰ্মা দলৈ, হৰিনাথ। অসমত শৈৱ-সাধনা আৰু শৈৱ সাহিত্য। নলবাৰী ঃ পদ্মপ্ৰিয়া লাইব্ৰেৰীৰ হকে, ২০০৩

ইংৰাজী ঃ

১. Barpujari, H.K. Comprehensive History of Assam, Vol I, Publication Board Assam, Guwahati, 1993.
২. Barua, K.L. Early History of Kamrupa, Don Bosco Industrial School Press, Shillong, 1933. Baruah, S.L.
৩. A Comprehensive History of Assam. New Delhi: Munshiram Manoharial Publisher,2015.
৪. Borua, B.K. A Cultural History of Assam (Early Period), Vol I, Central Archeological Library, New Delhi, 1951.
৫. Boruah, N. Historical Geography of Early Assam, DVS Publication, Guwahati, 2010.
৬. Gait, E.A. History of Assam, Eastern Book House, Guwahati, Reprint 2013.
৭. Gogoi, P. "Buddhism in Kamrupa", Journal of the Assam Research Society, Vol XVI, 1962. Sarma, D. "Trends of Religion in Ancient Kamrupa", Journal of Assam Research Society, Vol XVI, 1962.
৮. Sarma, M.M. ed. Inscriptions ofAncient Assam.Gauhati,1978.
৯. Sarmah Doloi, Harinath. Axamot saiva sadhana aru saiva sahitya. Nalbari: padmapriya library,2003.
১০. Sharma, A.K. Emergence of Early Culture in North-East India, Aryan Books International, New Delhi, 1993.
১১. Sarma, Dr, D. Trends of Religion in Ancient Kamrupa, Journal of the Assam Research society, Vol xvi, 1964.

ৱেবছাইট ঃ

http://hdl.handle.net/10603/344037

তথ্যদাতা ঃ

১. হৰেণ শৰ্মা, বয়স-৬০, স্থান- গহপুৰ
২. নৰেণ শৰ্মা, বয়স-৭০, স্থান- তেজপুৰ
৩. পদ্মিনী দেৱী, বয়স-৬৫, স্থান- গহপুৰ

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

যিডু কৃষ্ণমূৰ্তিৰ দৰ্শনত মন আৰু চেতনা

ড০ যদুমণি দত্ত

সহ-অধ্যাপক, দৰ্শন বিভাগ
শ্বহীদ মণিৰাম দেৱান মহাবিদ্যালয়,
চাৰিং, শিৰসাগৰ
ডাক ঃ চাৰিং, পিন-৭৮৫৬৬১
ম'বাইলঃ ৭০০২৬৮০৬৮৭
ই-মেইল ঃ jdmonidutt223@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

মানৱ মন আৰু চেতনাৰ প্ৰকৃত উপলব্ধি এক জটিল প্ৰক্ৰিয়া। সাধাৰণতে যুগে যুগে মানুহৰ চিন্তা আৰু চেতনাক প্ৰচলিত সামাজিক তথা ধাৰ্মিক চেতনাই প্ৰভাৱিত কৰি ৰাখে। সৰ্বসাধাৰণ ব্যক্তিৰ নিজস্ব চেতনাক এনে প্ৰথাগত চিন্তাধাৰাই আবৰি ৰখা দেখা যায়। এয়াই যেন চিৰাচৰিত নিয়ম। এনে চিন্তাধাৰাই পৰিচালিত হোৱা তথা অন্য ব্যক্তিক অনুকৰণ কৰি জীয়াই থকা এক স্বাধীন জীৱনৰ প্ৰতিফলন নহয়। এনে মানৱীয় জীৱন এক দাসত্বৰ জীৱন বুলি কলেও ভুল কোৱা নহয়। ব্যক্তি স্বাধীনতাৰ এই যুদ্ধ প্ৰচলিত কৰ্তৃত্ববাদৰ বিপক্ষে হোৱা উচিত। এই গৱেষণাপত্ৰত কৃষ্ণমূৰ্তি নামৰ দাৰ্শনিকজনে কেনেদৰে ব্যক্তি জীৱন এই মানসিক দাসত্বৰ চিকাৰ হয় আৰু মুক্ত মন কেনেদৰে আবদ্ধতাত সোমায় পৰে তাক উদঙায় দিয়াৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ

চেতনা, সজাগতা, ৰূপান্তকৰণ, দৰ্শন, চিন্তাধাৰা

অৱতৰণিকা ঃ

যিডু কৃষ্ণমূৰ্তি এজন ব্যতিক্ৰমী আধুনিক ভাৰতীয় দাৰ্শনিক। মাদ্ৰাজৰ Theosophical Societyৰ লগত তেওঁ জীৱনৰ প্ৰাৰম্ভিক সময়ত জড়িত আছিল আৰু সকলোৱে তেওঁক এজন প্ৰচুৰ সম্ভাৱনাপূৰ্ণ আধ্যাত্মিক গুৰু ৰূপত গণ্য কৰিছিল। কিন্তু এই অসাধাৰণ ব্যক্তিত্বসম্পন্ন চিন্তাবিদজনে সকলো পূৰ্বধাৰণা নুই কৰি তথা প্ৰচলিত সকলো পৰিকাঠামোৰ বাহিৰত অৱস্থান কৰি মানৱীয় চিন্তা আৰু চেতনাক এক সুকীয়া নতুনত্ব প্ৰদানৰ সন্ধান কৰা দেখা যায়।

কৃষ্ণমূৰ্তিয়ে লক্ষ্য কৰিছিল যে প্ৰায় গৰিষ্ঠসংখ্যক ব্যক্তিয়েই এক দ্বিতীয়ক ব্যক্তিত্বৰ জীৱন যাপন কৰে। আনক অনুসৰণ কৰা নীতিয়েই ব্যক্তিৰ জীৱন পৰিচালিত হয়। এনে ব্যক্তিৰ চিন্তাধাৰাত কোনো নিজস্বতা নাথাকে। যুগে যুগে প্ৰচলিত এনে চিন্তাধাৰাৰ দাসত্বৰ কৱলত প্ৰত্যেক ব্যক্তিয়েই পৰা দেখা যায়। কৃষ্ণমূৰ্তি এনেধৰণৰ চিন্তা চেতনাৰ সম্পূৰ্ণ বিৰোধী আছিল। তেওঁ বিচাৰিছিল যে প্ৰত্যেক ব্যক্তি নিজস্ব স্বচেতনাৰ দ্বাৰা পৰিচালিত হওঁক আৰু আনক অনুসৰণ

কৰাৰ পৰা বিৰত থাকক। তেওঁৰ দৃষ্টিভংগীত প্ৰত্যেকেই নিজেই নিজৰ শিক্ষক হওঁক কাৰণ জীৱনবোধৰ উপলব্ধিৰ প্ৰজ্ঞা অন্য ব্যক্তিয়ে আনি দিব নোৱাৰে, ব্যক্তিয়ে নিজেই উপলব্ধি কৰিব লাগিব। কৃষ্ণমূৰ্তিৰ সমগ্ৰ চিন্তাধাৰাত এনে এক ব্যতিক্ৰমী প্ৰয়াস ব্যক্ত কৰা দেখা যায়, য'ত তেওঁ প্ৰচলিত কৰ্তৃত্ববাদী চিন্তাধাৰাক নুই কৰি জীৱনবোধৰ নতুনত্বৰ প্ৰয়াস দিবলৈ যত্ন কৰিছে। তেওঁৰ মৌলিক চিন্তাধাৰা প্ৰায় ৭৫খন গ্ৰন্থ, ৭০০ শ্ৰব্য সংকলন আৰু প্ৰায় ১২০০ শ্ৰব্য-দৃশ্য সংকলনত বিস্তাৰিত হৈ থকা পোৱা যায়।

২. উদ্দেশ্য আৰু পদ্ধতি ঃ

কৃষ্ণমূৰ্তিৰ দৰ্শনত মানৱ মন আৰু চেতনাক এক ব্যতিক্ৰমী ৰূপত তুলি ধৰি নতুন চিন্তাধাৰাৰ বীজ অংকুৰিত কৰাই এই গৱেষণা পত্ৰৰ উদ্দেশ্য। বিষয়বস্তুৰ অধ্যয়নৰ বাবে বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

মূল বিষয়বস্তুৰ আলোচনা ঃ

আৱদ্ধ মন

মানৱীয় চিন্তাধাৰাৰ এক নতুনত্ব আনিবলৈ গৈ কৃষ্ণমূৰ্তিয়ে ব্যক্ত কৰিছে যে প্ৰচলিত সকলো ধৰণৰ চিন্তাধাৰা যি ব্যক্তিৰ জীৱন শৈল্যত প্ৰভাৱ পেলাব, সেই সকলোবোৰ চিন্তাধাৰা আমাৰ ওপৰত জোৰকৈ জাপি দিয়া চিন্তাধাৰা, এনে প্ৰচলিত চিন্তাধাৰাসমূহে ব্যক্তিৰ জীৱনত আৰোপিত কৰা কোনো যুক্তি থাকিব নোৱাৰে। প্ৰচলিত চিন্তাধাৰাসমূহ যথেষ্ট পুৰণি, অসোৱাহপূৰ্ণ আৰু ই অতীত সময়ৰ লগত খাপ খোৱা ব্যৱস্থাৰ লগত সংগতি ৰাখে। যিহেতু ব্যক্তি বৰ্তমানত জীয়াই থাকে সেইবাবে এনে চিন্তাধাৰাসমূহ চলিত সময়ৰ লগত খাপ খায় নপৰে। প্ৰচলিত কৰ্তৃত্বপূৰ্ণ চিন্তাধাৰাসমূহকে যদি আঁকোৱালি লৈ আগবঢ়া হয় সেইয়া কেতিয়াও সঠিক হ'ব নোৱাৰে। আনহাতে বহুধৰণৰ প্ৰচলিত চিন্তাধাৰা যথেষ্ট অসোৱাহপূৰ্ণ আৰু এনে পূৰ্ব অভিজ্ঞতা প্ৰাপ্ত ধাৰণাসমূহে ব্যক্তিসত্ত্বাক বা ব্যক্তিমনক আৰু অধিক সংকোচিত কৰি ৰখা দেখা যায়। সেইবাবে কৃষ্ণমূৰ্তিয়ে এই পূৰ্বধাৰণাগত চিন্তাধাৰা, পূৰ্ব অভিজ্ঞতালব্ধ ধাৰণাসমূহক খণ্ডন কৰিবলৈ যত্ন কৰিছে কাৰণ ব্যক্তি যদি পূৰ্বধাৰণাৰ বশৱৰ্তী হৈ পৰে, তেন্তে চিন্তন মন আৰু অধিক অবিবেকী হৈ পৰিব আৰু অতীতকে সাৰথি কৰি বৰ্তমানত জীয়াই থাকিব। এই অৱস্থাত ব্যক্তি অৰ্ধ জীৱিত আৰু অৰ্ধমৃত অৱস্থা বুলি তেওঁ গণ্য কৰিছে। আবদ্ধ মনে কেতিয়াও ঘটনাৰ প্ৰকৃত স্বৰূপ 'What is' উপলব্ধি কৰিব নোৱাৰে কাৰণ এনে অৱস্থাত মন কেতিয়াও সজীৱ হৈ নাথাকে। মনৰ এনে অৱস্থা এক দূষিত অৱস্থা যত পূৰ্বসঞ্চিত অভিজ্ঞতাসমূহে মনৰ গতিশীলতা আৰু সজীৱতাক ৰুদ্ধ কৰে।

সেইবাবে ব্যক্তিৰ প্ৰত্যক্ষিত মনে (observer mind) যি বিষয়বস্তুক পৰ্য্যবেক্ষণ কৰে সেয়া এক ভুল দিশেৰে গতি কৰা দেখা যায়। প্ৰত্যক্ষিত মনে এনে অৱস্থাত সজাগতা (awareness) ব্যক্ত কৰে যদিও যিহেতু অতীত অভিজ্ঞতাসমূহে আগৰে পৰাই ব্যক্তি মন অধিকাৰ কৰি বহি থাকে সেইবাবে জ্ঞানাত্মক প্ৰক্ৰিয়াত জ্ঞাতা মনে (knower mind) সঠিক জ্ঞান আহৰণ কৰাত ব্যৰ্থ হয়। কৃষ্ণমূৰ্তিৰ মতে ব্যক্তি এখন প্ৰতিচ্ছবিৰ সাগৰত বাস কৰে (gulf of images)। ব্যক্তিৰ জীৱনত আৰ্জিত পূৰ্ব অভিজ্ঞতাজনিত প্ৰতিচ্ছবিসমূহ তথা পূৰ্ব ধাৰণাবশতঃ মনত আৰোপিত প্ৰতিচ্ছবিসমূহৰ প্ৰতিফলন হোৱা দেখা যায়। যেতিয়াই বৰ্তমানত নতুন ঘটনাৰ সন্মুখীন হোৱা হয় তেতিয়াই পূৰ্ব সজ্জিত অভিজ্ঞতাসমূহৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰি বৰ্তমানক ব্যাখ্যা কৰিবলৈ যত্ন কৰা হয়। যিটো এক ভুল প্ৰক্ৰিয়া বুলি কৃষ্ণমূৰ্তিয়ে বৰ্ণনা কৰিছে। সেইবাবে তেওঁৰ মতে আমাৰ স্মৃতি, পূৰ্ব অভিজ্ঞতা, প্ৰচলিত ধাৰণা তথা কৃতত্ববাদীৰ প্ৰভাবে ব্যক্তিৰ সমগ্ৰ চিন্তাধাৰাক কলুসিত কৰে যাৰ বাবে বৰ্তমানত সত্তাৰ প্ৰকৃত উপলব্ধি সম্ভৱ হৈ নুঠে। ইয়াতকৈ আগুৱাই গৈ কৃষ্ণমূৰ্তিয়ে বৰ্ণনা কৰিছে যে বাহ্যিক প্ৰতিচ্ছবিসমূহৰ প্ৰভাৱত যুক্তিবাদী মনে নিজে কিছু প্ৰতিচ্ছবি (image) প্ৰত্যক্ষিত বস্তু তথা ঘটনাসমূহৰ বিষয়ে তৈয়াৰ কৰে যিয়ে সমগ্ৰ চিন্তন প্ৰক্ৰিয়াক আৰু অধিক জটিল কৰি তোলে। বাহ্যিক প্ৰতিচ্ছবি (external image) আৰু জ্ঞাতা মনে গঠন কৰা আভ্যন্তৰীণ প্ৰতিচ্ছবিয়ে (internal image) ঘটনাৰ প্ৰকৃত স্বৰূপ উৎঘাটন কৰা সলনি এক ধূসৰ পৰিবেশৰ সৃষ্টি কৰা দেখা যায়। এই দুই ধৰণৰ প্ৰতিচ্ছবিৰ প্ৰভাৱত জ্ঞাতা মনে নিজস্ব স্বাধীন চিন্তন শক্তি বহু ক্ষেত্ৰত হেৰুৱায় পেলায় আৰু আনে বিষয়বস্তুৰ বিষয়ে যি জ্ঞান দিয়ে তাকে অন্ধভাৱে

আকোঁৱালি লয়। সেইমতে কৃষ্ণমূর্তিৰ মতে সমগ্ৰ চিন্তন প্ৰক্ৰিয়াক এক ব্যাপক সংশোধনৰ প্ৰয়োজন যাৰ সহায়ৰ ব্যক্তি মনত থকা পূৰ্ব প্ৰতিস্থিত ভ্ৰান্ত ধাৰণাসমূহ নাশ কৰি মনৰ প্ৰকৃত স্বাধীনতা আনি দিব পৰা যায়।

সেইবাবে চেতনাৰ থকা সকলো ধৰণৰ তথ্যক অপসাৰণ কৰাৰ কথা তেওঁ ব্যক্ত কৰিছে। চেতনাৰ সমগ্ৰতাৰ দ্বাৰা তেওঁ চেতনাত নতুন তথ্য যোগান ধৰি পৰিপূৰ্ণতাৰ কথা ব্যক্ত কৰা নাই। নঞৰ্থকভাৱে তেওঁ আমাৰ চেতনাত থকা পূৰ্ব তথ্যসমূহ ৰিক্ত কৰাৰ কথাহে ব্যক্ত কৰিছে। তেওঁৰ মতে তেতিয়াহে চেতনাৰ সমগ্ৰতাৰ উপনীত হব পাৰি। মনৰ সদ্যসক্ৰিয়াত (alertness of mind) তেতিয়াহে থাকিব যেতিয়া আমাৰ চেতনাত কোনো ধৰণৰ পূৰ্বধাৰণা নাথাকিব। অৱশ্যে পূৰ্বজ্ঞান বুলোতে তেওঁ পূৰ্ব অভিজ্ঞতা, স্মৃতিক নিদেৰ্শ কৰিছে আৰু প্ৰযুক্তিগত জ্ঞানক (technological knowledge) ইয়াৰ বাহিৰত ৰাখিছে। পুনৰ চেতনাৰ সমগ্ৰতা মানে চেতনাক ৰিক্ত কৰণ কথা ব্যক্ত কৰিছে। তেওঁৰ মতে এনে পৰিপূৰ্ণ চেতনাহে বস্তু জগত আৰু বিষয়ৰ জগতক বৰ্তমানত যেনে আছে তেনেদৰে চাবলৈ শিকাব, অতীত অভিজ্ঞতাৰ ভিত্তিত নহয়। সেইবাবে আমাৰ চেতনাৰ পূৰ্ব তথ্যসমূহ অপসাৰণৰ দ্বাৰাহে চেতনাৰ পৰিপূৰ্ণতা প্ৰদান কৰিব পাৰি। পাশ্চাত্য দৰ্শনত হুচাৰ্লৰ ৰূপ প্ৰকাশ বিদ্যাবাদত চেতনাৰ বিশুদ্ধীকৰণৰ এনে প্ৰয়াস কৰা দেখা যায় যদিও চেতনাৰ উপাদানসমূহক ৰিক্ত কৰি চেতনাৰ সমগ্ৰতাত উপনীত হ'বলৈ কেৱল কৃষ্ণমূর্তিয়েহে ব্যতিক্ৰমী নঞৰ্থক প্ৰয়াস কৰা দেখা যায়।

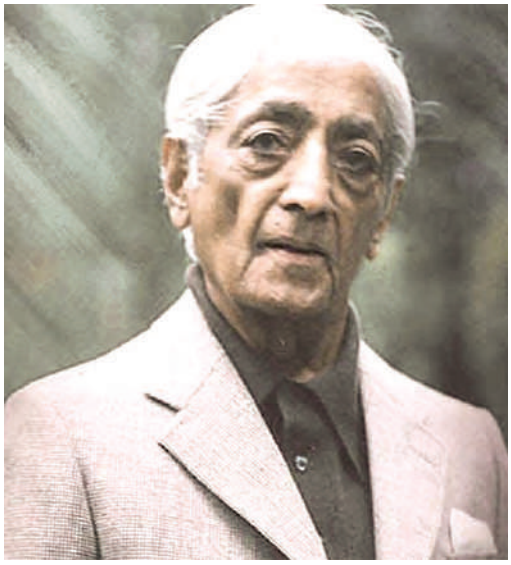

কৃষ্ণমূর্তিৰ মতে ব্যক্তি মন প্ৰাৰম্ভিকতে কোনো ধৰণৰ অসোঁৱাহ নাথাকে কিন্তু মনক প্ৰশিক্ষণ প্ৰাপ্ত কৰি গতি তোলা হয় যাতে ই কুলসিত, অলস আৰু অবদমিত ৰূপত ধৰা দিয়ে। পৌৰাণিক শিক্ষণ প্ৰণালী আৰু তথাকথিত অভ্ৰান্ত আৰু চিৰসত্য বুলি ভবা পুথিগত চিন্তাধাৰাৰ দ্বাৰা ব্যক্তি মনক আগতীয়াকৈ সজ্জিত কৰা হয়। অন্য ধৰণেৰে কবলৈ গলে চৰ্ত আৰোপিত ব্যক্তিমন ঠন ধৰি উঠে। কৃষ্ণমূর্তিয়ে এই ক্ষেত্ৰত তীব্ৰ অসন্তোষ ব্যক্ত কৰিছে। আমাৰ চিন্তন মনক প্ৰচলিত, শৈক্ষিক ব্যৱস্থাই অন্ধকাৰৰ কাৰাগাৰলৈ নিক্ষেপ কৰে য'ত আমাৰ মনে সহজতেই অন্য প্ৰতিস্থিত ব্যক্তিয়ে ব্যক্ত কৰা কথা বিনা বাধাই মানি লোৱা হয়। ইয়াৰ দ্বাৰা অন্য ব্যক্তিৰ চিন্তাধাৰা আৰু জীৱনশৈলী অনুসৰণ কৰি নিজৰ জীৱনশৈলীত একাত্ম হবলৈ প্ৰয়াস কৰা হয়। কৃষ্ণমূর্তিৰ মতে, এইয়া এক মুৰ্খামিৰ বাহিৰে অন্য একো নহয়। কিন্তু মুক্ত (free), সজীৱ (afresh), ৰিক্ত (empty) মনে এনেধৰণৰ আবদ্ধতাত সোমাই নপৰে। মনৰ আৱদ্ধতাৰ বিষয়ে কৃষ্ণমূর্তিয়ে এনেদৰে কৈছে — 'As I said seeking and finding is a waste of energy when the mind itself is unclear, confused, frightened, miserable, anxious. What is the good of its seeking? Out of Chaos, what can you find except more chaos.' (On God, P-137)'

সেইবাবে কৃষ্ণমূর্তিৰ চিন্তাধাৰাত প্ৰাথমিক দিশটো হৈছে মনৰ চিন্তন প্ৰক্ৰিয়াক ভালদৰে বুজি পোৱা। ইয়াৰ দ্বাৰা চিন্তাধাৰাক এক বিশুদ্ধ তথা মুক্ত ৰূপ দিয়াৰ দিশ নিহিত আছে। যেতিয়ালৈকে মনৰ চিন্তন ক্ৰিয়াকলাপ সমূহক বুজা নাযায় তেতিয়ালৈকে মনৰ এই সংকোচিত প্ৰণালী অনুসৰণ কৰা কথা বুজিব নোৱাৰি। এটা অস্পষ্ট, বেমেজালি, ভয়াতুৰ তথা অস্থিৰ মনে কেতিয়াও শুদ্ধ চিন্তাধাৰা আগবঢ়াব নোৱাৰে, একেখিনি কথা এক অৱদমিত মনত ক্ষেত্ৰতো প্ৰযোজ্য। কৃষ্ণমূর্তিৰ সমগ্ৰ দাৰ্শনিক চিন্তাধাৰা ব্যক্তি মনৰ বিশুদ্ধতা নিৰ্মাণ কৰাতেই যুক্ত হৈ আছে। মানৱীয় জীৱনশৈলী তথা

চিন্তাধাৰাৰ সঠিক ক্ৰম নিধাৰণ কৰিবলৈ যাঁওতে বহু যুগ যুগ প্ৰচলিত তথা প্ৰতিস্থিত জ্ঞানৰ ভেটি কৃষ্ণমূৰ্তিয়ে নুই কৰা দেখা যায়। নঞৰ্থক পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰি কৃষ্ণমূৰ্তিয়ে প্ৰায় একক ভাৱেই একঘেয়ামী চিন্তাধাৰাসমূহক নুই কৰিছে। কৃষ্ণমূৰ্তিৰ মতে Life is to find out the order out of the disorders of this world. এক ব্যাপক চিন্তাধাৰাৰ পৰিবৰ্তনৰ বাবে সেইবাবে চেতনাক এক সমগ্ৰতাৰ ৰূপ দিয়াৰ প্ৰয়োজন। সেই অনুসৰি তেওঁ Totality of Consiousness বা চেতনাৰ সমগ্ৰতাৰ কথা ব্যক্ত কৰিছে। আৱদ্ধ মনৰ পৰা এক মুক্ত মনৰ স্তৰত তেতিয়াহে উপনীত হব পৰা যাব যেতিয়া আমাৰ চেতনাই এক বিশুদ্ধ সচেতন স্তৰত উপনীত হ'ব।

কৃষ্ণমূৰ্তিৰ দাৰ্শনিক দৃষ্টিকোণত চেতনাৰ সমগ্ৰতা মানে প্ৰতিমুহূৰ্ততে চেতনা সজীৱ তথা ৰিক্ত কৰি ৰখা। কৃষ্ণমূৰ্তিৰ মতে ব্যক্তিয়ে আনৰ জীৱনক অনুসৰণ কৰাতকৈ নিজক সজ্জিত কৰা প্ৰয়োজন, যিহেতু কোনো ব্যক্তিয়ে কেতিয়াও আন ব্যক্তিৰ ধৰণে জীৱন যাপন নকৰে, নিজস্ব ভাৱেহে জীৱন যাপনহে কৰে। সেইবাবে আন ব্যক্তিৰ জীৱনশৈলী অনুকৰণ কৰা কেতিয়াও সঠিক নহয়, যি ব্যক্তিৰ স্বশৈলীত প্ৰতিভাত বাধাগ্ৰস্ততাৰ সৃষ্টি কৰে। ব্যক্তিৰ মানসিক ক্ৰিয়াকলাপত পৰিবেশ, শতিকাজোৰা পৰম্পৰাগত বিশ্বাস, ধাৰ্মিক নিৰ্বিচাৰবাদ, শংকা, ভয়, বিৰক্তি ইত্যাদিৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈ থাকে আৰু ইয়ে আৱদ্ধ বা আৰোপিত মনৰ কাৰক হৈ পৰে। জীৱনৰ এই সকলোবোৰ খেলি মেলিৰ পৰা ব্যক্তি মন যেতিয়ালৈকে মুক্ত হব নোৱাৰিব তেতিয়ালৈকে সঠিক চেতনাৰ দ্বাৰা ব্যক্তি উত্তৰণ সম্ভৱ নহ'ব।

কৃষ্ণমূৰ্তিৰ মতে মনক চেতন আৰু অচেতন এই দুই ভাগত বিভক্ত কৰিব পাৰি। চেতন মন হৈছে মনৰ বাহ্যিক দিশ আৰু অচেতন মন হৈছে মনৰ আভ্যন্তৰীণ দিশ। সাধাৰণ ব্যক্তিয়ে মনৰ বাহ্যিক দিশৰ দ্বাৰা পৰিচালিত হয় যাৰ বাবে প্ৰায়ে জীৱনত জটিলতা, বিৰোধিতা আৰু শংকাবোধৰ মুখামুখি হোৱা দেখা যায়। কৃষ্ণমূৰ্তিৰ মতে মনৰ আৱশ্যকীয় দিশটো হৈছে অচেতন আভ্যন্তৰীণ দিশটো উন্মোচিত কৰা, যি ব্যক্তিৰ সঠিক স্বাধীন মনৰ সোৱাদ দিব পাৰে। মনৰ এই অচেতন অংশক যিহেতু দমন কৰি ৰখা হয় সেইবাবে ব্যক্তি মন আবদ্ধতাত সোমাই পৰে। এই অচেতন অংশতেই প্ৰকৃত শক্তি লুকাই থাকে যাক উৎঘাটনৰ প্ৰয়োজন, যি মুক্ত আৰু স্বাধীন মন তথা চেতনাৰ পৰিচায়ক।

সামৰণি ঃ

কৃষ্ণমূৰ্তিৰ দৰ্শনত মন আৰু চেতনাৰ বিশ্লেষণত এক নতুনত্ব দেখা যায়। চেতনাৰ সমগ্ৰতাত উপনীত হ'বৰ বাবে এওঁ চেতনাত থকা সকলো পূৰ্বৰ অভিজ্ঞতা তথা উপাদানক ৰিক্ত কৰাৰ কথা ব্যক্ত কৰিছে, যি দাৰ্শনিক দৃষ্টিকোণত নৱ সংযোজন বুলি ক'ব পাৰি। আৱদ্ধ মনৰ পৰা মুক্ত মনৰ পৰ্যায়ত উপনীত হ'বৰ বাবে নিশ্চিত ভাৱে ব্যক্তিৰ মন পূৰ্ব ধাৰণা মুক্ত হ'ব লাগিব। তেতিয়াহে মনৰ সজীৱতা, সক্ৰিয়তা আৰু সৃজনশীলতা প্ৰকাশ পাব। ব্যক্তিয়ে যাতে নিজস্ব চিন্তা-চেতনাৰে জীৱনৰ সঠিক দিশত পৰিচালিত কৰিব পাৰে আৰু ব্যক্তি স্বাধীনতা প্ৰচলিত আৱেস্তনিৰ পৰা মুক্ত হৈ একক আৰু স্ব-চিন্তাধাৰাৰে পৰিচালিত হ'ব পাৰে তাৰেই প্ৰয়াস কৃষ্ণমূৰ্তিৰ দৰ্শনত দেখা যায়। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

Krishnamurti, J. :Truth and Actuality. Krishnamurti Foundation of India.Chennai.1977
:On God. Krishnamurti Foundation of India.Chennai.1999
:Freedom from the Known. Riders. U.K. 2010
:The Awakening of Intelligence. Penguin Random House India Pvt.Ltd. Gurgoan. 2000

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

স্বৰ্ণ বৰাৰ উপন্যাসত প্ৰতিফলিত জনজাতীয় মৃতক সম্পৰ্কীয় লোকাচাৰ

(‘মেঘনা যমুনা থেমচ্ আৰু ‘দুধনৈৰ বেদনা’ উপন্যাসৰ বিশেষ উল্লিখনসহ)

ৰিমঝিম গগৈ

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনত স্বকীয় প্ৰতিভাৰে উজ্বলা নক্ষত্ৰস্বৰূপ হৈছে ঔপন্যাসিকা স্বৰ্ণ বৰা। মুঠ ১৮খন উপন্যাস ৰচনাৰে তেওঁ অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী কৰাত সহায় আগবঢালে। এইখিনিতে উল্লেখনীয় যে স্বৰ্ণ বৰাৰ সৰহসংখ্যক উপন্যাসেই সেই নৈপৰীয়া জনজাতীয় লোকসকলৰ জীৱনক আধাৰ হিচাপে লৈ ৰচিত। তেওঁ জনজাতীয় লোকসকলৰ সামাজিক-সাংস্কৃতিক দিশসমূহক ক্ষেত্ৰভিত্তিক অধ্যয়নৰ জৰিয়তে উপন্যাসত উপস্থাপন কৰাৰ তথ্য পোৱা যায়। তেনে দুখন বিশেষ উপন্যাস ‘মেঘনা যমুনা থেমচ্ আৰু ‘দুধনৈৰ বেদনা’। ‘মেঘনা যমুনা থেমচ্ শীৰ্ষক উপন্যাস চাহ জনজাতীয় জীৱনক লৈ ৰচনা কৰিছে আৰু ‘দুধনৈৰ বেদনা’ ৰাভাসকলৰ জীৱনৰ লৈ ৰচনা কৰিছে। দুয়োখন উপন্যাসতে দুয়োটা বিশেষ জনজাতিৰ সমাজ তথা সংস্কৃতিৰ লগত জড়িত ভালেখিনি দিশ সন্নিবিষ্ট কৰিছে। তাৰ ভিতৰত মৃতক সম্পৰ্কীয় লোকাচাৰ অন্যতম।

প্ৰস্তাৱিত গৱেষণা পত্ৰখনিত বিষয়ৰ পৰিসৰৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি ‘মেঘনা যমুনা থেমচ্ত সন্নিবিষ্ট চাহ জনাজাতিৰ আৰু ‘দুধনৈৰ বেদনা’ উপন্যাসত সন্নিবিষ্ট ৰাভা জনজাতিৰ মৃতক সম্পৰ্কীয় লোকাচাৰ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হ’ব।

সূচক শব্দ ঃ

উপন্যাস, চাহ জনজাতি, মৃতক, ৰাভা জনজাতি, লোকাচাৰ, সংস্কৃতি।

গৱেষক ছাত্ৰী, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী
ম’বাইল ঃ ৭৫৭৭৯৪০১৭৭
ই-মেইল ঃ rimjhimgogoi01@gmail.com

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

০.১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

অসম তথা উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ সংগমস্থল। প্ৰত্যেকেই স্বকীয় সামাজিক -সাংস্কৃতিৰে পৰম্পৰাৰে জীৱন-নিৰ্বাহ কৰি আহিছে। জনগোষ্ঠীয় সমাজখনলৈ মন কৰিলে দেখা যাব যে বেছিসংখ্যকেই নদীৰ পাৰত

পাহাৰীয়া অঞ্চলত বসবাস কৰে। এনেধৰণৰ নৈপৰীয়া জনজাতীয় লোকসকলৰ জীৱনৰ উপস্থাপনেই স্বৰ্ণ বৰাৰ উপন্যাসৰ থূল। অসমীয়া সাহিত্যৰ মহিলা ঔপন্যাসিকসকলৰ ভিতৰত স্বৰ্ণ বৰাৰ নাম উল্লেখনীয়। জীৱনৰ বেছিভাগ সময়েই অসম তথা উত্তৰ পূৰ্বাঞ্চলৰ বিভিন্ন জনজাতীয় সমাজত ঘূৰি-ফুৰি উপন্যাসৰ সমল আহৰণ কৰিছিল। সেয়ে তেওঁৰ দ্বাৰা ৰচিত উপন্যাসসমূহ ক্ষেত্রভিত্তিক অধ্যয়নৰ ফচল বুলিব পাৰি। স্বৰ্ণ বৰাৰ উপন্যাসৰ আৰু এটি মন কৰিবলগীয়া দিশ যে বেছিভাগ উপন্যাসৰ শিৰোনামত একোখন নদীৰ নাম থাকে। নদী আৰু মানুহৰ মাজৰ সম্পর্ক তেওঁৰ উপন্যাসৰ এটি অন্যতম বিশেষত্ব। নদী কন্যাৰূপে খ্যাত স্বৰ্ণ বৰাৰ দ্বাৰা ৰচিত উপন্যাস সমূহ হৈছে -ডিয়ুং নদীৰ গীত, চিমচাং নদীৰ হাঁহি, সোৱণশিৰিত ৰেলৰ উকি, কুণ্ডিল পানীৰ নিছিঙা ধাৰ, সোণাই ৰূপাই আৰু এখন নদী, পাগলাদিয়াৰ সোণালী ৰং, গংগা নদীৰ নতুন দিগন্ত, কিলিং নদীৰ প্রেম, তিতাই মৰা সুঁতিৰ সুৰধ্বনি, নদী প্রেম আৰু অৰণ্য, ৰুদ্র তীর্থ ব্রহ্মপুত্র, লুইত পাৰত উষাৰ কিৰণ, নদীৰ পাৰৰ সুগন্ধি কবিতা আৰু ব্রহ্মপুত্রৰ হৃদয় স্পন্দন।

জনজাতীসমূহৰ সামাজিক-সাংস্কৃতিক জীৱনৰ লগত জড়িত প্রায়বোৰ দিশেই উপন্যাসত সন্নিবিষ্ট ৰিছে। একোটা জনজাতিৰ গৃহ-নির্মাণ প্রণালী, কৃষি পদ্ধতি, খাদ্যভাষ, সাজ-পাৰ, উৎসৱ-পার্বণ, জন্ম-বিবাহ-মৃত্যুৰ লগত জড়িত লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস এই সকলোবোৰৰ সুন্দৰ বিৱৰণ উপন্যাসসমূহত পোৱা যায়। এনে তথ্যসমৃদ্ধ স্বৰ্ণ বৰাৰ উল্লেখযোগ্য দুখন উপন্যাস হৈছে চাহ জনজাতিৰ জীৱন ভিত্তিক উপন্যাস 'মেঘনা যমুনা থেমচ আৰু ৰাভা জনজাতিক লৈ লিখা উপন্যাস 'দুধনৈৰ বেদনা'। দুয়োখন উপন্যাসতে বিশেষ জনজাতিটোৰ জীৱন নির্বাহ প্রণালীৰ পৰা আৰম্ভ কৰি সাংস্কৃতিক দিশলৈকে পার্যমানে সন্নিবিষ্ট কৰাৰ চেষ্টা পৰিলক্ষিত হয়। তাৰ ভিতৰত মৃতক সম্পর্কীয় লোকাচাৰ অন্যতম।

প্রস্তাৱিত গৱেষণা পত্রখনিত স্বৰ্ণ বৰাৰ উপন্যাস 'মেঘনা যমুনা থেমচ্ত প্রতিফলিত চাহ জনজাতি আৰু 'দুধনৈৰ বেদনা' উপন্যাসত প্রতিফলিত ৰাভা জনজাতিৰ মৃতক সম্পর্কীয় লোকাচাৰ-বিশ্বাস সম্পর্কে আলোচনা কৰাৰ প্রয়াস কৰা হ'ব।

০.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

গৱেষণাপত্রখনিৰ মূল উদ্দেশ্য হৈছে ঃ

(১) 'মেঘনা যমুনা থেমচ্ৰ চাহ জনজাতিৰ মৃতক সম্পর্কীয় লোকাচাৰ সম্পর্কে অধ্যয়ন কৰা।

(২) 'দুধনৈৰ বেদনা'ত প্রতিফলিত ৰাভা জনজাতিৰ মৃতক সম্পর্কীয় লোকাচাৰ সম্পর্কে অধ্যয়ন কৰা।

০.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্রখনি প্রস্তুত কৰোঁতে বর্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হ'ব। লগতে প্রয়োজন অনুসৰি বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰো সহায় লোৱা হ'ব।

০.৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

স্বৰ্ণ বৰাৰ আটাইবোৰ উপন্যাসৰ সকলো দিশ সামৰি এখন গৱেষণা পত্রতে অধ্যয়ন কৰা সম্ভৱ নহয়। সেয়েহে তেওঁৰ দ্বাৰা ৰচিত দুখন উপন্যাসহে আমাৰ গৱেষণা পত্রৰ পৰিসৰত অন্তর্ভূক্ত কৰা হৈছে আৰু সেই উপন্যাস দুখন হৈছে - 'মেঘনা যমুনা থেমচ' আৰু 'দুধনৈৰ বেদনা'।

১.০ স্বৰ্ণ বৰাৰ উপন্যাসৰ পৰিচয় ঃ

নদীকন্যাৰূপে খ্যাত স্বৰ্ণ বৰাৰ অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যৰ জগতখনত এক স্বকীয় স্থান আছে। তেওঁৰ দ্বাৰা ৰচিত বেছিভাগ উপন্যাসতে অসম তথা উত্তৰ পূৰ্বাঞ্চল জনজাতীয় সমাজখন প্রতিফলিত হৈছে। সেই উপন্যাসসমূহ হৈছে- ডিয়ুং নদীৰ গীতত, প্রতিফলিত হৈছে ডিমাছা সমাজ- সংস্কৃতি, চিমচাং নদীৰ হাঁহি উপন্যাসত আছে গাৰোসকলৰ জীৱন কাহিনী, পাগলাদিয়াৰ সোণালী ৰং উপন্যাসত নলবাৰীৰ সংহাৰী বানপানীৰ ছবি, 'লুইত পাৰৰ কণ্ঠ' অসম আন্দোলনৰ পট'ভূমিত ৰচিত, 'সোৱনশিৰিত ৰেলৰ উকিত আছে মিছিংসকলৰ জীৱনচর্যা, 'নদীৰ পাৰৰ সুগন্ধি কবিতা'ত আছে নৈপৰীয়া খাটি খোৱা লোকৰ জীৱন শৈলী, দুধনৈৰ বেদনা' ৰাভাসকলৰ পটভূনিত ৰচিত, মেঘনা যমুনা থেমচ'ত চাহ জনগোষ্ঠীৰ জীৱন শৈলী, আই নদীৰ উচুপনি'ত আছে বড়োসকলৰ সাম্প্রদায়িক সংঘাত আৰু এগৰাকী ধর্ষিতাৰ জীৱন কাহনী, 'তিতাই মৰা সুঁতিৰ সুৰধ্বনিত আছে অসমৰ শিখসকলৰ ছবি, বুটীদিহিঙৰ মৌপ্যা আৰু আচার্যত' অসমৰ টাইফাকেসকলৰ সমাজ-সংস্কৃতি, কুণ্ডিল পানীৰ নিছিঙা ধাৰত আছে শদিয়াৰ দেউৰীসকলৰ সমাজ-সংস্কৃতি। 'গঙ্গা

নদীৰ নতুন দিগন্তত' আধ্যাত্মিকতাবাদ আৰু নাৰীবাদ দুটা ভিন্নসুৰ প্ৰতিফলিত হৈছে। ৰুদ্ৰ তীৰ্থ ব্ৰহ্মপুত্ৰত অসমৰ শিৰৰ উপসনাস্থলী দৌল, দেৱালয়, মন্দিৰসমূহৰ বৰ্ণনা আছে, সোণাই ৰূপাই আৰু এখন নদী'ত বনাঞ্চল ধ্বংসৰ লগতে বড়ো যুবতীৰ নেপালী যুৱকৰ সৈতে হোৱা প্ৰণয়ৰ কাহিনী আছে আৰু নদী প্ৰেম আৰু অৰণ্য উপন্যাসত অসমৰ অভয়াৰণ্য আৰু তাত হোৱা অবৈধ লুণ্ঠনৰ কাহিনী সুন্দৰ ৰূপত উপস্থাপন কৰিছে।

২.০ 'মেঘনা যমুনা থেম্‌চ' উপন্যাসত প্ৰতিফলিত চাহ জনজাতিৰ মৃতক সম্পৰ্কীয় লোকাচাৰ ঃ

ইংৰাজ শাসনৰ সময়ত ছোটনাগপুৰ, চিংভূম, ৰাঁচি, তেলেংগানা আদি ভাৰতবৰ্ষৰ কিছুমান ঠাইৰ পৰা অসমৰ চাহ বাগিচাসমূহত কাম কৰিবৰ বাবে ইংৰাজে বনুৱা আনিছিল। যিসমূহ ঠাইৰ পৰা বনুৱা আনিছিল সেই ঠাইসমূহৰ বেছিভাগতে সেই সময়ছোৱাত দুৰ্ভিক্ষই দেখা দিছিল। কৰ্ম সংস্থাপন আৰু ভাত-কাপোৰৰ প্ৰলোভনেৰে ইংৰাজে অসমলৈ বনুৱা আনিছিল। সেই বনুৱা অনা জাহাজ কেইখনৰ নাম আছিল মেঘনা, যমুনা, থেম্‌চ। সেয়ে উপন্যাসখনৰ শিৰোনামো সেই নামেৰেই ৰাখিলে 'মেঘনা যমুনা থেম্‌চ। চাহ বাগিচাতে যুগ যুগ ধৰি কাম কৰি এই চাহ বনুৱাসকলৰ সমাজখনেই পৰৱৰ্তী সময়ত চাহ জনজাতীয় সমাজ হিচাপে পৰিচিত লাভ কৰিলে। অসমলৈ আহিও তেওঁলোকে নিজস্ব সামাজিক-সাংস্কৃতিক ৰীতি-নীতিসমূহ পালন কৰি থাকিলে। এই ৰীতি-নীতিসমূহ তেওঁলোকৰ লোৰ-সংস্কৃতিৰ অন্যতম অংশ।

চাহ জনজাতীয় লোকসকলৰ জীৱনক লৈয়ে স্বৰ্ণ ৰৱাই লিখিছিল 'মেঘনা যমুনা থেম্‌চ' উপন্যাস। উপন্যাসখনত চাহ জনজাতিৰ লোকসংস্কৃতিৰ অন্তৰ্গত বিভিন্ন দিশৰ সুন্দৰ ৰূপত বৰ্ণনা পোৱা যায়। তাৰ ভিতৰত মৃতক সম্পৰ্কীয় লোকাচাৰ অন্যতম।

মৃত্যু জীৱনৰ এক চিৰন্তন সত্য। পৃথিৱীৰ প্ৰত্যেক সমাজেই এই চিৰন্তন সত্যক মানি মৃতকৰ আত্মাৰ সদগতি কামনা কৰি পৰম্পৰাগত নীতি-নিয়ম পালন কৰে। এইক্ষেত্ৰত চাহ জনজাতিও ব্যতিক্ৰম নহয়। তেওঁলোকৰ সমাজত কোনো ব্যক্তিৰ মৃত্যু হ'লে মৃতকৰ শ দাহ কৰাৰ পৰা আৰম্ভ কৰি অন্যান্য সময়তো পৰম্পৰাগত জনজাতীয় লোকাচাৰ পালন কৰে। 'মেঘনা যমুনা থেম্‌চ' উপন্যাসতো ইয়াৰ বৰ্ণনা পোৱা যায়।

প্ৰায়বিলাক জনজাতীয় সমাজতে কোনো ব্যক্তিৰ মৃত্যু হ'লে শটো নুৱাই-ধুৱাই নতুন কাপোৰ পিন্ধোৱাৰ নিয়ম আছে। চাহ জনজাতীয় সমাজো ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। 'মেঘনা যমুনা থেম্‌চ' উপন্যাস খনত যেতিয়া দিগালু কাকা চৰিত্ৰৰ মৃত্যু হৈছিল তেতিয়া

"দুজনমানে দিগালু কাকাৰ শটো বাহিৰলৈ দাঙি আনিলে। কেইজনমানে হালধি সানি শটো ধুৱালে, নতুন কাপোৰ পিন্ধালে আৰু নতুন কাপোৰেৰে শটো ঢাকি দিলে"। (মেঘনা যমুনা থেম্‌চ', পৃষ্ঠা - ৯৩)

নশ্বৰ দেহ দাহ কৰিবৰ বাবে শ্মশানলৈ বাঁহৰ চাঙিত তুলি নিয়ে। চাৰিওফালে চাৰিজন নিজৰ পৰিয়ালৰ মানুহেহে চাঙিখন দাঙি লোৱাৰ নিয়ম চাহ জনজাতিৰ সমাজত আছে। শ্মশানলৈ মৃতদেহ লৈ যোৱাসকলে হাতত বগা কাপোৰ বান্ধি এটুকুৰা লোহা লৈ বাটে-বাটে ব'ল হৰি ব'ল- হৰি বোল ধ্বনি দি যায়। শ্মশানৰ যিডোখৰ মাটিত চিতা সাজি মৃতদেহটো দাহ কৰা হ'ব সেই মাটিডোখৰ দেৱতাৰ পৰা কিনি লৈহে বাকীখিনি কাম কৰিব পাৰে।

"শ্মশানত তেওঁলোকৰ মাটি কিনা নিয়ম। সেইহে লঐণে পইচা দি দেৱতাৰ পৰা মাটি কিনি ললে আৰু সেই মাটি টুকুৰাতেই দিগালু কাকাৰ চিতাখন সজা হ'ল। মাটি কিনা পইচাখিনি চন্দ্ৰ সূৰ্যক সাক্ষী কৰি দাহ কৰাৰ উত্তৰফালে থৈ দিলে। লঐণহঁতে চাঙিখন লৈ চিতাখনৰ চাৰিওফালে চাৰিপাক ঘুৰিলে। তাৰ পাছত দিগালু কাকাৰ দেহা চিতাখনত তুলি দিলে"। ('মেঘনা যমুনা থেম্‌চ', পৃষ্ঠা - ৯৪)

শ দাহ কৰি হোৱাৰ পিছত মৃতকৰ ঘৰখন পৰিয়ালৰে মহিলাসকলে সাৰি-মচি চাফা কৰি তুলসী পানী ছটিয়াই শুদ্ধিকৰণ কৰে। ধূপ-ধূনা জ্বলোৱা হয়। মৃতকৰ পুত্ৰই শ্ৰাদ্ধত পিণ্ড দিব লাগে। তাৰ বাবে দহদিন সম্পূৰ্ণ ব্ৰত পালন কৰি নীতি নিয়মেৰে চলিব লাগে। ব্ৰতৰ সময়ছোৱাত মূৰত বগা কাপোৰ বান্ধিব লাগে। লগতে ব্ৰতৰ কেইদিন নিৰামিষ খাদ্য খাব লাগে।

"সি দহদিন বাহিৰলৈ যাব নোৱাৰিব, কাৰো হাতেৰে পানী এটোপাও খাব নোৱাৰিব, চকি বেঞ্চত বহিব নোৱাৰিব, আৰু ওখ তক্তাত শুব নোৱাৰিব"। ('মেঘনা যমুনা থেম্চ', পৃষ্ঠা - ৯৫)

চাহ জনজাতিৰ সমাজত মৃতকৰ তিলনীৰ দিনা নিমখ পাতত দি তিতা ভাত খোৱাটো এটা নিয়ম। তিনিদিনৰ দিনা তিলনী আৰু দহদিনৰ দিনা দহাঘাট পতা হয়। তিলনী আৰু দহাঘাট দুয়োদিনাই মৃতকৰ আত্মাই খাবৰ বাবে মৰিশালিলৈ যোৱাৰ বাটত আহাৰ দি আহে।

"কিয়নো মৃতকৰ আত্মাই খঙতে শ্মশানৰ পৰা ঘৰলৈ আহোতে বাটতে আহাৰ দেখি ৰংমনে খাই উভতি যাব"। ('মেঘনা যমুনা থেম্চ', পৃষ্ঠা - ৯৬)

অৱশ্যে চাহ জনজাতিৰ সকলো সমাজতে মৃতদেহ সৎকাৰ কৰাৰ নিয়ম বেলেগ বেলেগ। কোনো কোনো সমাজত দাহ সংস্কাৰৰ পৰিৱর্তে গাঁত খান্দি মাটিত পুতাৰহে নিয়ম আছে। কিছুমান সমাজত মৃতদেহ মূৰৰ ফালে শিল পুতি দিয়ে, কোনোৱে ছাগলি বলি দি তেজ ঢালি দিয়ে, আকৌ কোনোৱে লাওপানীও ঢালে।

এনেদৰে স্বর্ণ বৰাই 'মেঘনা যমুনা থেম্চ' উপন্যাসত চাহ জনজাতিৰ মৃতক সম্পর্কীয় লোকাচাৰৰ বর্ণনা দিয়া দেখা যায়।

৩.০ 'দুধনৈৰ বেদনা' উপন্যাসত প্রতিফলিত ৰাভা জনজাতিৰ মৃতক সম্পর্কীয় লোকাচাৰ ঃ

অসমৰ খিলঞ্জীয়া ভূমিপুত্রসকলৰ ভিতৰত অন্যতম জনজাতি ৰাভা জনজাতি। দুধনৈৰ পাৰত বসবাস কৰা ৰাভাসকলৰ জীৱন-সংগ্রাম, সংঘর্ষ, সংস্কৃতি- এই দিশসমূহ স্বর্ণ বৰাই তেওঁৰ দুধনৈৰ বেদনা' উপন্যাসৰ মূল উপজীব্য হিচাপে নির্বাচন কৰিছে। ৰাভাসকলৰ সাংস্কৃতিক জীৱনৰ লগত জড়িত হৈ থকা ৰীতি-নীতি, আচাৰ-ব্যৱহাৰ, লোকাচাৰ-বিশ্বাসৰ অন্তর্ভুক্তি উপন্যাসখনৰ এটি বিশেষত্ব। তাৰ ভিতৰুৱা হিচাপে মৃতকৰ লগত জড়িত লোকাচাৰ উল্লেখনীয়।

ৰাভা জনজাতীয় সমাজতো মৃতদেহ সৎকাৰৰ ক্ষেত্রত স্বকীয় সামাজিক লোকাচাৰ আছে। তাৰ পৰৱর্তী সময়ত মৃতকৰ আত্মাৰ শান্তিৰ বাবেও বিভিন্ন নিয়ম কৰে। দাহ কৰিবৰ বাবে মৃতদেহটো বাঁহৰ চাঙিত তুলি শ্মশানলৈ নিয়া হয়। ৰাভাসমাজত ব্যক্তিগতভাৱে পতাৰ সলনি সমূহীয়া শ্রাদ্ধ পতাৰ নিয়ম পূর্বৰে পৰা চলি আহিছে। মৃতকৰ শ্রাদ্ধৰ দিনা ৰাভাসমাজত এক উৎসৱৰ আয়োজন কৰা হয়। সেই উৎসৱক 'ফাৰাক্রান্তি' উৎসৱ বুলি কোৱা হয়। উপন্যাসখনত বর্ণিত অনুসৰি -

"অতি পুৰণিকালত জনজাতিসকলে সদায় ওচৰ-চুবুৰীয়াৰ লগত সততে যুদ্ধ বাগৰ কৰিছিল আৰু মৃত্যু হোৱা ব্যক্তিসকলৰ আত্মাৰ সদগতিৰ কাৰণে সমূহীয়াভাবে শ্রাদ্ধক্রিয়া কৰিছিল আৰু সেই অনুষ্ঠানটিৰ নামেই আছিল ফাৰাক্রান্তি। ফাৰা মানে ৰাতি গাষ্ঠি মানে মৃতক ব্যক্তিলৈ আগবঢ়োৱা নৈবদ্য বা ভোগ। ফাৰা-গাষ্ঠি সময়ৰ সোঁতত ফাৰাক্রান্তি হ'ল"। ('দুধনৈৰ বেদনা', পৃষ্ঠা- ৫২)

এই নৈবদ্য ৰাভাসকলে ৰাতি দিছিল। দিনত যুদ্ধ কৰি আহি মৃত্যু হোৱাসকলক ৰাতি সমজোৱাকৈ শ্রাদ্ধ-ক্রিয়া সমাপন কৰিছিল আৰু পিছদিনা পুৱা পুনৰ এনেকৈ ওলাই গৈছিল। তেনেকৈয়ে ৰাভাসকলৰ পূর্বৰ জীৱন চলিছিল। বর্তমান অৱশ্যে এনে যুদ্ধ বিগ্রহ নাই।

শ্রাদ্ধৰ দিনা গাঁৱৰ মহিলাসকলে শ্মশানৰ পৰা অস্থি আনিবলৈ যাব লাগে। অস্থি আনিবৰ বাবে প্রয়োজনীয় 'দতাৰি' (নতুন গামোছা) ৰাতিটোৰ ভিতৰতে মহিলাই তৈয়াৰ কৰিব লাগে। অস্থি আনিবলৈ মহিলাৰ আগে আগে ধাল-তৰোৱাল লৈ পুৰুষসকলো মাংখ্রামদামলৈ যায়। তেওঁলোকৰ লগতে সূত্রধাৰে 'কাণ টুকুৰী' (সৰু তাল) বজায় আৰু মহিলাই তালে তালে কান্দি কান্দি অস্থি আনিবলৈ যায়। তাৰ বর্ণনা উপন্যাসত আছে এনেদৰে -

'তিৰোতাসকলে শ্মশান পালেগৈ আৰু নিজৰ নিজৰ দতাৰিত মনিৰ আইতাকৰ অস্থিবোৰ টোপোলা বান্ধি ল'লৈ যাতে ভূত-পিশাচে কাঢ়ি নিব নোৱাৰে। দতাৰিত অস্থিবোৰ টোপোলা বান্ধি লৈ তেওঁলোকে শাৰী পাতি বাওঁভৰি চুচুৰাই আগ বাঢ়িবলৈ ধৰিলে'। ('দুধনৈৰ বেদনা', পৃষ্ঠা- ৫৩)

কাৰোবাৰ মৃত্যুত কোনো মানুহে আনন্দ কৰিব নোৱাৰে। সকলোৱেই শোকত ম্রিয়মাণ হয়। কিন্তু পৰম্পৰা যে কেতিয়াও শেষ নহয় বা এৰি দিব নোৱাৰি। ৰাভাসকলে কাৰোবাৰ মৃত্যুত নাচিবই লাগিব, গাবই লাগিব, দুখতো আনন্দ কৰিব লাগিব। এয়া যে পূর্বজৰ পৰম্পৰা। আত্মাৰ

শান্তিৰ বাবে কৰা স্বকীয় নিয়ম। এইখিনিতে ৰাভা জনজাতি অন্য জনজাতিতকৈ পৃথক।

"সৰস্বতীয়েই তিৰোতসকলৰ লগত দেহৰ লয়লাস ছালনা কৰি মৃতকৰ অতীত সোঁৱৰণ কৰি কৰি ৰাউচি জুৰি কান্দিবলৈ ধৰিলে। সিহঁতৰ লগত যোৱা সূত্রধাৰীজনেও কাণ টুকুৰী বজাই বিলাপ কৰিবলৈ ধৰিলে। লগে লগে শ্মশানৰ পাছে পাছে প্রতিধ্বনি হ'ল কাঢ়াবাহী, খ্রাম কাহ, শিঙ্গাৰ কৰুণ সুৰ, এই কৰুণ সুৰৰ লগতে তিৰোতসকলে দেহ মন সপি দি নাচোনত গা ধালি দিলে। কাৰণ তেওঁলোকে জানিছিল জনগোষ্ঠীসকলৰ পক্ষে শোকৰ লগতে আনন্দৰো মিলন হয়। ই জনজীৱনৰ এক বৈশিষ্টমূলক নিদর্শন"। (('দুধনৈৰ বেদনা', পৃষ্ঠা- ৫৩)

এই ফাৰাক্রান্তি উৎসৱলৈ চুবুৰীয়া গাওঁসমূহৰ পৰাও মানুহ স্বইচ্ছাই আহে। তাৰ বাবে কোনো সুকীয়া নিমন্ত্রণৰ প্রয়োজন নহয়।

ফাৰাক্রান্তি উৎসৱৰ ৰাভাসকলৰ জনজাতীয় জীৱনৰ পৰিচয়সূচক পৰম্পৰা। ৰাভাসকলে পুনৰ জন্মত বিশ্বাস কৰে। সেয়েহে শোকৰ মাজতো আনন্দ কৰে যাতে মৃতকৰ আত্মাই পুনৰ জন্ম লৈ এই ধাৰালৈ আহে।

উপসংহাৰ ঃ

মৃতক সম্পর্কীয় লোকাচাৰ প্রতিটো জনজাতিৰে স্বকীয় বৈশিষ্ট্যপূর্ণ সম্পদ। এই লোকাচাৰসমূহ তেওঁলোকে পৰম্পৰাগতভাৱেই অতীজৰ পৰা বর্তমানেও পালন কৰি আহিছে। অৱশ্যে সময়ৰ বুকুত ইয়াত পৰিৱর্তনৰ আঁচোৰ নপৰাও নহয়। যদিও স্বকীয়তা ম্লান পৰা নাই। স্বর্ণ বৰাৰ 'মেঘনা যমুনা থেম্চ' আৰু 'দুধনৈৰ বেদনা' উপন্যাসৰ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে চাহ জনজাতি আৰু ৰাভা জনজাতিৰ মৃতক সম্পর্কীয় লোকাচাৰ সম্পর্কে সম্যক ধাৰণা লাভ কৰিব পাৰি। লোকাচাৰ বুলিয়েই নহয় বিশেষ জনজাতি দুটাৰ সামাজিক-সাংস্কৃতিক জীৱনৰ বিষয়েও জানিব পাৰি। স্বর্ণ বৰাৰ দ্বাৰা ৰচিত আন উপন্যাসসমূহতো জনজাতীয় জীৱন সম্পর্কীয় বিভিন্ন দিশৰ অধ্যয়নৰ থল আছে। ❑

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

মূল গ্রন্থ ঃ

বৰা, স্বর্ণ ঃ মেধনা যমুনা থেম্চ, সুনীল প্রকাশ, নগাওঁ, প্রথম সংস্কৰণ, ১৯৯৫

বৰা, স্বর্ণ ঃ দুধনৈৰ বেদনা, সুনীল প্রকাশ, নগাওঁ, প্রথম সংস্কৰণ, ১৯৯৭

প্রাসংগিক গ্রন্থ ঃ

গোস্বামী, ত্রিদিপ (সম্পা) ঃ স্বর্ণ বৰা ঃ কৃতি আৰু কীর্ত্তি, পুর্বোত্তৰ প্রকাশক, নগাওঁ, প্রথম প্রকাশ, ২০১৩

দাস, অমল চন্দ্র (সম্পা) ঃ অসমীয়া উপন্যাস পৰিক্রমা, বনলতা, পাণবজাৰ, প্রথম সংস্কৰণ, ২০১২

বৰপূজাৰী, জিতাঞ্জলি (সম্পা.) ঃ অসমীয়া উপন্যাসত জনজাতীয় জীৱন, চন্দ্র প্রকাশ, পাণবজাৰ, চতুর্থ প্রকাশ, ২০১৮

বৰা, দেৱজিৎ (সম্পা.) ঃ উত্তৰ-পূর্বাঞ্চলৰ জনগোষ্ঠীয় লোকসংস্কৃতি, এম.আৰ. পাব্লিকেশ্ন, পাণবজাৰ, চতুর্থ প্রকাশ, ২০১৮

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্ৰবন্ধ

অসমৰ ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ আধুনিকীকৰণ ঃ প্ৰত্যাশা আৰু প্ৰত্যাহ্বান

হৃষিকেশ ভূঞা

গ্ৰন্থাগাৰিক, এ,ডি,পি, ক'লেজ
দক্ষিণ হৈৰৱগাঁও
নগাঁও, অসম, পিন ঃ ৭৮২০০২
ম'বাইল ঃ ৯৪৩৫৬০১১০৫
ই-মেইলঃ rishikeshbhuyan1@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ :

ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰ হৈছে সমাজৰ হৃৎপিণ্ডস্বৰূপ। সাম্প্ৰতিক সময়ত সমাজব্যৱস্থাৰ প্ৰতি ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহে লোৱা ভূমিকাৰ বিষয়ে বহলাই ব্যাখ্যা কৰাৰ প্ৰয়োজন নাই। যিকোনো এখন গণতান্ত্ৰিক দেশৰ সামাজিক, ৰাজনৈতিক, অৰ্থনৈতিক আৰু প্ৰযুক্তিগত বিকাশৰ ক্ষেত্ৰত এক আধুনিক আৰু সমৃদ্ধ ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰ তথা গ্ৰন্থাগাৰ সেৱাৰ অৱদান উল্লেখনীয়। এই প্ৰবন্ধটিত অসমৰ ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ বৰ্তমান অৱস্থা আৰু ইয়াৰ আধুনিকীকৰণৰ ওপৰত আলোকপাত কৰা হৈছে। তথ্যপ্ৰযুক্তিৰ ব্যৱহাৰৰ ক্ষেত্ৰত সন্মুখীন হোৱা বিভিন্ন সমস্যাসমূহৰ বিষয়েও প্ৰবন্ধটোত বিশদভাৱে আলোচনা কৰা হৈছে। আধুনিকীকৰণৰ প্ৰক্ৰিয়াটোত চৰকাৰ আৰু জনসাধাৰণৰ আন্তৰিকতাপূৰ্ণ প্ৰচেষ্টাৰদ্বাৰাহে ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ স্থাপনৰ প্ৰকৃত আৰু মহান উদ্দেশ্য সাধন হ'ব।

সূচক শব্দ:

ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰ, কম্পিউটাৰাইজেচন (Computerisation), RRRLF, Library legislation ইত্যাদি।

প্ৰস্তাৱনা :

মানৱ সমাজৰ সভ্যতা সংস্কৃতিৰ মূল আধাৰ হৈছে জ্ঞান (knowledge)। জ্ঞানৰ প্ৰভাৱতেই মানুহৰ পশুত্বৰপৰা মনুষ্যত্বলৈ আৰু মনুষ্যত্বৰপৰা দেবত্বলৈ উত্তৰণ হয়। এই জ্ঞানৰেই স্তূপীকৃত মন্দিৰ হ'ল পুথিভঁৰাল। ইয়াৰ আধুনিক নাম গ্ৰন্থাগাৰ। গ্ৰন্থাগাৰ হ'ল অতীত, বৰ্তমান আৰু ভৱিষ্যতৰ যোগসূত্ৰ স্থাপনৰ এক সামাজিক সংস্থা। অতীতত গ্ৰন্থাগাৰ আছিল যদিও সেই সমূহত মূলতঃ কিতাপ তথা বিভিন্ন ধৰণৰ পুথিসমূহৰ সংৰক্ষণৰ ব্যৱস্থাহে কৰা হৈছিল। আধুনিক সময়ত গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ মুখ্য উদ্দেশ্য হৈছে সমাজৰ উন্নয়নৰ কাৰণে গ্ৰন্থাগাৰ সেৱা। পৃথিৱীৰ বৰেণ্য ব্যক্তি তথা মনিষীসকলৰ সুস্থ-সৱল চিন্তা-চেতনাৰদ্বাৰা প্ৰকাশিত গ্ৰন্থৰাজি মানৱ সমাজৰ উত্তৰণ তথা ভৱিষ্যত প্ৰজন্মৰ বাবে অতি প্ৰয়োজন। সেই মহৎ আৰু বিখ্যাত গ্ৰন্থৰাজি

সংগ্রহ তথা প্রণালীবদ্ধভাৱে সংৰক্ষণ কৰি পঢ়ুৱৈ সমাজক যোগান ধৰাটোৱেই গ্রন্থাগাৰসমূহৰ অন্যতম উদ্দেশ্য। গ্রন্থাগাৰসমূহে আগবঢ়োৱা সেৱা অনুসৰি গ্রন্থাগাৰসমূহক বিভিন্ন ধৰণে শ্রেণীভুক্ত কৰিব পাৰি। যেনে— ৰাজহুৱা গ্রন্থাগাৰ (Public Library), শৈক্ষিক গ্রন্থাগাৰ (Academic Library) আৰু বিশেষ গ্রন্থাগাৰ (Special Library)।

ইউনেস্ক' (UNESCO)য়ে ৰাজহুৱা গ্রন্থাগাৰসমূহক জনসাধাৰণৰ বিশ্ববিদ্যালয় বুলি (People University) সংজ্ঞায়িত কৰিছে। আধুনিক সমাজৰ প্রতি ৰাজহুৱা গ্রন্থাগাৰসমূহে লোৱা ভূমিকাৰ বিষয়ে বিশদভাৱে ব্যাখ্যা কৰাৰ প্রয়োজন নাই। এটা আধুনিক আৰু সমৃদ্ধ ৰাজহুৱা গ্রন্থাগাৰ যি কোনো এখন গণতান্ত্রিক দেশৰ সামাজিক, ৰাজনৈতিক, অর্থনৈতিক, বৈজ্ঞানিক আৰু প্রযুক্তিগত বিকাশৰ এক প্রধান প্রয়োজনীয়তা। তথ্যপ্রযুক্তিৰ প্রয়োগে গ্রন্থাগাৰ সেৱালৈ এক যুগান্তকাৰী পৰিবর্তন আনিছে। ৰাজহুৱা গ্রন্থাগাৰসমূহৰ কম্পিউটাৰাইজেচন হৈছে তথ্য প্রযুক্তিৰ এক সফল প্রয়োগৰ উদাহৰণ। গ্রন্থাগাৰসমূহে ক্রমান্বয়ে পৰম্পৰাগত সম্পদসমূহ যেনে— কিতাপৰপৰা ডিজিটেল তথ্যৰাজিলৈকে সংগ্রহ আৰু ইয়াৰ ব্যৱহাৰৰ উপযোগী কৰি নিজকে এটা সামাজিক প্রতিষ্ঠানলৈকে ৰূপান্তৰিত কৰিছে। বহল অর্থত ৰাজহুৱা গ্রন্থাগাৰসমূহৰ আধুনিকীকৰণৰ ধাৰণাটো হৈছে ইয়াৰ ব্যৱহাৰকাৰীসকলৰ শৈক্ষিক আৰু মানসিক চাহিদা পূৰণ কৰিবলৈ বিভিন্ন নিত্য নতুন সেৱাসমূহৰ প্রৱর্তন কৰা। ৰাজহুৱা গ্রন্থাগাৰসমূহৰ আধুনিকীকৰণৰ বিভিন্ন পর্যায়সমূহ এনেধৰণৰ—

(ক) গ্রন্থাগাৰ পৰিচালনা আৰু বিভিন্ন সেৱাসমূহৰ স্বয়ংক্রিয়কৰণ (Computerisation)।

(খ) বিভিন্ন ইলেকট্রনিক সম্পদৰাজি (E-resources) আৰু সেৱাৰ সৃষ্টি আৰু ব্যৱহাৰ।

(গ) কপিৰাইটযুক্ত তথা আপুৰুগীয়া গ্রন্থৰাজিসমূহৰ ডিজিটাইজেচন (Digitization) আৰু এই সম্পদসমূহ ব্যৱহাৰকাৰীসকলৰ বাবে উপলব্ধ কৰা।

(ঘ) গ্রন্থাগাৰত তথ্য আৰু প্রযুক্তিৰ সর্বোচ্চ ব্যৱহাৰ কৰা।

(ঙ) গ্রন্থাগাৰত থকা সম্পদৰাজি তথ্যপ্রযুক্তিৰ সহায়ত গ্রন্থাগাৰৰ চাৰিবেৰৰপৰা উলিয়াই সর্বসাধাৰণ ৰাইজৰ বাবে উপলব্ধ কৰা।

অসমৰ ৰাজহুৱা গ্রন্থাগাৰসমূহৰ ঐতিহাসিক প্রেক্ষাপট:

অসমত ১৯০৩ চনতেই ইংৰাজ চৰকাৰৰ উদ্যোগত চৰকাৰী খণ্ডত ৰাজহুৱা পুথিভঁৰালৰ জন্ম হৈছিল যদিও কার্যতঃ গ্রাম্য অঞ্চললৈ সেই শতিকাৰ চতুর্থ দশকতহে সম্প্রসাৰিত হৈছিল। ১৯৩৮ চনত শিক্ষাবিদ কুমুদেশ্বৰ ৰৱঠাকুৰদেৱৰ নেতৃত্বত সদৌ অসম পুথিভঁৰাল সংঘৰ জন্ম হৈছিল। তেখেতৰ নিঃস্বার্থ সেৱা আৰু অনুপ্রেৰণাত অসমৰ বিভিন্ন গ্রাম্য অঞ্চলত ৰাইজৰ দান ৰৰঙণিৰে অসংখ্য পুথিভঁৰালৰ জন্ম হয়। পিছলৈ এই পুথিভঁৰালবোৰেই আর্থ-সামাজিক, সাংস্কৃতিক অনুষ্ঠান হিচাবে গঢ় লৈ উঠিছিল আৰু ৰাজনৈতিক, সামাজিক আৰু অর্থনৈতিক চিন্তা-চর্চাৰ কেন্দ্র হৈ উঠিছিল।

বৃটিছসকলে ১৯৫৪ চনত ভাৰত চৰকাৰৰ শৈক্ষিক উন্নয়ন আঁচনি 'Improvement of Library Services'ৰ অধীনত 'আচাম গভর্ণমেণ্ট পাব্লিক লাইব্রেৰি (Assam Government Public Library)টো 'ৰাজ্যিক পুথিভঁৰাল' নামকৰণেৰে চৰকাৰীভাৱে ৰাজহুৱা পুথিভঁৰাল স্থাপন কৰাৰ সিদ্ধান্ত গ্রহণ কৰে। ১৯৬৫ চনত অসম চৰকাৰে শ্বিলঙৰ ৰাজহুৱা পুথিভঁৰাল নতুনকৈ প্রতিষ্ঠা কৰা ৰাজ্যিক কেন্দ্রীয় পুথিভঁৰালৰ সৈতে একত্রিত কৰে। ১৯৭৩ চনত অসমৰ ৰাজধানী সলনি হোৱাৰ পৰিপ্রেক্ষিতত ৰাজ্যিক কেন্দ্রীয় পুথিভঁৰালটো শ্বিলঙৰপৰা গুৱাহাটীলৈ স্থানান্তৰ কৰা হয় আৰু গুৱাহাটী জিলা পুথিভঁৰাল ভৱনত ইয়াক ৰখা হয়। ১৯৮৪ চনত অসম চৰকাৰে গ্রন্থাগাৰ সেৱাৰ অধিক সম্প্রসাৰণৰ কথা বিবেচনা কৰি ৰাজ্যিক কেন্দ্রীয় পুথিভঁৰালটো পুথিভঁৰাল সেৱা সঞ্চালকালয় (Directorate of Library Services) লৈ উন্নীত কৰে। বর্তমান অসমৰ পুথিভঁৰাল সেৱা সঞ্চালকালয়ৰ অধীনত ২৬টা জিলা পুথিভঁৰাল, ১৫টা মহকুমা পুথিভঁৰাল, ২০৪টা গ্রাম্য পুথিভঁৰাল আৰু ৪টা শাখা পুথিভঁৰাল আছে। পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয় অসম চৰকাৰৰ সাংস্কৃতিক পৰিক্রমা বিভাগৰ অধীনস্থ।

অসমৰ ৰাজহুৱা গ্রন্থাগাৰসমূহৰ আধুনিকীকৰণৰ

সাম্প্রতিক দৃশ্যপট:

অসম চৰকাৰৰ পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ে ৰাজহুৱা পুথিভঁৰালসমূহৰ আধুনিকীকৰণৰ ব্যৱস্থা ২০০৪-০৫ চনত আৰম্ভ কৰিছিল। সেই সময়তে ডিএলএছ (Directorate of Library Services)এ জিলা আৰু মহকুমা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ কম্পিউটাৰাইজেচনৰ বাবে অসম চৰকাৰৰপৰা পঞ্চাশ লাখ (৫০,০০,০০০/-) টকাৰ আৰ্থিক অনুদান লাভ কৰে। সেই অনুসৰি ২৩খন জিলা, ১৪টা মহকুমা আৰু ৪টা শাখা পুথিভঁৰাললৈ একোটাকৈ কম্পিউটাৰ ছেট আৰু প্ৰিণ্টাৰ যোগান ধৰা হয়। এই কাম আৰম্ভ কৰিছিল অসম চৰকাৰৰ অধীনস্থ এমট্ৰন (AMTRON) নামৰ সংস্থাটোৱে। অৱশ্যে ইয়াৰ কিছুমান গ্ৰন্থাগাৰে দৈনন্দিন কাৰ্য পৰিচালনাৰ বাবে নিজ নিজ জিলা প্ৰশাসনৰপৰাও কম্পিউটাৰ লাভ কৰিছিল। ২০০৫ চনত ডিএলএছে অসমৰ বিভিন্ন জিলা আৰু মহকুমা পুথিভঁৰালসমূহলৈ Computerized library management software ই-গ্ৰন্থালয়া (E-Granthalaya) যোগান সন্দৰ্ভত ৰাষ্ট্ৰীয় তথ্যবিজ্ঞান কেন্দ্ৰ (NIC) অসমৰ সৈতে এক বুজাবুজি চুক্তি স্বাক্ষৰ কৰে। সেই চুক্তি অনুসৰি ২০০৫ চনৰ ডিচেম্বৰ মাহত NICয়ে ৪১টা ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰলৈ E-Granthalaya নামৰ Library automation softwareৰ যোগান ধৰিছিল। কিন্তু ২০০৮ চনৰ জুন মাহলৈকে কেইখনমান জিলাৰ জিলা পুথিভঁৰালকেইটামানৰ বাহিৰে গৰিষ্ঠসংখ্যক পুথিভঁৰালতেই এই software ব্যৱহাৰ কৰিব পৰা হোৱা নাছিল। সেইবাবে পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ে NICৰ সহযোগত ৰাজহুৱা পুথিভঁৰালসমূহৰ বিষয়া-কৰ্মচাৰীসকলৰ বাবে E-Granthalaya Softwareৰ ব্যৱহাৰ সন্দৰ্ভত এক প্ৰশিক্ষণ কাৰ্যসূচীৰ আয়োজন কৰে। ২০০৯ চনৰ নবেম্বৰ মাহত E-Granthalayaৰ ব্যৱহাৰ সম্পৰ্কে পুনৰ এক প্ৰশিক্ষণ কাৰ্যসূচীৰ আয়োজন কৰে। পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ৰ এই ব্যৱস্থা গ্ৰহণৰ পিছতো জিলা আৰু মহকুমা গ্ৰন্থাগাৰসমূহে Library Computerisationৰ ক্ষেত্ৰত উল্লেখযোগ্য সফলতা লাভ কৰিব নোৱাৰিলে।

ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ এই বিফলতাৰ পিছত পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ে ৰাজা ৰামমোহন ৰায় লাইব্ৰেৰি ফাউণ্ডেচন (RRRLF)ৰ সহযোগত ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ Computerisationৰ বাবে পুনৰ KOHA নামৰ এটা Open source library software ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ কৰে। KOHA হৈছে নিউজিলেণ্ডৰ Katipo Communications নামৰ এটা Library Trustএ ১৯৯৯ চনত বিকাশ কৰা এটা মুক্ত উৎসৰ (Open source) Software। ৰাজা ৰামমোহন ৰায় লাইব্ৰেৰি ফাউণ্ডেচনে (RRRLF) ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহত এই softwareৰ সংস্থাপন আৰু গ্ৰন্থাগাৰ কৰ্মীসকলক প্ৰশিক্ষণৰ বাবে পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ৰ লগত চুক্তিবদ্ধ হয়। চুক্তি অনুসৰি সমগ্ৰ প্ৰক্ৰিয়াটো পৰ্যায়ক্ৰমে ৰূপায়ণ কৰাৰ সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ কৰা হয়। প্ৰথম পৰ্যায়ত ৯টা জিলা গ্ৰন্থাগাৰ ক্ৰমান্বয়ে গুৱাহাটী, নগাঁও, যোৰহাট, ডিব্ৰুগড়, তেজপুৰ, মঙ্গলদৈ, হাইলাকান্দি, গোলাঘাট জিলা পুথিভঁৰাল আৰু ৰাজ্যিক ৰেফাৰেন্স লাইব্ৰেৰিত ইয়াৰ ৰূপায়ণৰ সিদ্ধান্ত লোৱা হয়। কিন্তু পুথিভঁৰালসমূহৰ Computerisationৰ বাবে বিশদ প্ৰকল্প প্ৰতিবেদন (DPR) প্ৰকল্পত হ'বলগীয়া মুঠ ব্যয় আৰু প্ৰকল্প সম্পূৰ্ণ কৰাৰ সময়সীমা সম্পৰ্কে কোনো তথ্য পোৱা নগ'ল। ইয়াৰ বাহিৰেও ৰাজ্যিক পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ে পাঁচখন জিলা ক্ৰমে গুৱাহাটী, নগাঁও, মৰিগাঁও, তেজপুৰ আৰু যোৰহাটৰ জিলা পুথিভঁৰালসমূহৰ আৰ.এফ.আই.ডি (Radio Frequency Identification) টেকন'লজিৰ ব্যৱহাৰৰ কাৰণে পুঁজিৰ আবণ্টন দিছিল। কিন্তু বৰ্তমানলৈকে এই প্ৰযুক্তিৰ কিমান শতাংশ কাম সম্পূৰ্ণ হ'ল তাৰ কোনো তথ্য উপলব্ধ নহয়।

গ্ৰাম্য পুথিভঁৰাল সেৱা আৰু ইয়াৰ আধুনিকীকৰণ :

গ্ৰাম্য পুথিভঁৰালৰ লক্ষ্য হৈছে গ্ৰাম্য অঞ্চলত সুস্থ আৰু সৱল পঢ়ুৱৈ সমাজ গঢ়ি জনসাধাৰণক শিক্ষিত কৰি তোলা। গাঁৱত বাস কৰা গৰিষ্ঠ সংখ্যক লোকেই কৃষিজীৱী আৰু নিম্ন মধ্যবিত্ত শ্ৰেণীৰ। গতিকে জ্ঞান আহৰণৰ কাৰণে ধন খৰচ কৰি কিতাপ, আলোচনী, বাতৰিকাকত আদি ক্ৰয় কৰি পঢ়াটো তেওঁলোকৰ কাৰণে সম্ভৱ নহয়। তেনে ক্ষেত্ৰত সেই সকলৰ কাৰণে জ্ঞান অৰ্জনৰ একমাত্ৰ সম্বল হৈছে গ্ৰাম্য পুথিভঁৰাল।

অসমত গ্রাম্য পুথিভঁৰাল স্থাপনৰ কার্যসূচী আৰম্ভ হৈছিল 'অসম ছাত্র সন্মিলন' নামৰ এটা অনুষ্ঠানৰ পৃষ্ঠপোষকতাত। ১৯৩২ চনত নগাঁও ছাত্র সন্মিলনৰ কর্মীসকলৰ সহযোগত নগাঁও জিলাত প্রথম গ্রাম্য পুথিভঁৰাল স্থাপন হয়। গ্রাম্য পুথিভঁৰাল হৈছে গণ শিক্ষা কার্যসূচীৰ এক অবিচ্ছেদ্য অংগ। কিন্তু ভাৰতবর্ষৰ আন আন ৰাজ্যৰ তুলনাত আমাৰ অসমত গ্রাম্য পুথিভঁৰালৰ সংখ্যা বহু কম। ভাৰত চৰকাৰৰ কেন্দ্রীয় গ্রামোন্নয়ন মন্ত্রালয়ৰ এক প্রতিবেদন অনুসৰি দেশৰ কেইখনমান ৰাজ্যৰ গ্রাম্য পুথিভঁৰালৰ সংখ্যা তলত দিয়া তালিকাখনত উল্লেখ কৰা হৈছে—

ক্রঃ নং	ৰাজ্যৰ নাম	গ্রাম্য পুথিভঁৰালৰ সংখ্যা
১	তামিলনাড়ু	৫৮৯+১২ মবাইল লাইব্রেৰি
২	অন্ধ্র প্রদেশ	৩৫৫+১২৩৮ পঞ্চায়ত লাইব্রেৰি +৩ মবাইল লাইব্রেৰি
৩	কর্ণাটক	১০৫১০ + ৩ মবাইল লাইব্রেৰি
৪	গুজৰাট	৬৯০৮
৫	উড়িচ্ছা	১০৯০
৬	মিজোৰাম	৩৪১
৭	অসম	২০৪

Table: List of Village Library

Source: 'Public library movement in Assam, How far Public'. By Dr. R.K. Barman, PLANNER, 2009

অসমত গ্রাম্য পুথিভঁৰালসমূহে আগবঢ়োৱা সেৱা মুঠেই সন্তোষজনক নহয়। বিভিন্ন কাৰণত গ্রাম্য পুথিভঁৰালসমূহে গ্রন্থাগাৰ সেৱা আগবঢ়াব পৰা নাই। ১৯৬৫ চনত শ্বিলঙৰ ৰাজহুৱা পুথিভঁৰাল নতুনকৈ প্রতিষ্ঠা কৰি ৰাজ্যিক কেন্দ্রীয় পুথিভঁৰালৰ সৈতে একত্রিত কৰা হোৱাৰ পিছতেই কেন্দ্রীয় চৰকাৰৰ পৰামর্শ আৰু আর্থিক অনুদানৰ জৰিয়তে অসম চৰকাৰে তখন মবাইল ভান ক্রয় কৰে। ইয়াৰ উদ্দেশ্য আছিল মবাইল লাইব্রেৰি সেৱাৰ জৰিয়তে গাঁও তথা দূৰণিবটীয়া অঞ্চলসমূহত গ্রন্থাগাৰ সেৱাৰ সম্প্রসাৰণ কৰা। প্রথম অৱস্থাত এই আঁচনিখন ভালদৰে কার্যকৰী হৈছিল। কিন্তু দুর্ভাগ্যজনকভাৱে পিছৰ চৰকাৰসমূহে এই আঁচনিখন স্থগিত ৰাখিছিল। ইয়াৰে এখন মবাইল ভান তেজপুৰ জিলা পুথিভঁৰাল চৌহদত পৰি আছে। কেন্দ্রীয় চৰকাৰৰ এক পৰিসংখ্যা অনুসৰি বর্তমান অসমত ২৬৩৯৩খন গাঁও আৰু গ্রামাঞ্চলত বসবাস কৰা প্রায় ৬% জনসংখ্যাৰ বাবে চৰকাৰী স্বীকৃতিপ্রাপ্ত ২০৪টা গ্রাম্য পুথিভঁৰাল উপলব্ধ। এই পৰিসংখ্যাৰপৰা এইটো স্পষ্ট যে ৰাজ্যখনৰ গ্রামাঞ্চলত বাস কৰা গৰিষ্ঠসংখ্যক লোকেই গ্রন্থাগাৰ সেৱাৰ সুবিধাসমূহৰপৰা বঞ্চিত।

ভাৰতবর্ষৰ গ্রন্থাগাৰ বিজ্ঞানৰ পিতৃপুৰুষ ড° এচ.আৰ.ৰংগনাথনৰ গ্রন্থাগাৰ বিজ্ঞানৰ পঞ্চম সূত্র হৈছে 'Library is a growing organism' অর্থাৎ জীৱৰ যেনেকৈ শ্রীবৃদ্ধি হয় গ্রন্থাগাৰ একোটাৰো শ্রীবৃদ্ধি হৈ সমৃদ্ধিশালী হ'ব পাৰে। অৱশ্যে ইয়াৰ বাবে চৰকাৰ তথা পুথিভঁৰাল কর্তৃপক্ষই গ্রন্থাগাৰসমূহক শ্রীবৃদ্ধিৰ বাবে ধনৰ যোগান ধৰাটো আৱশ্যকীয়। প্রায়বোৰ উন্নত দেশতে চৰকাৰে গ্রাম্য পুথিভঁৰাল সেৱাৰ বাবে যথেষ্ঠ পুঁজি ব্যয় কৰা দেখা যায়। ভাৰতবর্ষতো বিভিন্ন ৰাজ্যত পুথিভঁৰাল সেৱাৰ বাবে জনমুৰি ব্যয় পৃথক। উদাহৰণস্বৰূপে তলত উল্লেখ কৰা তালিকাখনৰপৰা দেশৰ কেইখনমান ৰাজ্যই পুথিভঁৰাল সেৱাৰ বাবে কৰা জনমুৰি ব্যয় পৃথক পৃথক বুলি প্রতিফলিত হৈছে।

ক্রঃ নং	ৰাজ্যৰ নাম	জনমুৰি ব্যয়	স্বাক্ষৰতাৰ হাৰ
১	কর্ণাটক	৭১ পইচা	৭৭.২%
২	অন্ধ্রপ্রদেশ	১৫ পইচা	৬৬.৪%
৩	কেৰেলা	১৫ পইচা	৯৬.২%
৪	অসম	৪ পইচা	৮৫.৯%

Table: List of Per capita expenditure on Library service
Source: 'Public library movement in Assam, How far Public'. By Dr. R.K. Barman PLANNER, 2009

উপৰোক্ত তালিকাখনৰপৰা দেখা যায় অসমত পুথিভঁৰাল সেৱাৰ নামত জনমুৰি ব্যয় অতি নুন্যতম। ই চৰকাৰৰ পুথিভঁৰালসমূহৰ উন্নতিৰ প্রতি চৰম উদাসীনতাকে প্রতিফলিত কৰিছে। ইয়াৰ বাবে অসমত পুথিভঁৰাল আইন (Library legislation)ৰ অভাব এক মুখ্য কাৰণ বুলি অভিহিত কৰিব পাৰি।

পুথিভঁৰাল আইন (Library legislation):

এটা আইনভিত্তিক ৰাজহুৱা পুথিভঁৰাল ব্যৱস্থাই চৰাকাৰী আঁচনিত পুথিভঁৰাল সেৱাৰ স্থানৰ ধাৰাবাহিকতা

নিশ্চিত কৰে। পুথিভঁৰাল আইন (Library legislation)ত থকা বিত্তীয় ব্যৱস্থা আৰু ইয়াৰ সঠিক প্ৰয়োগে পুথিভঁৰাল সেৱা আৰু বিকাশৰ বাবে যথেষ্ট অবিহণা যোগায়। পুথিভঁৰাল আইনখন সমগ্ৰ ৰাজহুৱা পুথিভঁৰাল সেৱাৰ বৃদ্ধি আৰু বিকাশৰ বাবে দায়বদ্ধ। কিন্তু এনে এখন অতি প্ৰয়োজনীয় legislation ভাৰতবৰ্ষৰ মাত্ৰ ১৯খন ৰাজ্যতহে আছে। তলত উল্লেখ কৰা তালিকাখনত পুথিভঁৰাল আইন (Library legislation) প্ৰণয়ন হৈ থকা ৰাজ্যকেইখনৰ নাম সন্নিৱিষ্ট কৰা হ'ল—

ক্ৰঃ নং	ৰাজ্যৰ নাম	পুথিভঁৰাল আইন প্ৰণয়ন হোৱা বছৰ
১	তামিলনাড়ু	১৯৪৮
২	অন্ধ্ৰপ্ৰদেশ	১৯৬০
৩	কৰ্ণাটক	১৯৬৫
৪	মহাৰাষ্ট্ৰ	১৯৬৭
৫	পশ্চিমবঙ্গ	১৯৭৯
৬	মণিপুৰ	১৯৮৮
৭	কেৰেলা	১৯৮৯
৮	হাৰিয়ানা	১৯৮৯
৯	মিজোৰাম	১৯৯৩
১০	গোৱা	১৯৯৩
১১	গুজৰাট	২০০০
১২	উৰিষ্যা	২০০০
১৩	ৰাজস্থান	২০০৫
১৪	উত্তৰ প্ৰদেশ	২০০৫
১৫	উত্তৰাখণ্ড	২০০৫
১৬	পুডুচেৰী	২০০৮
১৭	বিহাৰ	২০০৮
১৮	ছত্তিশগড়	২০০৮
১৯	অৰুণাচল প্ৰদেশ	২০০৯

Table: List of States having Public library legislation

ভাৰতবৰ্ষৰ ২৮খন ৰাজ্য আৰু ৯খন কেন্দ্ৰীয় শাসিত অঞ্চলৰ ভিতৰত ১৯খন ৰাজ্যত ৰাজহুৱা পুথিভঁৰাল আইন প্ৰণয়ন হৈ আছে। কিন্তু উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ৰাজ্য অসমত এতিয়াও এই আইনখন প্ৰণয়ন কৰিব পৰা হোৱা নাই। ই অতি দূৰ্ভাগ্যজনক। অৱশ্যে ব্যক্তিগত আৰু সাংগঠনিক উভয় পৰ্যায়তে ইয়াৰ বাবে প্ৰচেষ্টা চলাই থকা হৈছে। ২০০২ চনতে ড° অলকা বুঢ়াগোহাই, ৰাম গোস্বামীক সদস্য আৰু পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয় (DLS)ৰ সঞ্চালকগৰাকীক আহ্বায়ক হিচাবে লৈ অসম ৰাজহুৱা পুথিভঁৰাল আইনৰ খচৰা পৰীক্ষা কৰিবলৈ অসম চৰকাৰে এখন উপ-সমিতি গঠন কৰিছিল। উপ-সমিতিখনে বহু কষ্ট আৰু পৰিশ্ৰম কৰি ২০০৮ চনত অসম চৰকাৰৰ সাংস্কৃতিক বিভাগৰ সচিবৰ ওচৰত 'অসম ৰাজহুৱা পুথিভঁৰাল আৰু তথ্য সেৱাৰ খচৰা বিধেয়ক' দাখিল কৰা হৈছিল। কিন্তু আজিও এই বিধেয়কখন চৰকাৰৰ অনুমোদন আৰু প্ৰণয়নৰ বাবে অপেক্ষাৰত।

ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ উন্নয়নৰ বাবে বিত্তীয় উৎস:

অসমৰ ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ উন্নয়নৰ বাবে মূলতঃ দুটা আৰ্থিক উৎস আছে। উৎস দুটা হ'ল ৰাজ্য চৰকাৰ আৰু ৰাজা ৰামমোহন ৰায় লাইব্ৰেৰি ফাউণ্ডেচন (RRRLF)। ইয়াৰ উপৰিও পুথিভঁৰালসমূহৰ ব্যৱহাৰকাৰীসকলৰপৰা বিভিন্ন ৰূপত যেনে— পুথিভঁৰাল পঞ্জীয়ন মাচুল, অতিৰিক্ত জৰিমনা আদিৰদ্বাৰা অতি নগণ্য পৰিমাণৰ ধন সংগ্ৰহ কৰা হয়। অসম চৰকাৰে ৰাজহুৱা পুথিভঁৰাল আইন (Library Legislation) উপলব্ধ নোহোৱাৰ বাবে নিয়মীয়াকৈ আৰ্থিক অনুদান অনুমোদন নকৰে। ইয়াৰ পৰিবৰ্তে পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ক বছৰি এককালীন (Adhoc) অনুদান প্ৰদান কৰে। কিন্তু এই অনুদানেৰে ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ উন্নয়ন সম্ভৱ নহয়। আৰ্থিক অনুদানৰ দ্বিতীয় উৎস ৰাজা ৰামমোহন ৰায় লাইব্ৰেৰি ফাউণ্ডেচন ১৯৭২ চনৰপৰাই দেশৰ ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ উন্নীতকৰণৰ আন্দোলনত জড়িত হৈ আছে। মূলতঃ দুই ধৰণৰ অনুদান ক্ৰমে গ্ৰন্থদান আৰু আৰ্থিক সাহায্য পুথিভঁৰালসমূহলৈ প্ৰদান কৰে। আৰ্থিক অনুদান লাভ কৰিবলৈ প্ৰতিখন ৰাজ্যতে ৰাজ্যিক পুথিভঁৰাল পৰিকল্পনা সমিতি গঠন কৰাটো বাধ্যতামূলক।

উপৰোক্ত আলোচনাসমূহৰপৰা দেখা যায় যে অসমৰ প্ৰায় সকলো ৰাজহুৱা পুথিভঁৰালেই সু-সংগঠিত নহয় আৰু বিভিন্ন সমস্যাৰ বাবে

ফলপ্রসুভাৱে কাম কৰিব পৰা নাই। ৰাজহুৱা পুথিভঁৰালসমূহৰ আধুনিকীকৰণৰ প্ৰধান প্ৰত্যাহ্বানসমূহ তলত উল্লেখ কৰা হ'ল—

(ক) গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ কম্পিউটাৰাইজেচনৰ মূল বাধা হৈছে মানৱ সম্পদৰ (Manpower) অভাৱ। বেছিভাগ

পুথিভঁৰালতে মাত্ৰ দুজন আৰু কিছুমানত মাত্ৰ এজন পেচাদাৰী কৰ্মচাৰী আছে। তেওঁলোকে গ্ৰন্থাগাৰৰ দৈনন্দিন তথা পৰম্পৰাগত কাম-কাজৰ উপৰিও Computerisation প্ৰক্ৰিয়াত মনোনিবেশ কৰিবলৈ সময় নাপায়।

(খ) তথ্য প্ৰযুক্তিৰ প্ৰশিক্ষণপ্ৰাপ্ত কৰ্মচাৰীৰ অভাৱো আধুনিকীকৰণ প্ৰক্ৰিয়াত বিলম্ব হোৱাৰ এক কাৰণ।

(গ) আধুনিকীকৰণ প্ৰক্ৰিয়াৰ বাবে গ্ৰন্থাগাৰ কৰ্মীসকলৰ বাবে প্ৰয়োজনীয় Computer trainingৰ অভাৱ।

(ঘ) পৰ্যাপ্ত বিত্তীয় অনুদানৰ অভাৱো সমগ্ৰ প্ৰক্ৰিয়াটো পিছ পৰি যোৱাৰ এক অন্যতম কাৰণ বুলি বিবেচনা কৰিব পাৰি।

(ঙ) সৰ্বোপৰি আধুনিকীকৰণৰ ক্ষেত্ৰ এক বৃত্তিত D.P.R (Detail Project Report) আৰু সুনিৰ্দিষ্ট পৰিকল্পনাৰ অভাৱে সমগ্ৰ প্ৰক্ৰিয়াটো ৰূপায়ণ কৰাৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰধান অন্তৰায় বুলি অভিহিত কৰিব পাৰি।

উপৰোক্ত প্ৰত্যাহ্বানসমূহ থকা স্বত্তেও ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহ আধুনিকীকৰণ প্ৰক্ৰিয়াটোত লাহে লাহে আগবঢ়া পৰিলক্ষিত হৈছে। পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ক সমগ্ৰ প্ৰক্ৰিয়াটোত সহায় কৰিবলৈ আগবাঢ়ি আহিছে RRRLF। আধুনিকীকৰণৰ সমগ্ৰ প্ৰক্ৰিয়াটোৰ গতি তৰান্বিত কৰিবলৈ কেইটামান পৰামৰ্শ তলত উল্লেখ কৰা হ'ল —

(ক) নিৰ্দ্ধাৰিত সময়ৰ ভিতৰত প্ৰক্ৰিয়াটো সম্পূৰ্ণ কৰিবলৈ পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ে এক বিশদ প্ৰকল্প প্ৰতিবেদন (DPR) প্ৰস্তুত কৰিব লাগে।

(খ) জিলা গ্ৰন্থাগাৰসমূহত কিছুমান যুৱ আৰু পেচাদাৰীভাৱে দক্ষতাসম্পন্ন কৰ্মচাৰীক সাময়িকভাৱে

নিযুক্তি দিব লাগে যাতে Computerisation প্ৰক্ৰিয়াটো সহজে আগবঢ়াই লৈ যাব পাৰি।

(গ) জিলা আৰু মহকুমা পুথিভঁৰালসমূহৰ গ্ৰন্থাগাৰিকসকলে এটা সহযোগিতাৰ নেটৱৰ্ক গঢ়ি তুলিব

লাগে যাতে ইজনে সিজনক সহায় কৰি Computerisation প্ৰক্ৰিয়াটো সফলতাৰে সম্পূৰ্ণ কৰিব পাৰে।

(ঘ) আৰ্থিক সাহাৰ্যৰ বাবে পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ে DONER মন্ত্ৰালয়ৰ সৈতে যোগাযোগ কৰিব পাৰে।

(ঙ) পুথিভঁৰাল সঞ্চালকালয়ে তাৎক্ষণিকভাৱে কাৰ্যকৰী হোৱাকৈ সকলো ৰাজহুৱা পুথিভঁৰাললৈ ইণ্টাৰনেট সংযোগৰ ব্যৱস্থা কৰিব লাগে।

(চ) ৰাজহুৱা পুথিভঁৰালসমূহে ই-সম্পদ (E-resource)ৰ সংগ্ৰহ ব্যৱস্থা কৰিব লাগে আৰু পঢ়ুৱৈ সমাজক ছপা মাধ্যমৰ লগতে ই-সম্পদসমূহৰো ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ উৎসাহিত কৰিব লাগে।

সামৰণি :

গ্ৰন্থাগাৰ সমাজৰ হৃৎপিণ্ডস্বৰূপ। সাধাৰণ শিক্ষিতৰপৰা আৰম্ভ কৰি উচ্চস্তৰৰ পণ্ডিত-গৱেষকলৈকে সকলোৰে বাবে গ্ৰন্থাগাৰৰ প্ৰয়োজন। পঢ়ুৱৈ সমাজৰ প্ৰয়োজনীয়তা পূৰণ কৰিবৰ বাবে গ্ৰন্থাগাৰটো আধুনিক আৰু সমৃদ্ধিশালী (Resourceful) হোৱাটো অতি আৱশ্যকীয়। সমাজত গ্ৰন্থ অধ্যয়নৰ প্ৰতি যিমানেই স্পৃহা বাঢ়িব, সিমানেই ভাষা-সাহিত্যৰ পৰিসৰ বৃদ্ধি পাব। জাতিটো সভ্য, অধ্যয়নশীল আৰু জ্ঞানীৰূপে পৃথিৱীত পৰিগণিত হ'ব। অন্যথাই জ্ঞানবিহীন, অধ্যয়ন বিমুখতাই মানুহৰ ভাব চিন্তাৰ অবক্ষয় ঘটাব আৰু সমাজ ব্যৱস্থাৰ উত্তৰণত স্থবিৰতাই দেখা দিব। গতিকে পুথিভঁৰাল কৰ্তৃপক্ষয়ো কেৱল চৰকাৰী অনুদান বা সহায়ৰ আশা নকৰি সচেতন

সামাজিক সংস্থা, এনজিঅ (NGO) আদিক গ্ৰন্থাগাৰৰ উত্তৰণৰ বাবে জড়িত কৰাবলৈ প্ৰয়াস কৰা উচিত। ইয়াৰ উপৰিও পুথিভঁৰাল আইনৰ শীঘ্ৰে ৰূপায়ন আৰু ৰাষ্ট্ৰীয় জ্ঞান আয়োগে (National Knowledge Commission) দিয়া পৰামৰ্শৱলীসমূহ সঠিকভাৱে ৰূপায়ন হৈছে নে নাই তাক নিৰন্তৰভাৱে নিৰীক্ষণ কৰাটো অতি প্ৰয়োজন। ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰৰ আধুনিকীকৰণৰ প্ৰক্ৰিয়াটো বৰ্তমান সময়ৰ এক প্ৰয়োজন। যিহেতু ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰক জনসাধাৰণৰ বিশ্ববিদ্যালয় বুলি কোৱা হয় সেইবাবে জনসাধাৰণৰ প্ৰচেষ্টা আৰু চৰকাৰৰ আন্তৰিকতাপূৰ্ণ সহযোগত গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ আধুনিকীকৰণৰ প্ৰক্ৰিয়াটো সম্পূৰ্ণ কৰিব পাৰিলেহে ৰাজহুৱা গ্ৰন্থাগাৰসমূহৰ প্ৰকৃত আৰু মহান উদ্দেশ্য সাধন হ'ব। ❑

সহায়ত গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

1. Borpujari,Abhijit, ' Problems and prospects of ICT implementation in the Rural college libraries of Sivsagar District: a study. In: Dhrubajit Das and Bibhuti Choudhary(Ed) Proceedings of National Seminar: Collection Development in IT Environment in the College Libraries of Assam,Jorhat,Dec.3-4,2010(pp.268-280)
2. Bhuyan, Hrishikesh & Hazarika, Sukriti. ' Extension Service of Public libraries of Assam: Challenges and Realities' in In: R.K.Barman(Ed.) Proceedings of the National Seminar: Modernization of Public Libraries in India with special reference to North East India, Gauhati,Nov.11-12,2011(pp.14-24).
3. Das,Dhrubajit(2012). Status of Automation of College Libraries in Assam: A Study based on survey of selected college libraries. ACLA Bulletin,Vol.5 &6,(pp.20-34)
4. Hazarika, Nikhil, 'Modernization of Dhemaji District Library and Lakhimpur District Library: Case study. In: In: R.K.Barman(Ed.) Proceedings of the National Seminar: Modernization of Public Libraries in India with special reference to North East India, Gauhati,Nov.11-12,2011(pp.279-286).
5. Saikia, Mukesh, 'Modernization of Public Libraries in India with special reference to North East India'. In: R.K.Barman(Ed.) Proceedings of the National Seminar: Modernization of Public Libraries in India with special reference to North East India, Gauhati,Nov.11-12,2011(pp.151-164).
6. Sarma, Narendra Nath(1997), The Growth and development of public library services in assam. In: Bhupen Goswamee(Rd), Changing trend of librarianship in Assam(pp.1-16). Guwahati: Guwahati Library Association.
7. https://culturalaffairs.assam.gov.in/information-services/list-of-libraries
8. http://egranthalaya.nic.in
9. http://koha.org
10. https://publiclibraryservices.assam.gov.in

১১. বৰা, ভানু (১৯৯২), গ্ৰাম্য পুথিভঁৰাল : বৰ্তমান আৰু ভৱিষ্যতৰ যৎকিঞ্চিত Librarianship in Northeast India (৯২-৯৫)

১২. বৰদলৈ, টংকেশ্বৰ (১৯৯২), 'অসমত গ্ৰাম্য পুথিভঁৰাল সেৱা' Librarianship in Northeast India (১২৩-১২৫)

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অনিমা গুহৰ ভ্রমণ সাহিত্য ‘তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দর্শন’ ঃ এক অৱলোকন

অসীমা গায়ন

গৱেষক ছাত্রী, অসমীয়া বিভাগ
ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়
ম'বাইল ঃ ৯৭০৬২৭২১৫২
ই-মেইলঃ gayanashima0@gmail.com

ড° প্রবীণ কুমাৰ গগৈ

অধ্যাপক, শিক্ষা বিভাগ
ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়
ম'বাইল ঃ ৯৯৫৪৪৮১৮৪৯

সাৰাংশ ঃ

অসমীয়া সাহিত্যৰ ইতিহাসত ভ্রমণ সাহিত্য হ'ল এক উল্লেখযোগ্য ভাগ। যাৰ জৰিয়তে পাঠকে ঠাইবিলাকৰ ইতিহাস, সামাজিক - সাংস্কৃতিক দিশৰ সৈতে আগতীয়াকৈ পৰিচয় লাভ কৰাত সহায়ক হয়। অর্থাৎ ভ্রমণ সাহিত্য হ'ল ভ্রমণকাৰীজনৰ বাস্তৱ চাক্ষুস অভিজ্ঞতাৰ লিখিত ৰূপ। অসমীয়া ভ্রমণ সাহিত্যৰ সৃষ্টিৰ ক্ষেত্রত অতীজৰে পৰা মহিলাসকলেও অৱদান আগবঢ়াই আহিছে। তেনে এগৰাকী চিৰপৰিচিত মহিলা অনিমা গুহৰ ভ্রমণ বিষয়ক সাহিত্যৰাজিক এই আলোচনাত সামৰা হৈছে। বিশেষকৈ তেখেতৰ ‘তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দর্শন’ শীর্ষক ভ্রমণ গ্রন্থখনক আলোচনাৰ পৰিসৰত সামৰি লৈ উক্ত গ্রন্থখনত লেখিকাই আমেৰিকাত লাভ কৰা অভিজ্ঞতাসমূহক কিদৰে বিভিন্ন শিতানত অথার্ৎ ঠাইখনৰ ইতিহাস, ৰাজনৈতিক অৱস্থা, সামাজিক, অর্থনৈতিক ,সাংস্কৃতিক ইত্যাদি বিভিন্ন দিশ ফুটাই তুলিবলৈ প্রয়াস কৰিছে সেই বিষয়ে আলোচনা দাঙি ধৰা হৈছে। লগতে ভাষাগত দিশৰ ফালৰ পৰা গ্রন্থখনৰ মানদণ্ড নিৰূপন কৰিবলৈ যত্ন কৰা হৈছে।

সূচক শব্দ ঃ

বিশ্ব দর্শন, জনজীৱন, অভিজ্ঞতা, জ্ঞান ইত্যাদি।

০.০ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

ভ্রমণ সাহিত্য হ'ল একোখন অচিনাকি ঠাইৰ বিষয়ে বর্ণিত লিখিত বুৰঞ্জী। ভ্রমণ সাহিত্য লেখকৰ বাস্তৱ অভিজ্ঞতাৰ ভেটিত ৰচিত হয়। ভ্রমণ সাহিত্য বুলিলে নির্দিষ্ট এডোখৰ ঠাই লৈ গৈ সেই ঠাইৰ চাৰিওদিশ সামৰি লেখকে লাভ কৰা অভিজ্ঞতাৰ লিখিত ৰূপক বুজায়। এইবিধ সাহিত্যই পাঠকক এডোখৰ অচিনাকি ঠাইৰ সৈতে পৰিচয় কৰাই দিয়াত গুৰুত্বপূর্ণ ভূমিকা গ্রহণ কৰে। লগতে ঠাইবিলাকৰ ইতিহাস, সামাজিক -সাংস্কৃতিক দিশৰ সৈতে আগতীয়াকৈ পৰিচয় লাভ কৰাত সহায় কৰে। তদুপৰি ঠাইসমূহৰ মানুহৰ কার্যকলাপ, অর্থনৈতিক অৱস্থা, ৰাজনৈতিক গতিবিধি জনাত সহজ হয়। সেয়ে কোৱা হয় ভ্রমণ সাহিত্য হ'ল ভ্রমণকাৰীজনৰ বা লেখকজনৰ বাস্তৱ চাক্ষুস অভিজ্ঞতাৰ লিখিত ৰূপ।

যাৰ জৰিয়তে লেখকে পাঠক সমাজক আগতীয়াকৈ সেই ঠাই খনৰ সুবিধা- অসুবিধা, পৰিৱেশ-পৰিস্থিতি জনাত সহায় কৰে। পৰৱৰ্তী সময়ত ভ্ৰমণকাৰীজনৰ বাবে উক্ত ঠাইখনৰ বিষয়ে পূৰ্ব তথ্য লাভ কৰাত সহায়ক হয়।

ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ ইতিহাস বিচাৰ কৰিলে দেখা যায় যে- অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ আৰম্ভণি সময়ছোৱাৰ পৰাই পুৰুষ সকলৰ সমানে কম-বেছি পৰিমাণে মহিলা লেখিকা সকলেও ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ ৰচনাৰ ক্ষেত্ৰত আগভাগ লৈ আহিছে। বিভিন্ন ঠাই ভ্ৰমণ কৰি লাভ কৰা অভিজ্ঞতাসমূহ তেওঁলোকে নিজা দৃষ্টিভংগীৰে উপস্থাপন কৰিছে। কিন্তু তেওঁলোকৰ দ্বাৰা ৰচিত আৰু প্ৰকাশিত ভ্ৰমণ সাহিত্যসমূহৰ আলোচনা বিশেষভাৱে হোৱা নাই। সেয়ে এই আলোচনাত অসমীয়া সাহিত্যৰ এগৰাকী জনপ্ৰিয় ভ্ৰমণ লেখিকা - অনিমা গুহৰ ভ্ৰমণ বিষয়ক ৰচনা - 'তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দৰ্শন গ্ৰন্থখনৰ এক আলোচনা দাঙি ধৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে।

০.১ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

সাহিত্যৰ প্ৰাচীন অৱস্থাৰ পৰা বৰ্তমানলৈকে নানা বিপদ নেওচি মহিলা সাহিত্যিকসকলে নিজৰ নিজৰ ৰচনাৰাজিৰে সাহিত্যৰ ভড়াল চহকী কৰি আহিছে। কবিতা, নাটক, গল্প, উপন্যাস আদি বিভিন্ন ক্ষেত্ৰত মহিলাসকলে নিজৰ দক্ষতাৰে সমৃদ্ধি দান কৰি আহিছে। ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰতো তেওঁলোকৰ সৃষ্টিশীল প্ৰতিভাই পাঠকৰ দৃষ্টি আৰ্কষণ কৰিছে। কিন্তু সাহিত্যৰ পথাৰত মহিলাসকলৰ অন্যান্য সৃষ্টিৰাজিৰ আলোচনাৰ তুলনাত ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ দিশটো এতিয়াও বহুখিনি পিছ পৰি আছে। গতিকে সাহিত্যৰ অন্যান্য শাখাৰ দৰে ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ দিশটোৰ অধ্যয়নৰ প্ৰয়োজনীয়তা উদ্দেশ্য অনুভৱ কৰিয়ে বিষয়টো নিৰ্বাচিত কৰা হৈছে।

০.২ গুৰুত্ব ঃ

ভ্ৰমণ সাহিত্য সমূহ একোখন দেশ বা ঠাইৰ ভূগোল, ইতিহাস আৰু অন্যান্য সামাজিক দিশসমূহৰ নিষ্প্ৰাণ তথ্যৰ সমাৱেশ ৰূপে স্বীকৃত হৈ আহিছে। এই অধ্যয়নে ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ মাজত নিহিত হৈ থকা সামাজিক - সাংস্কৃতিক,ৰাজনৈতিক আদি দিশসমূহ পোহৰলৈ অনাত সহায় কৰিব। তদুপৰি নাৰী মানসিক অৱস্থা আৰু লেখন শৈলী দাঙি ধৰাত সহায় কৰিব। সেয়ে বিষয়টোৰ অধ্যয়নৰ যথেষ্ট গুৰুত্ব আছে ।

০.৩ পৰিসৰ ঃ

অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনলৈ মন কৰিলে দেখা যায় যে-পুৰুষসকলৰ সমান্তৰালকৈ মহিলাসকলে নিজৰ দক্ষতাৰে সমৃদ্ধি দান কৰি আহিছে । ভ্ৰমণ সাহিত্য ৰচনাৰ সৈতে জড়িত এগৰাকী খ্যাতনামা লেখিকা হৈছে অনিমা গুহ। তেওঁৰ দ্বাৰা ৰচিত ভ্ৰমণ বিষয়ক গ্ৰন্থসমূহ হৈছে তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দৰ্শন,মন মোৰ উৰণীয়া আদি। কিন্তু অধ্যয়নৰ পৰিসৰত কেৱল তেওঁৰ দ্বাৰা ৰচিত 'তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দৰ্শন' ভ্ৰমণ গ্ৰন্থখনৰ মাজত পৰিলক্ষিত দিশবোৰৰহে বিশ্লেষণ দাঙি ধৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

০.৪ পদ্ধতি ঃ

প্ৰস্তাৱিত বিষয়টোৰ বিশদভাৱে আলোচনা কৰাৰ ক্ষেত্ৰত বৰ্ণনাত্মক আৰু বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰ জৰিয়তে ঠাই বিলাক পৰিচয়,সমাজ জীৱন আদি দিশসমূহ বিচাৰ কৰাৰ লগতে বিশ্লেষণ পদ্ধতিৰ সহায়ত ঠাই বিলাকৰ সামাজিক, সাংস্কৃতিক, ৰাজনৈতিক ইত্যাদি বিভিন্ন দিশসমূহৰ আলোচনা দাঙি ধৰা হৈছে ।

০.৫ তথ্য আহৰণৰ উৎস ঃ

নিৰ্বাচিত বিষয়ৰ তথ্য আহৰণৰ উৎস স্বৰূপে মুখ্য আৰু গৌণ দুটা উৎসৰ সহায় লোৱা হৈছে । মুখ্য উৎসৰ অৰ্ন্তগত ভাৱে অনিমা গুহৰ ৰচিত ভ্ৰমণ বিষয়ক গ্ৰন্থকেইখন লোৱা হৈছে। গৌণ উৎসৰ অৰ্ন্তগত ভাৱে বিষয়ৰ সৈতে জড়িত প্ৰৱন্ধ,আলোচনী , ৱেবচাইট আদিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০ ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ পৰিচয়

মানুহে নিজৰ মনৰ তাগিদাতে হওঁক বা নজনাক জানিবলৈ নেদেখাক চাবলৈ মনত হেঁপাহ পুহি ৰাখে । সেয়ে সময় আৰু পৰিস্থিতিয়ে সুযোগ দিলে মনৰ ইচ্ছা পূৰণ কৰে। এনেদৰে নতুন ঠাইবিলাক ফুৰি লাভ কৰা অভিজ্ঞতাক লিখিত ৰূপ দি একশ্ৰেণীৰ সাহিত্য সৃষ্টি কৰে। নিৰ্দিষ্ট ঠাই ভ্ৰমণ কৰি পোৱা অভিজ্ঞতাক বৰ্ণনা কৰা লেখাই হ'ল চমুকৈ ভ্ৰমণ সাহিত্য। তদুপৰি ভ্ৰমণ সাহিত্যৰ প্ৰসংগত এটা কথা উল্লেখনীয় যে একেসময়তে এবিধ সাহিত্যই

পাঠকক নতুন ঠাইখনৰ তথ্যৰ যোগান ধৰিব লাগিব। লগতে লেখকৰ উৎকৃষ্ট লেখন শৈলীৰ আকর্ষণীয় গুণেও পাঠকক আনন্দ দিব লাগিব। দৰাচলতে ভ্রমণ সাহিত্যৰ সম্পর্কত নির্দিষ্ট একোটা সংজ্ঞা লাভ কৰা নাযায়। প্ৰৱন্ধ, গৱেষণা গ্ৰন্থ আদিত বিভিন্নজন লেখকে নিজা ধৰণে লাভ কৰা অভিজ্ঞতাসমূহৰ ভেটিত একোটা মত পোষণ কৰা দেখা যায়। তেনে কিছুমান মত হৈছে এনেধৰণৰ - ভ্রমণ সাহিত্যত লিখকৰ অভিজ্ঞতা, অনুভূতি আৰু ৰুচি প্ৰতিফলিত হয়। গতিকে ভ্রমণৰ ব্যাখ্যা, টোকা আৰু টিপনীয়ে পাঠকক অনুসন্ধানী আৰু উৎসুকী কৰি তোলে। তেনেকৈ বহুলোকে ক'ব খোজে লেখকৰ ব্যক্তিগত অভিজ্ঞতাৰ খোজে খোজে পাঠকো পৰোক্ষভাৱ সেই ঠাইৰ লগত পৰিচিত হয়, যি ঠাই লেখকে ভ্রমণ কৰে। তদুপৰি ভ্রমণ সাহিত্য হ'বলৈ ভ্রমণ অভিজ্ঞতাক সাহিত্যিক গুণেৰে সমৃদ্ধ কৰিব লাগিব। এই ক্ষেত্ৰত সুঐ পর্যবেক্ষণ শক্তি, কাব্যিক সংবেদন মন আৰু ভাষাৰ মাধুর্যৰ প্ৰয়োজন। তাকে নহ'লে ই ভ্রমণ সাহিত্য নহৈ তথ্যসমৃদ্ধ কোনো ঠাইৰ গাইড বুকহে হ'ব। আন একাংশই এনেকৈ ক'ব খোজে লেখকৰ ভ্রমণ সাহিত্য সাম্প্ৰতিকালৰ একপ্ৰকাৰৰ ব্যক্তিগত ৰচনা, য'ত লেখকৰ ভ্রমণৰ আনন্দ স্বতঃস্ফুর্ত আৱেগ অনুৰাগেৰে ৰঞ্জিত হয় আৰু য'ত লেখকৰ ব্যক্তিগত অভিজ্ঞতাৰ খোজে-খোজে পাঠকো সেই ঠাইৰ লগত পৰিচিত হয়, যি ঠাই লেখকে ভ্রমণ কৰে। নতুবা এনেকৈও ক'ব পাৰি ভ্রমণে মানুহৰ অজ্ঞাত আৰু অদৃশ্য ইন্দ্ৰজাল আঁতৰোৱাত সহায় কৰে। সেয়ে ভ্রমণকাৰীসকলৰ লেখা বা টোকা ঐতিহাসিক আৰু সাহিত্যৰ সমল যোগোৱাত সহায়ক হয়।

১.১ অসমীয়া সাহিত্যৰ ইতিহাস ঃ

অসমীয়া সাহিত্যৰ ইতিহাসত ভ্রমণ সাহিত্যৰ এক সুকীয়া স্থান আছে। ভ্রমণ সাহিত্যৰ ইতিহাস বিচাৰ কৰিলে দেখা যায় যে প্ৰাচীন যুগত আহোম স্বর্গদেউ জয়ধ্বজ সিংহৰ (১৬৪৫-৬) ৰাজত্ব কালত ৰাম মিশ্ৰই বৃন্দাৱন চৰিত্ৰ নামেৰে এখন ভ্রমণ বৃত্তান্ত লিখিছিল। সপ্তদশ শতিকাত ৰচিত এই গ্ৰন্থক অসমীয়া সাহিত্যৰ প্ৰথম ভ্রমণ সাহিত্য বুলি ক'ব পাৰি। এই গ্ৰন্থত ৰাম মিশ্ৰই বৃন্দাবন ভ্রমণ কৰি সেই অঞ্চলৰ ভূগোল ,ইতি হাস আৰু লোককথা সংগ্ৰহ কৰি মনোৰম পদত ৰচনা কৰিছে। তাৰপাছতে স্বর্গদেউ ৰুদ্ৰসিংহই (১৬৯৬-১৭১৪) ত্ৰিপুৰা ৰজা ৰত্নমাণিক্যৰ ৰাজসভালৈ পঠিওৱা ৰত্ন কন্দলী আৰু অর্জুন দাস বৈৰাগী নামৰ কটকী দুজনে ৰচনা কৰা ত্ৰিপুৰা বুৰঞ্জী (১৭২৪) খনকো ভ্রমণ সাহিত্যৰ মর্যাদা দিব পাৰি। এই গ্ৰন্থত আহোম ধাৰাৰ আহোম যুগীয় এই গ্ৰন্থত লেখকদ্বয়ে ত্ৰিপুৰালৈ যোৱা বাট-পথ, ত্ৰিপুৰাৰ ৰজাৰ নগৰ, কোঁঠ, ৰাজ দৰবাৰ, লোকসংস্কৃতি ধর্মবিশ্বাস, মন্দিৰ, দুর্গৰ স্থাপত্য আদিৰ তথ্যসমৃদ্ধ বর্ণনা দিছে। অষ্টাদশ শতিকাত শংকৰদেৱ আৰু তেওঁৰ শিষ্য-প্ৰশিষ্যসকলে ভাৰতবর্ষৰ বিভিন্ন তীর্থ ভ্রমণৰ অভিজ্ঞতা গুৰুচৰিত কথা পুথিৰ মাজেৰে বর্ণনা কৰিছে।

আধুনিক ভ্রমণ সাহিত্যৰ বীজ অংকুৰিত হৈছিল অৰুণোদয়ৰ বুকুত। প্ৰকৃত অর্থত বিংশ শতিকাৰ দ্বিতীয়ার্ধৰ পৰাহে অসমীয়া ভ্রমণ সাহিত্যৰ স্পষ্ট ৰূপ এটি পোৱা যায় যদিও এই ৰূপ স্বৰাজোত্তৰ কালত ধাৰাবাহিকভাৱে জিলিকিবলৈ ধৰে। স্বাধীনতাৰ পৰৱর্তী কালছোৱাত অসমৰ জীৱন ধাৰালৈ পৰিৱর্তন আহিল। উচ্চ শিক্ষা, ৰাজনৈতিক- সাংস্কৃতিক -বৌদ্ধিক আদি কাৰণত ভাৰতৰ বাহিৰলৈ বহুতো মানুহে সুযোগ সুবিধা লাভ কৰিলে। আনহাতে পৰিবহণ আৰু যোগাযোগ ব্যৱস্থাৰ প্ৰগতিয়ে ভাৰতৰ বাহিৰলৈ ভ্রমণ কৰিবলৈ পথ সুচল কৰি তুলিলে। মুঠৰ ওপৰত সন্তোষজনক ন'হলেও অসমীয়া ভ্রমণ সাহিত্যই স্বাধীনতাৰ পৰৱর্তীকালত সমৃদ্ধি লাভ কৰিছে বুলি ক'ব পাৰি।

২.০ অনিমা গুহৰ পৰিচয় ঃ

অসমীয়া সাহিত্য জগতত এগৰাকী সমাজকর্মী, নাৰীবাদী লেখিকা তথা সাহিত্যিক পেঞ্চনাৰ ৰূপে পৰিচিত তথা এটি চিনাকি নাম হৈছে অনিমা গুহ। তেখেত জনপ্ৰিয় লেখক তথা বুৰঞ্জীবিদ অমলেণ্ড গুহৰ পত্নী। নাৰীৰ অধিকাৰ বাবে গঠন হোৱা মঞ্চ *নির্যাতিত বিৰোধী মঞ্চৰ* সভাপতি ৰূপে তেখেত পৰিচিত। লগতে মহিলাসমাজৰ ন্যার্যতা প্ৰাপ্তিৰ দাবীত তেওঁ বহুদিন ধৰি আন্দোলন কৰি আহিছিল । সাহিত্যৰ জগতত তেখেত নাম চিৰজনবিদিত। প্ৰায় ষাঠি-সত্তৰ দশকৰ পৰাই তেওঁ লেখা মেলা কৰি আহিছে। বিশেষকৈ তেখেতৰ নাৰীকেন্দ্ৰিক লেখাবোৰে সদায় জনপ্ৰিয়তা লাভ কৰি আহিছে। অসমীয়া খবৰ কাকতৰ তেওঁ নিয়মীয়া লেখক আছিল। তেওঁৰ ৰচিত সাহিত্যৰাজি হৈছে- জীৱনৰ জোৱাৰ ভাটাৰ মাজেদি , তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দর্শন,বাকীছোৱা জীৱন,তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ দৃষ্টিত নাৰী আৰু সমাজ ,এমুঠি অভিজ্ঞতা, মানুহ চিত্ৰশালাত,

সোঁতৰ বিপৰীতে, নীল আকাশৰ তলত, বিপন্ন প্রজাতি ইত্যাদি। অনুদিত সাহিত্যৰ ক্ষেত্রখনতো তেখেতৰ নাম চিৰপৰিচিত। তেখেতে স্বামী অমলেণ্ড গুহৰ সৈতে মিলিত হৈ চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ ৰচিত উপন্যাস- সূৰ্যমুখী স্বপ্নৰ বঙালী অনুবাদ কৰিছিল। তেনেদৰে তেওঁৰ ৰচিত অনুদিত আন গ্রন্থবোৰৰ ভিতৰত - বাঙালীৰ ইতিহাস, পূর্বাঞ্চল চফৰ, নির্বাচিত কলম, পৰিণীতা ইত্যাদি কথা ক'ব পাৰি।

২.১ অনিমা গুহৰ ভ্রমণ সাহিত্য ঃ

ভ্রমণ বিষয়ক লেখাৰ সৈতে জড়িত তেখেত হৈছে এগৰাকী চিৰপৰিচিত মহিলা। তেখেতৰ দ্বাৰা ৰচিত ভ্রমণ কেন্দ্রিক সাহিত্য হৈছে - তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দর্শন, মন মোৰ উৰণীয়া পক্ষী আদি। তেখেতৰ ৰচিত গ্রন্থসমূহৰ ভিতৰত 'তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দর্শন' গ্রন্থখনত তেখেতে ২৬টা অধ্যায়ত বিভাজন কৰি ভ্রমণৰ অভিজ্ঞতা বর্ণনা কৰিছে। নিজকে তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ ৰূপত পৰিচয় তুলি ধৰি গ্রন্থখনৰ পাতনি মেলিছে। গ্রন্থখনত লেখিকই ঠাইখনৰ প্রায়খিনি দিশ সামৰিবলৈ প্রয়াস কৰিছে। তেখেতে কৈছে যে- আমেৰিকাখন পৃথিৱীৰ বিভিন্ন ঠাইৰ পৰা অহা ধর্ম আৰু সংস্কৃতিৰ সমাহাৰে পৰিপূর্ণ হৈ আছে। গ্রন্থখনত ঠাইডোখৰৰ অর্থনৈতিক, সাংস্কৃতিক, পৰিবহন ব্যৱস্থা আদিৰ বর্ণনা তুলি ধৰাৰ লগতে তেওঁলোকৰ চাল-চলন আদিৰ বিষয়ে বর্ণনা কৰিছে। খাদ্যাভাস, ৰন্ধনপ্রণালীৰ বিষয়ে ক'বলৈ গৈ তেখেতে আমেৰিকাত ৰন্ধা-বঢ়া কামটো যে-শিল্প পর্যায়লৈ উন্নীত হৈছে সেয়া তুলি ধৰিছে। লেখিকাই কৈছে যে - আমেৰিকাত মহিলাসকলে স্বাধীনভাৱে, দৃঢ়তাৰে নিজৰ কর্মৰাজি কৰি যোৱাত কোনেও বাধা প্রদান নকৰে। নাৰীসকলে নিজৰ সুবিধানুযায়ী সকলো কর্মই কৰিব পাৰে। লগতে 'নাছা' (NASA)ৰ চৌহদৰ বিষয়ে ক'বলৈ গৈ কৈছে যে-স্বয়ং বিশ্বকর্মাকো তেওঁলোকৰ উন্নত কর্মশৈলীয়ে পিছ পেলাব। অৱশ্যে আমেৰিকাত কৃষ্ণাঙ্গ আৰু শেতাঙ্গসকলৰ মাজত থকা বর্ণগত পাথর্ক্যই লেখিকাক হতাশ কৰিছে বুলি তেখেতে গ্রন্থখনৰ এঠাইত উল্লেখ কৰিছে। তদুপৰি এখন প্রভাৱশালী দেশ হোৱা স্বত্তেও দেশখনত আন বহু উন্নয়নশীল দেশৰ দৰে নিৰনুৱা সমস্যাটোৱে মেৰিয়াই ৰাখিছে। চিকিৎসা বিজ্ঞানে উন্নতিৰ শিখৰত ধাৱমান হ'লেও কোনো লোকে বীমা নকৰালে চিকিৎসা লাভ কৰাৰ পৰা বঞ্চিত হ'বলগীয়া হয়।

'মন মোৰ উৰণীয়া পক্ষী' গ্রন্থখন হৈছে লেখিকাৰ দ্বাৰা ৰচিত আন এক ভ্রমণ সাহিত্য। গ্রন্থখনত লেখিকাই কোকৰাঝাৰত অৱস্থিত তেখেতৰ ঘৰৰ পৰা আঠ কি.মি. নিলগৰ হাবিতলীয়া গাওঁ ভাতাৰমাৰীলৈ কৰা ভ্রমণৰ অভিজ্ঞতাৰ ভিত্তিত গ্রন্থখনৰ আৰম্ভণি কৰিছে। অৱশ্যে ইয়াৰ পূর্বতে গ্রন্থখনত 'মনসা মথুৰাং গচ্ছামি' শীর্ষক নামেৰে একোটা প্রস্তাৱনা অংশ তুলি ধৰা দেখা যায়। ক্ষুদ্র কলেবৰৰ গ্রন্থ যদিও এই গ্রন্থখনবহুকেইটা ভ্রমণ লেখাৰ সমষ্টি। গ্রন্থখনৰ এটা উল্লেখনীয় বৈশিষ্ট্য হৈছে - তেখেতে শৈশৱতে বিভিন্ন ঠাইলৈ যোৱা ভ্রমণৰ অভিজ্ঞতাক গ্রন্থখনত নিজা ধৰণে সজাই তুলিছে। যিটো আন ভ্রমণ গ্রন্থ বিলাকত প্রায়ে চকুত নপৰে বুলি ক'ব লাগিব। সেয়ে গ্রন্থখনত লেখিকাই জীৱনত প্রথম সোঁশৰীৰে লাভ কৰা ভ্রমণ অভিজ্ঞতাৰ পৰা ধৰি আমেৰিকাৰ বিশ্ব বাণিজ্য সংস্থা ধ্বংসৰ পৰৱর্তী সময়লৈকে সামৰি লৈছে। গ্রন্থখনৰ বিভিন্ন শিতানসমূহ হৈছে এনেধৰণৰ- সোঁ শৰীৰে ভ্রমণৰ আনন্দ, ছত্রপতি শিৱাজীৰ দুর্গত,হঠাৎ বাংলাদেশলৈ, মেকমোহন লাইনৰ পম খেদি, ভ্রমণ বিলাসীৰ ৰম্যপুৰী মণিপুৰলৈ, লণ্ডনৰ কিউ উদ্যানত এটা দিন, আকৌ মার্কিন যুক্তৰাষ্ট্রলৈ, এজন সোপাধৰা আত্মঘাটী বোমাৰু ইত্যাদি। মুঠতে গ্রন্থ খনত বিজনী অঞ্চলৰ ৰাজ শাসনকালীন বুৰঞ্জী, ঐতিহাসিক সময়ৰ সেই ঠাইৰ ভৌগোলিক তথ্য, বাংলাদেশৰ মানুহৰ চৌখিনতা বিহীন একোটা সহজ সৰল জীৱন, তেওঁলোকৰ অতিথিপৰায়ণ স্ব ভাৱটো তুলি ধৰিছে। মূলত দুয়োখন গ্রন্থৰ তুলনাত 'তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দর্শন' গ্রন্থখনত ব্যস্তনিষ্ঠ চিন্তাই প্রাধান্য লাভ কৰাৰ পৰিৱর্তে অনুভূতিশীল মনটোৱে প্রাধান্য পাইছে। এই আলোচনাত উক্ত গ্রন্থৰ মাজেদি প্রতিফলিত ঠাইসমূহৰ বিভিন্ন দিশসমূহ তুলি ধৰিবলৈ প্রয়াস কৰা হৈছে।

৩.০ 'তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দর্শন' ভ্রমণ সাহিত্যৰ মাজত প্রতিফলিত বিভিন্ন দিশ ঃ

ভ্রমণ সাহিত্যসমূহত একোখন ঠাইৰ ইতিহাস, ৰাজনৈতিক অৱস্থা, সামাজিক, অর্থনৈতিক, সাংস্কৃতিক ইত্যাদি বিভিন্ন দিশ ফুটি উঠা দেখা যায়। তলৰ আলোচনাত এই দিশসমূহৰ সম্পর্কে আলোচনা দাঙি ধৰা হৈছে -

ইতিহাসৰ বিৱৰণ ঃ

ইতিহাসৰ বৰ্ণনা অবিহনে দেশ এখনৰ পৰিচয় সম্পূৰ্ণ নহয়। সেয়ে ইতিহাসৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰিহে এজন লেখকে দেশ এখনৰ বৰ্ণনা তুলি ধৰা দেখা যায়। কিয়নো ইতিহাস তথা দেশৰ বুৰঞ্জী জ্ঞানৰ অবিহনে বৰ্তমানক বুজ লোৱাটো কঠিন । ভ্ৰমণ গ্ৰন্থৰ আলোচনাৰ প্ৰসংগতো দেখা যায় যে- লেখকসকলে বৰ্ণনাৰ আৰম্ভণিতে বা সমাপ্তৰালকৈ দেশখনৰ সৈতে জড়িত ইতিহাসৰ কথাহে তুলি ধৰিবলৈ যত্ন কৰে। অৰ্থাৎ পুৰুষসকলৰ সমান্তৰালকৈ মহিলা সকলেও নিজৰ দক্ষতাৰ পৰিচয় তুলি ধৰিছে। অনিমা গুহৰ ৰচিত-"তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দৰ্শন" গ্ৰন্থখনত মুঠ ২৬ অধ্যায়ত গ্ৰন্থখন ভাগ কৰি আলোচনা কৰিছে। গ্ৰন্থখনৰ প্ৰথম অধ্যায় 'পশ্চিম গোলাৰ্ধ অভিমুখে যাত্ৰা' অধ্যায়ত লেখিকাই আমেৰিকা আৱিস্কাৰৰ ইতিহাস সম্পৰ্কে আলোচনা দাঙি ধৰা দেখা যায়। তেখেতে উল্লেখ কৰিছে যে- ১৪৯২ চনত অৰ্থাৎ পোন্ধৰশ শতিকাৰ শেষৰফালে কলম্বাছে আমেৰিকা আৱিস্কাৰ কৰাৰ পাছত ইউৰোপৰ বেলেগ-বেলেগ ঠাইৰ পৰা মানুহে দলে - দলে আহি এই ভূখণ্ডত বাস কৰিবলৈ লয়। ৰেড ইণ্ডিয়ীনসকলৰ ই মাতৃভূমি। বৰ্তমানে এওঁলোকক আমেৰিকান ইণ্ডিয়ান বুলিও কয়। ইউৰোপীয়সকল এই বিশাল অঞ্চলটোলৈ অহাৰ উদ্দেশ্য আছিল খেতি-বাতি কৰি চহকী হোৱা। তাৰ বাবে বহুসংখ্যক শ্ৰমিকৰ প্ৰয়োজন আছিল। সেয়ে আফ্ৰিকাত বাস কৰা হাজাৰ হাজাৰ ক'লা মানুহক ধৰি আনি জাহাজত তুলি লৈ আহিল। আনফালে ৰেড ইণ্ডিয়ানসকলক ঠেলি-ঠেলি হাবিয়ে জংঘলে পঠালে। এককথাত ক'লা মানুহবোৰে মূৰৰ ঘাম মাটিত পেলাই আমেৰিকাক শস্য শ্যামলা কৰিলে। অৰ্থাৎ আজিৰ আমেৰিকা এনে এখন দেশ যাৰ বাসিন্দাসকলৰ মাতৃভূমি আমেৰিকা নহয়। মাত্ৰ পাঁচ-ছয় বছৰৰ আগেয়ে বৃটেইন, ইটালী, পতুৰ্গাল, স্পেইন আদি ইউৰোপৰ পৰা অহাসকলৰ আৰু ক্ৰীত দাসসকলৰ বংশধৰ হ'ল বৰ্তমান আমেৰিকা। তদুপৰি এওঁলোকক ক্ৰমে শ্বেতাঙ্গ আৰু কৃষ্ণাঙ্গ আমেৰিকান বুলি কোৱা হয়। বৰ্তমান 'নিগ্ৰো' শব্দটোৰ ব্যৱহাৰ আমেৰিকাত অচল হৈ পৰিছে। (পৃ.১১)

'আমেৰিকা নে জহন্নামলৈ' শিতানত লেখিকাই উল্লেখ কৰিছে যে - ১৯৮৯ চনত তেওঁ যেতিয়া বাংলাদেশৰ এখন কনফাৰেন্সত যোগ দিবলৈ গৈছিল তেতিয়া বাংলাদেশ ভাৰতৰ অংশ আছিল। সেয়ে বাংলাদেশৰ মাজেৰে তেওঁ কলিকতালৈ বুলি গৈছিল। গতিকে লেখিকাৰ মতে বৰ্তমান সময়ছোৱাত তেখেতৰ ধুবুৰীৰ ঘৰৰ ওচৰতে থকা বাংলাদেশখনক বিদেশ বুলি ভাৱিবলৈ অসুবিধা বোধ হয়। (পৃ.৩২)

লেখিকাই উল্লেখ কৰিছে যে - "পৃথিৱীৰ ভিতৰত তৃতীয় বৃহত্তম আমেৰিকা মহানগৰ খনত ইউৰোপীয় সকলৰ মাজত পোন প্ৰথম ফৰাচী নাবিকৰ দল এটা বাস কৰিবলৈ লয় বুলি কৈছিল।" (পৃ.৩৯)

তেনেদৰে কৃত্ৰিম হ্ৰদ 'লেক মীড'ৰ সৃষ্টিৰ ইতিহাস সম্পৰ্কে ক'বলৈ গৈ লেখিকাই মত পোষণ কৰিছে যে-এই হ্ৰদটো কলৰোডা নৈত ভেটা দি সৃষ্টি কৰিছিল। আঁচনিখন লোৱাজনৰ নামেৰে বান্ধটোৰ নাম 'হুডাৰ ডাম' ৰখা হয়। ১৯৩১ চনত আৰম্ভ কৰি ১৯৩৬ চনত এই বান্ধটোৰ কাম শেষ কৰা হয়। ইয়াৰ পৰাই সেই অঞ্চলৰ মানুহক জলসিঞ্চন আৰু জল বিদ্যুৎ যোগান ধৰাৰ ব্যৱস্থা কৰা হয়। (পৃ.৫৪)

'কিউবাক উপত্যকা'ৰ সৃষ্টিৰ প্ৰসংগত লেখিকাই ভূতত্ত্ববিদসকলে পোষণ কৰা মত দাঙি ধৰি কৈছে যে- চাৰে ছয় কোটি বছৰৰ আগেয়ে প্ৰকৃতিৰ উৎপেক্ষণ প্ৰক্ৰিয়াৰ সৈতে পৰ্বত-পাহাৰৰ সৈতে কিউবাক উপত্যকাৰ সৃষ্টি হৈছিল তেনেদৰে পেলিও ইণ্ডিয়ানসকলৰ বসতিৰ ইতিহাস সম্পৰ্কে ক'বলৈ গৈ লেখিকাই কৈছে যে- 'তেওঁলোক এঘাৰ হেজাৰ বছৰ আগেয়ে সৰ্বপ্ৰথম কেণিয়ন অঞ্চলত বাস কৰিছিল। আজিৰ পৰা তিনিহাজাৰ বছৰ আগলৈকে এই চাম মানুহ তাত বাস কৰি আছিল। এওঁলোকৰ পাছত বহুবছৰলৈকে সেই স্থানত কোনেও বসতি কৰাৰ কথা জানিব পৰা নাযায় যদিও পাচঁশৰ পৰা বাৰশপঞ্চাছ চনলৈ আনাছাজী ইণ্ডিয়ানসকলে বসতি স্থাপন কৰে বুলি ক'ব পাৰি। অৱশ্যে কোহোনিকো নামৰ এটা ইণ্ডিয়ান গোষ্ঠীৰ সৈতে বেহা-বেপাৰ সম্পৰ্ক অটুত ৰাখি ইয়াত বসবাস কৰিছিল যদিও বানপানীয়ে অঞ্চলটো জলমগ্ন কৰি তোলাত তেওঁলোকে কেণিয়ৰ

পূবলৈ গুচি যায়। বর্তমান সেই অঞ্চলত বাস কৰি থকা হোপী ইণ্ডিয়ানসকল এই আনছাজীসকলৰে পূর্বপুৰুষ। শেষবাৰলৈ কেণিয়ন অঞ্চলত বাস কৰা উপজাতিটো হ'ল- নাভাজো ইণ্ডিয়ান। আজিৰ পৰা চাৰিশ বছৰ আগলৈকে তেওঁলোকে তাত বাস কৰি আছিল আৰু বর্তমানো কেৰ্ণিয়ৰ পূবে বসবাস কৰি আছে।' (পৃ.৫৭)

ৰাজনৈতিক দিশ ঃ

এখন দেশৰ ৰাজনৈতিক বুৰঞ্জীয়ে দেশখনৰ শাসনব্যৱস্থা, আন্তৰাষ্ট্রীয় সম্পর্ক, ভোটাৰসকলৰ অধিকাৰ, তেওঁলোকৰ ৰাজনৈতিক ক্ষমতা আদি বহুতো দিশ ফুটাই তুলিবলৈ সক্ষম হয়। লগতে মহিলাসকলৰ ক্ষেত্রত ৰাজনৈতিক সমতা কিদৰে প্রয়োগ কৰিছে বা ৰাজনৈতিক দৃষ্টিকোণ কেনেধৰণৰ,মহিলাসকলক ৰাজনৈতিক অধিকাৰ কেনেদৰে পোষণ কৰিছে ,ভোটদান কৰাৰ ক্ষেত্রত মহিলাসকলৰ ভূমিকা কেনেধৰণৰ,লগতে চৰাকাৰৰ গঠনৰীতি আৰু ৰাজনৈতিক উন্নয়নৰ ক্ষেত্রত কেনেধৰণৰ ভূমিকা গ্রহণ কৰিছে সেয়া আলোচনা কৰা হয়। অণিমা গুহৰ ৰচিত '*তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দর্শন*' গ্রন্থখনত লেখিকাই ভাৰতৰ ৰাজনৈতিক ব্যৱস্থাক ব্যঙ্গ কৰিছে- 'প্রধানমন্ত্রী বিদেশ চফৰলৈ ওলোৱা বাবে কেখিনমান বিমান তেওলৈ আচুতীয়াকৈ ৰখা হৈছে। ভালকথা, ইয়াকেই কয় ডেমোক্রেচী । এজন মানুহৰ বাবে অসংখ্য মানুহৰ বিলৈ। ৰজা-প্রজাৰ মাজত পার্থক্য থাকিবই।' (পৃ.২৩)

তেনেকৈ অসমৰ মুখ্যমন্ত্রীৰ কথা ক'বলৈ গৈ কৈছে- 'আচলতে মই আদাৰ বেপাৰী। মোৰ জগতখন সৰু,জাহাজৰ খবৰ পাম ক'ত? ডাঙৰ জগতত বিচৰণ কৰা সকলৰ মাজত তেতিয়ালৈকে এজনকহে জানিছিলোঁ -তাকো বাতৰি কাকতৰ যোগেদি-যিয়ে সঘনাই দিল্লীলৈ যায়। এইগৰাকী মানুহ হ'ল-অসমৰ মুখ্যমন্ত্রী।' (পৃ.৪২)

আমেৰিকাৰ চৰকাৰ গঠনৰ প্রক্রিয়াৰ বিষয়ে ক'বলৈ গৈ লেখিকাই ভাৰতৰ সৈতে তুলনা কৰি দেখাইছে। গ্রন্থত লেখিকাই উল্লেখ কৰিছে- ৰাজ্যিক আৰু কেন্দ্রীয় চৰকাৰৰ গঠনত আমেৰিকাৰ ৰাইজৰ অধিকাৰ আমাতকৈ বেছি। ভাৰতীয় সংবিধানৰ মতেও নাগৰিকৰ ভোটৰ জোৰতহে দুয়োবিধ চৰকাৰ গঠন হয়। পিছে এজন প্রধান মন্ত্রী পতাত আমাৰ কোনো প্রত্যক্ষ হাত নাই। ৰাজনীতিৰ মেৰপাকত পৰি কোন কেতিয়া প্রধানমন্ত্রী হয় কোৱা টান। আমেৰিকাৰ প্রেচিডেন্টে জানে য়ে তেওঁ নাগৰিকৰ ভোটৰ জোৰতহে প্রেচিডেন্ট হ'ব পাৰিছে। তদুপৰি মার্কিন প্রেচিডেন্ট আমাৰ প্রেচিডেন্টৰ দৰে সভা-শুৱনি কৰা প্রেচিডেন্ট নহয় । তেওঁৰেই দেশৰ সর্বেসর্বা। (পৃ.৯৪)

গ্রন্থখনৰ 'বর্ণগত সংঘর্ষ' শিতানত লেখিকাই আমেৰিকাৰ ৰাজনৈতিক দিশৰ ছবিখন স্পষ্টৰূপত তুলি ধৰিবলৈ প্রয়াস কৰিছে। লেখিকাই উল্লেখ কৰিছে যে- আমেৰিকাৰ আইনবোৰ বগাৰ প্রতি উদাসীন আৰু সাধাৰণ কথাতে ক'লাসকলক কঠোৰ শাস্তি প্রদান কৰিছিল। দেশখনত ক্রীতদা প্রথাই এক জটিল সমস্যাৰূপে গা- কৰি উঠিছিল। সেয়ে তেতিয়াৰ ভাৰী ৰাষ্ট্রপতি আব্রাহন লিংকনে ১৮৬১ চনত দক্ষিণৰ ৰাষ্ট্রবোৰত ঘূৰি তাৰ অভিজ্ঞতাৰ আলম লৈ দেশখনৰ ক্রীতদাস প্রথা আঁতৰ কৰিবলৈ দৃঢ় প্রতিজ্ঞ হ'ল। সেয়ে পৰৱর্তীসময়ত ৰাষ্ট্রপতি হিচাপে নির্বাচিত হোৱাত ১৮৬৩ চনৰ জানুৱাৰী এক তাৰিখে দাসত্ব প্রথা আঁতৰাই ক্রীতদাসসকলক মুকলি কৰি দিছিল।' (পৃ.১০৪)

অর্থনীতিৰ বিৱৰণ ঃ

একোখন দেশৰ অর্থনীতিৰ ওপৰতে দেশখনৰ ভৱিষ্যত নির্ভৰ কৰে। আচলতে অর্থনীতি উন্নত হ'লে দেশখন আগবাঢ়ি যোৱাত সহায় হয়। দেশ এখনৰ অর্থনীতিত কৃষিৰ ভূমিকা গুৰুত্বপূর্ণ। তদুপৰি চাকৰি, ব্যৱসায়, পদোন্নতি, শ্রমব্যৱস্থা আদি সকলো অর্থনীতিৰ একোটা অংশ। লগতে দেশৰ মুদ্রা ব্যৱস্থা, বেংক ব্যৱস্থা, বিনিয়োগ প্রতিষ্ঠান, বেপাৰ বাণিজ্য,অন্য দেশৰ সৈতে বেপাৰ বাণিজ্য সম্পর্কীয় চুক্তি, অর্থনৈতিক মন্দাবস্থা ইত্যাদি ভালেখিনি দিশ ইয়াৰ অন্তভুর্ক্ত বুলিব পাৰি। অৱশ্যে এই অর্থনীতিৰ উন্নয়নৰ আঁৰত শ্রমিকসমাজৰ কষ্ট যিদৰে জড়িত হৈ থাকে তেনেদৰে মালিক শ্রেণীৰ শোষণ, শাসন, নিপীড়ন আদিও অবিচ্ছেদ্য অংগ ৰূপে জড়িত হৈ আছে। এই গৱেষণা গ্রন্থত ভ্রমণ লেখকসকলে নির্দিষ্ট ঠাইডোখৰৰ অর্থনৈতিক ছবিখন পার্যমানে তুলি ধৰিবলৈ প্রয়াস কৰিছে। অণিমা গুহৰ

ৰচিত 'তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দৰ্শন' শীৰ্ষক গ্ৰন্থত ভাৰতৰ অৰ্থনৈতিক ব্যৱস্থা যে পূৰ্বতে ইংলেণ্ডৰ ওপৰত নিৰ্ভৰশীল আছিল সেয়া বৰ্ণনা কৰিবলৈ গৈ এনেদৰে মত পোষণ কৰা দেখা যায় - 'সৰুতে আমি ইংলেণ্ডত তৈয়াৰী কাপোৰ পিন্ধিছিলোঁ। উল কিনিছিলোঁ, স্নো পাউদাৰ ঘঁহিছিলোঁ।' (পৃ. ২৯)

তেনেদৰে আমেৰিকাৰ বজাৰ ব্যৱস্থাৰ বিষয়ে এনেকৈ মত দাঙি ধৰিছে- 'সেইখন দেশত সকলো বস্তু সুদৃশ্য পেকেটত পোৱা যায়। পেকেটবোৰ ডাঠ কাগজ, প্লাষ্টিক, টিন আদিৰে তৈয়াৰী। গাখীৰ বা ফলৰ ৰস কিনিবলৈ বাচন নিব নালাগে। মাছ-মাংস ধুনীয়াকৈ কাটি সজাই মেলি থাৰ্মোকলৰ ট্ৰেত বিক্ৰী কৰে।' (পৃ. ৪৪)

আকৌ গ্ৰন্থখনত তেখেতে আমেৰিকাৰ বজাৰ ব্যৱস্থা শুৰনি কৰা খাদ্য সামগ্ৰীৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। লগতে ভাৰতবৰ্ষৰ সামগ্ৰীবোৰৰ দৰ-দামৰ সৈতে আমেৰিকাৰ বস্তুবিলাক দামৰ পাৰ্থক্য দাঙি ধৰিছে। গ্ৰন্থত তেখেতে এনেকৈ উল্লেখ কৰিছে- ' আমাৰ ইয়াত উপাৰ্জনৰ সিংহভাগ খৰচ হয় খাওঁতে। মাহেকত এহেজাৰ ডলাৰ যাৰ আয় তেওঁ এশ ডলাৰ খৰচ কৰিয়ে খাই-বই থাকিব পাৰে।' (পৃ. ৭৭)

গ্ৰন্থখনত লেখিকাই অৰ্থনীতিৰ ছবিখন দাঙি ধৰিবলৈ গৈ ১৯৩০ চনত আমেৰিকাত দেখা দিয়া অৰ্থনৈতিক মন্দাৱস্থাৰ বিষয়ে উল্লেখ কৰিছে। তেখেতে গ্ৰন্থখনত উল্লেখ কৰিছে - 'অৰ্থনৈতিক দুৰ্দশাই দেশা দিয়া সময়ত দৰিদ্ৰ নিগ্ৰোসকলৰ অৱস্থা কুলাই-পাচিয়ে নধৰা হ'ল। কিছুদিনৰ পাছত আমেৰিকাত ফ্ৰঙ্কলিন ডি ৰুজভেল্ট (১৯৩৩-১৯৪৫) ৰাষ্ট্ৰপতি হিচাপে নিৰ্বাচিত হয়। সেই সময়ত তেওঁ আৰু তেওঁৰ পত্নীয়ে দৰিদ্ৰ নিগ্ৰোসকলৰ বাবে কল্যাণমূলক কাম কৰিবলৈ আগ্ৰহী হ'ল।' (পৃ.১৫০)

লেখিকাই আমেৰিকাৰ ঘৰুৱা অৰ্থনীতিৰ কথা তুলি ধৰি এনেদৰে উল্লেখ কৰিছে- ''আমেৰিকাত এই টো এটা মজাৰ ঘটনা। কিছুমান বস্তু আছে অব্যৱহৃত অৱস্থাত ঘৰতে পৰি থাকে। কামতো নাহে, পেলাবও নোৱাৰি। এইবোৰ চাই চাই মানুহে যেতিয়া অতিষ্ঠ হৈ উঠে তেতিয়া ঘৰৰ গেৰেজত নাইবা ল'নত উলিয়াই বেচে।' (পৃ.১৬১)

তেনেকৈ বজাৰ ব্যৱস্থাত কুপনৰ ব্যৱহাৰৰ প্ৰসংগ উল্লেখেৰে মত দাঙি ধৰি কৈছে- 'আমেৰিকাত কুপন এটা বৰ ইন্টাৰেষ্টিং বস্তু। দোকানী আৰু প্ৰস্তুতকৰ্তাসকলে তেওঁলোকৰ সা-সামগ্ৰী, বয় -বস্তু আদি সুলভ মূল্যত বেছিবলৈ ক্ৰেতাক কুপনদিয়ে। একোখন কাগজত ফল,ফুল, মাখন, দৈ, চাবোন, চ্যুপ, আইচক্ৰীম চ্যুপ, আইচক্ৰীম, কাপোৰ-কানি ইত্যাদি প্ৰয়োজনীয় সকলো বস্তুৰ কুপনবোৰ ছপোৱা হয়। তাৰ পৰা যাৰ যিটো দৰকাৰ সেইটো কাটি উলিয়ায়। (পৃ.১৬৪)

এনেদৰে আমেৰিকাৰ অৰ্থনীতিত জাপানী বয়-বস্তুৰে কিদৰে বজাৰ দখল কৰিছে সেই বিষয়েও মত দাঙি ধৰি কৈছে- 'জাপানী বয়-বস্তু, বিশেষকৈ মটৰ গাড়ীৰে আজি আমেৰিকাৰ বজাৰ প্লাৱিত। আমেৰিকাই জাপানৰ ঋণ বিদেশী মুদ্ৰাৰে শুজিব নোৱাৰি তেওঁলোকৰ বহু কাৰখানা আদি জাপানৰ হাতত তুলি দি মালিকানা হস্তান্তৰ কৰিছে।' (পৃ. ১৯৭)

সমাজ জীৱন, শিক্ষা,সংস্কৃতি ঃ

ভ্ৰমণ সাহিত্যত সমাজ জীৱনৰ বিষয়বস্তুৰে প্ৰধান স্থান অধিকাৰ কৰিছে। ইয়াৰ লগতে সংপৃক্ত হৈ আছে শিক্ষা,সংস্কৃতি,সাহিত্য আদি বিভিন্ন দিশসমূহ। লেখিকাই গ্ৰন্থখনত আমেৰিকাৰ জাকজমকতা, উখল-মাখল পৰিৱেশ, আচাৰ -ব্যৱহাৰ, শিক্ষা, সংস্কৃতি, উৎসৱ, পাৰ্বন, নাট, স্থাপত্য-ভাস্কৰ্য আদি বিভিন্ন দিশ সমূহৰ আলোচনা দাঙি ধৰিছে।

আমেৰিকাৰ মানুহৰ আচাৰ-ব্যৱহাৰৰ পৰিচয় দাঙি ধৰি লেকিকাই কৈছিল - 'এসময়ত আমেৰিকাৰ ইংৰাজ সকলক গোমোঠা বুলি জানিছিলোঁ, কাৰো ফালে নাচায়, নাহাঁহে, উপযাচি কথা নকয়। অৱশ্যে মোৰ ধাৰণা ভুল আছিল। তেওঁলোকে মানুহৰ মুখামুখি হ'লেই চিনি পাওক বা নাপাওক ' হাই' বুলি সম্বোধন কৰে। ' (পৃ.৭৮)

গ্ৰন্থখনত লেখিকাই ভ্ৰমণ অভিজ্ঞতাৰ মাজে মাজে সমাজ সংস্কৃতিৰ বৰ্ণনা তুলি ধৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা দেখা যায়। লেখিকাই আমাৰ অসমৰ বিহুৰ দৰে আমেৰিকাৰ মানুহে 'থেংকছ গিভিং' নামেৰে এটা উৎসৱ পালন কৰাৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। লগতে সেই উৎসৱত পৰস্পৰে পৰস্পৰক সম্ভাষণ জনায় একেলগে খোৱা-বোৱা কৰাৰ লগতে উৎসৱত শশুৰ-শাহুকো নিমন্ত্ৰণ জনাব পাৰে বুলি অভিমত পোষণ কৰিছে।' (পৃ.৪১)

লেখিকাই কৈছে এনে এখন দেশ নাই য'ত লোকবিশ্বাস প্রচলিত নহয়। যিমানেই মানুহ আধুনিক নহওঁক কিয়, বিজ্ঞান প্রযুক্তি বিদ্যাৰ যিমানেই উন্নতি নহওঁক, অপার্থিৱ জগত আৰু তাৰ শুভ-অশুভ ফলাফলৰ ওপৰত সামান্যতম হ'লেও বিশ্বাস কৰে। তাৰ উদাহৰণস্বৰূপে আমেৰিকাত প্রতিবছৰে পালন কৰা একোটা লোক উৎসৱৰ প্রসংগ আৱতাৰণা কৰিছে -

'প্রতিবছৰে আমেৰিকাত একত্রিছ অক্টোবৰ দিনা হেলোউইন ডে' নামেৰে এটা এটা লোকউৎসৱ পালন কৰে। সিদিনা হ'ল ভূত-প্রেতৰ দিন। বিশ্বাস অনুসৰি এই উৎসৱ পালনৰ জৰিয়তে পার্থিৱ-অপার্থিৱ সকলো ধৰণৰ অশুভ শক্তিৰ প্রতীক ভূত-প্রেত, দৈত্য, দানৱ, পিশাচ আদিৰ পৰা পৰিত্রাণ পায় । সিদিনাখন তেওঁলোকে ডাঙৰ-ডাঙৰ ৰঙালাও ৰ ভিতৰখন ৰুকি উলিয়াই ওপৰত চকু-মুখ আঁকি ভূত যেন কৰি ৰাখে। ভিতৰৰ ফোপোলা অংশত বাল্ব জ্বলায়।' (পৃ.১৫৮)

তেনেদৰে গ্রন্থখনত শিক্ষাব্যৱস্থাৰ প্রসংগ তুলি ধৰি কৈছে-'ই উনিভাৰছিটি অফ্ ছাদার্ণ (ই উ.এছ.ছি) বিশ্ববিদ্যালয়খনৰ প্রাঙ্গন শান্ত আৰু সমাহিত। বিল্ডিংবোৰ গাম্ভীর্যপূর্ণ। ফোৱাৰা আৰু বতৰীয়া ফুলে পৰিৱেশ ৰঙীণ কৰি তুলিছে। এনে পৰিৱেশ পঢ়া-শুনাৰ বাবে আদর্শ।' লেখিকাই কৈছে - 'আমেৰিকাৰ সৰহভাগ ল'ৰা-ছোৱালীৰ পঢ়া-শুনা ৰাপ নাই। কৃষ্ণাঙ্গ সকলৰো নাই। আমাৰ দেশৰ সৰু সৰু ল'ৰা ছোৱালীয়ে যিবোৰ যোগ-বিয়োগ মুখে মুখে কৰিব পাৰে সিঁহতে মেচিন ন'হলে নোৱাৰে। তেওঁলোক কম বয়সতে অর্থনৈতিকভাৱে টনকিয়াল হ'ব খোজা হেতু শিক্ষা কম বয়সতে সাং কৰে।' (পৃ.১৬৮)

খাদ্যৰ প্রসংগ উল্লেখেৰে কৈছে-তেওঁলোকে খাদ্য প্রস্তুতৰ বেলিকা মিঠাতেলৰ সলনি বাদাম তেল, ছান ফ্লাৱাৰ বা ছাফোলা জাতীয় গোন্ধহীন তেল ব্যৱহাৰ কৰে। 'ফ্রেন্স ফ্রাই ' ঠাইখনত প্রচলিত জনপ্রিয় এবিধ খাদ্য। (পৃ.২৫০) তনেদৰে ভাৰতত উৎপন্ন হাৱাবাচমতী চাউলৰ অন্য এক প্রকাৰ 'টেকচামতী'ৰ কথা উল্লেখ কৰিছে। তেখেতে বর্ণনাৰ প্রসংগত কৈছে - 'এই টেকচামতী' আচলতে আমেৰিকাৰ টেকচাচ্ ৰাজ্যত ভাৰতীয় বাচমতী চাউল ধান সিঁচি উৎপন্ন কৰা চাউল। সেয়ে ইয়াক ভাৰত মার্কিন যুক্তৰাষ্ট্রৰ প্রতীক বুলি কোৱা হয় ।' (পৃ.২৫২)

৪.০ 'তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দর্শন' ভ্রমণ সাহিত্যৰ মাজত প্রতিফলিত ভাষাৰ প্রয়োগ

অলিখিত যুগৰে পৰা নাৰীৰ দ্বাৰা ৰচিত সাহিত্যৰ ইতিহাস আৰম্ভ হৈছে বুলি ক'ব পাৰি। মৌখিক সাহিত্যত লেখিকাৰ একাধিপত্যই তাকেই প্রমাণ কৰে। লোকগীতৰ পৰা আৰম্ভ কৰি ভিন্ন গীত-মাতৰ কথাত নাৰীৰ প্রতিভা আজিও তেনেদৰে সজীৱ হৈ আছে। পৰৱর্তী কালত শংকৰোত্তৰ যুগৰ বৰেণ্য কবি গীতিকাৰ পদ্মাপ্রিয়া আইৰ ধর্মীয় গীত, কবিতা সমকালীন আৰু উত্তৰকালীন সময়ৰ অন্যতম সম্পদ। বৃটিছ সকল অহাৰ পাছৰ পৰা সমাজৰ জীৱনধাৰাৰ সলনি হ'ল। এফালে পুৰাতন ঐতিহ্য, আনফালে ঔপনিৱেশিকতাৰ পৰিৱেশত গঢ়ি উঠা শৈক্ষিক, সামাজিক - সাংস্কৃতিক সংস্কাৰ এই দ্বিমুখী প্রভাৱৰ বোজা নাৰীয়ে বহন কৰিবলগীয়া হোৱাত নাৰীৰ কাপৰ পৰা ওলাবলৈ ধৰিছিল পুৰাতন আৰু আধুনিক দুয়োপ্রকাৰৰ লেখনি। অৱশ্যে পৰৱর্তীকালত পশ্চিমৰ নাৰীমুক্তি আন্দোলনৰ প্রভাৱ তেওঁলোকৰ ৰচনাত পৰিবলৈ লয়। ফলস্বৰূপে তেওঁলোকৰ লেখনিৰ ভাষা পৃথক হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। তদুপৰি পুৰুষ প্রধান সমাজত নাৰীসকল পুৰুষৰ দ্বাৰা অৱদমিত হৈ থকা বাবে নাৰীয়ে মানসিকভাৱে তথা বৌদ্ধিকভাৱে আৰু সৃষ্টিকর্মত বাধাগ্রস্ত হোৱা পৰিলক্ষিত হয়। নাৰীয়ে যুগে যুগে সাহিত্য চর্চা কৰি আহিছে। কিন্তু পুৰুষৰ তুলনাত নাৰীৰ সাহিত্য চর্চা তেনেই কম অথার্ৎ সেই অনুপাতে অধ্যয়ন কৰা নাৰীৰ সংখ্যা বহুত বুলি ক'ব পাৰি। কিন্তু সাহিত্য সৃষ্টি কৰা নাৰী অর্থাৎ লেখিকাৰ সংখ্যা তেনেই নগণ্য।

সাহিত্য, জীৱন অন্বেষণৰ অবিৰত প্রয়াস লগতে সাহিত্য হ'ল জীৱনৰ অন্বেষণ । সেয়ে জীৱনক সুঐভাৱে অন্বেষণ কৰিবৰ বাবে সুতীক্ষ্ণ ক্ষমতাৰ প্রয়োজন। ভাষা হ'ল সাহিত্যৰ অপৰিহার্য অংগ। মানুহৰ ভাৱ প্রকাশৰ বলিষ্ঠ মাধ্যম। ভাষাৰ জৰিয়তে এগৰাকী লেখকৰ সৃষ্টিশীল প্রতিভাৰ পৰিচয় লাভ কৰা যায়। ভাষাৰ প্রসংগত university of zurichৰ পৰা প্রকাশিত 'পপ'ল ৰান' এখন আলোচনীত এদল গৱেষকে 'Female language style problems visibility and influnce online' শীর্ষক প্রবন্ধত মহিলা আৰু পুৰুষ লেখকৰ লেখনিৰ ভাষাৰ সম্পর্কত মত দাঙি ধৰি এনেদৰে কৈছিল - "Men commonly use more abstract and analytical language while female-typical language has been describe as more narative, pesonal, social and

emotional,woman tend to refer more to themselves and to other people more than men" অথাৰ্ৎ পুৰুষ সকলে লেখনিৰ ক্ষেত্ৰত অধিক সাৰগৰ্ভমূলক, বিশ্লেষণাত্মক ভাষা প্ৰয়োগ কৰে কিন্তু মহিলা সকলে ভাষাৰ প্ৰয়োগৰ ক্ষেত্ৰত ব্যক্তিগত ভাৱ-অনুভূতিৰ লগতে সামাজিক, আৱগেক প্ৰশয় দিয়ে।[১] তেনেদৰে পুৰুষ আৰু নাৰীৰ ক্ষেত্ৰত মন কৰিলে দেখা যায় পুৰুষতকৈ নাৰীৰ নিৰীক্ষণৰ ক্ষমতা প্ৰখৰ আৰু অধিক তীক্ষ্ণ। এইক্ষেত্ৰত ভিক্টৰ হিউগে এষাৰ কথা কৈছিল- "Men have sight,woman insight" অথাৰ্ৎ পুৰুষৰ থাকে দৃষ্টি আৰু মহিলাৰ থাকে অন্তদৃৰ্ষ্টি।[২] তেনেদৰে আকৌ নাৰীৰ সম্পৰ্কত লেমাৰটিনে কৈছিল- "woman have more heart and moe imagination than men" অথাৰ্ৎ নাৰী এগৰাকীয়ে যিমান সহজে আৰু গভীৰভাৱে স্পৰ্শ কৰিব পাৰে, পুৰুষজনে সিমান সহজে নোৱাৰে। সেয়ে নাৰী কোমল অন্তৰৰ অধিকাৰিণী হয়। গতিকে নাৰীৰ দ্বাৰা সৃষ্ট সাহিত্যসমূহে সহজে পাঠকৰ হৃদয়ানুভূতিক দোলায়িত কৰে বুলি ক'ব পাৰি।[৩] আধুনিক ভাষাবিদসকলৰ মতে ভাষা একে হ'লেও ভাষাৰ উপলব্ধি আৰু প্ৰয়োগ প্ৰতিজন ব্যক্তিৰ বাবে সুকীয়া। সেয়া নিৰ্ভৰ কৰে নিজস্ব সামাজিক-মানসিক অৱস্থা, স্থান-কালৰ ওপৰত। গতিকে নাৰীৰো সাধাৰণ অভিজ্ঞতা, প্ৰচলিত ভাৱ-অনুভূতি অনুসৰি ভাষাৰ সুকীয়া বৈশিষ্ট্য এটা থকাটো স্বাভাৱিক বুলি ক'ব পাৰি। দাৰ্শনিক সকলৰ মতেও মানুহৰ বাস্তৱ অভিজ্ঞতাক প্ৰায়োগিক ভাষাৰ প্ৰয়োগৰ দ্বাৰাহে জানিব পাৰি। সেয়ে কোৱা হয় যে ভাষাৰ আয়ত্ব যিমান বাস্তৱৰ আয়ত্বও সিমান বুলি ক'ব পাৰি।

ভ্ৰমণ সাহিত্যত একোখন ঠাইৰে সুকীয়া পাঠ সৃষ্টি হ'ব পাৰে। অথাৰ্ৎ ভ্ৰমণ কালত যি ধৰণৰ অভিজ্ঞতা লাভ কৰে,তাৰ ব্যাখ্যা ব্যক্তিভেদে পৃথক বুলি ক'ব পাৰি। এইক্ষেত্ৰত অৱশ্যে কাৰোৰে উপলব্ধিক শেষ নিৰ্ণয় বুলি গ্ৰহণ কৰিব নোৱাৰি। কিয়নো মাত্ৰ দুই-এদিনতে অৱসৰ বিনোদন ৰ বাবে গৈ লাভ কৰা ভ্ৰমণৰ অভিজ্ঞতাৰ বৰ্ণনা আৰু বহুদিন ধৰি ঠাইখনত বাস কৰাৰ ফলত লাভ কৰা অভিজ্ঞতাৰ বৰ্ণনাৰ মাজত বহুখিনি পাৰ্থক্য পৰিলক্ষিত হয়। তেনেদৰে ব্যক্তিজন যদি ৰাজনৈতিক আদৰ্শৰে পৰিচালিত নতুবা পেছাগতভাৱে বিজ্ঞানী, সাহিত্যিক, অৰ্থনীতিবিদ,কবি, গায়ক, নৃত্যকাৰ ইত্যাদি বৃত্তিৰ সৈতে জড়িত হয়, তেতিয়া সেই পেছাগত বৃত্তিৰ প্ৰভাৱো লেখকৰ লেখনিত ধৰা পৰে। অথাৰ্ৎ এগৰাকী চিকিৎসক হ'লে তেওঁৰ লেখনিৰ মাজত ঠাইখনৰ চিকিৎসা পদ্ধতিৰ বিষয়ে বিশেষভাৱে উল্লেখ কৰা দেখা যায়। দৰাচলতে বিষয়বস্তু আৰু পটভূমিৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি ভাষাৰ প্ৰয়োগ ভিন্ন হয় বুলি ক'ব পাৰি। অথাৰ্ৎ গ্ৰন্থ এখনত বৰ্ণনাত্মক, আৱেগময়ী, যুক্তিনিষ্ঠ, নাটকীয়, কাব্যিক,আলংকাৰিক ইত্যাদি ভাষাৰীতিৰ প্ৰয়োগ কৰা দেখা যায়।

বৰ্ণনাত্মক ভাষা ঃ

বৰ্ণনাধৰ্মিতা গুণে ভ্ৰমণ গ্ৰন্থখনৰ ভাষাক দিছে সুকীয়া মাধুৰ্য। সহজ-সৰল বৰ্ণনাধৰ্মী গুণে গ্ৰন্থখনক সুকীয়া সৌন্দৰ্য প্ৰদান কৰিছে -'কাইলৈ আন এঘৰলৈ যাম। তাই গ'লে আৰু দুখ পাব। সেই ঘৰখনক সুখৰ মুখ দেখুৱাবলৈ তুমিও চেষ্টা কৰিব পাৰা ।' (পৃ.১৩০)

'তাৰ পাছত আহিল প্ৰধান খাদ্য। মই এটা মাছ খাব খুজিছিলোঁ। পাততে দেখিলোঁ গোটা কেঁচা মাছ। চক খাই উঠিলোঁ। পাছত অৱশ্যে বুজিলোঁ সেয়া কাঁইটবোৰ আঁতৰাই নিয়া সিজোৱা মাছ। ' (পৃ.২৭৯)

লেখিকাই গ্ৰন্থখনত পোনপটীয়া আৰু সহজ-সৰলকৈ ভাষাৰ প্ৰয়োগ কৰাত বৰ্ণনীয় বিষয়টোৱে অধিক বাস্তৱৰূপ লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে বুলি ক'ব পাৰি ঃ 'নীলা-বিজয় দুয়োৰে বয়স পঞ্চাশৰ সিপাৰে। ল'ৰা দুটা বেলেগ ঠাইত পঢ়ে। এতিয়া মুকলিমূৰীয়া জীৱনৰ সোৱাদ ল'বলৈ এই বয়সত নাচৰ ক্লাছত ভৰ্তি হৈছে।' (পৃ.২৪২)

ঃ দুদিন ঘূৰি-পকি আহি ভাগৰ লাগিছিল। সুৰভিৰো ললিতাৰ দৰে দেহাত ভাগৰ বোলা বস্তুটো বোধহয় নাই।

তেওঁ কিবাকিবি ৰান্ধিবলৈ ৰন্ধেনি ঘৰত সোমাব খুজিলে। মই বাধা দিলোঁ। নীলা-বিজয় দুয়োৰে বয়স পঞ্চাশৰ সিপাৰে। ল'ৰা দুটা বেলেগ ঠাইত পঢ়ে। এতিয়া মুকলিমূৰীয়া জীৱনৰ সোৱাদ ল'বলৈ এই বয়সত নাচৰ ক্লাছত ভৰ্তি হৈছে। (পৃ.২৫২)

আৱেগময়ী ভাষা ঃ

নাৰীসকল স্বাভাৱিকতে আৱেগময়ী। কেতিয়াবা আৱেগৰ বশৱৰ্তী হৈ বহু নাৰীয়ে সহজে সিদ্ধান্ত গ্ৰহণ কৰে। নতুবা বহু নাৰীয়ে নিজৰ সিদ্ধান্তকে প্ৰাধান্য দিয়া পৰিলক্ষিত হয়। ভ্ৰমণ সাহিত্য সমূহতো ঠাইসমূহ ভ্ৰমণ কৰিবলৈ গৈ লাভ কৰা অভিজ্ঞতাৰ বৰ্ণনা কেতিয়াবা আৱেগময়ী ৰূপত

প্রকাশ ঘটা পৰিলক্ষিত হৈছে। লেখিকাই উল্লেখ কৰিছে মহিলাৰ অন্তৰৰ নিভৃত কোণত খুণ্ডামৰা কথাযাৰ হ'ল - মনৰ দুৰ্বলতম ঠাইত আঘাত কৰি কৰা একোটা প্ৰশ্ন, যিটো প্ৰশ্নই মোৰ দৰে প্ৰতিগৰাকী কাকবন্ধ্যা নাৰীক অলপ সময়ৰ বাবে হ'লেও সচকিত কৰে -

'আপোনাৰ ল'ৰা ছোৱালী কেইটা?
নিজকে অলপ চম্ভালি ক'লো 'এটা'। 'ছোৱালী' নাই।'
ক'লো নহয় এটাই।' (পৃ. ২১)

ইংগিতধৰ্মী ভাষা ঃ

সাহিত্যসমূহত ইংগিতধৰ্মী ভাষাৰ প্ৰয়োগে এক গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰে। গ্ৰন্থ কেইখনক অধিক ৰসগ্ৰাহী আৰু ভাৱগধুৰ কৰি তুলিবৰ বাবে লেখকসকলে ইংগিতধৰ্মী ভাষাৰ আশ্ৰয় লোৱা দেখা যায়। ভ্ৰমণ গ্ৰন্থ কেইখনত মহিলা লেখকসকলে ইংগিতৰ জৰিয়তে ঠাইসমূহত লাভ কৰা অভিজ্ঞতাৰ বৰ্ণনা তুলি ধৰা দেখা যায় - আমেৰিকালৈ যোৱাৰ সময়ছোৱাত ভিছা আবেদনৰ বেলিকা লাভ কৰা অপমানজনক অভিজ্ঞতাৰ প্ৰসংগত কোৱা কথাখিনিৰ মাজেৰে দেশখনৰ প্ৰশাসন ব্যৱস্থাৰ কথা ইংগিতেৰে বুজাই দিবলৈ প্ৰয়াস কৰিছে -

'দুখীয়া আলহী ঘৰলৈ আহিলে চহকী মানুহে কেতিয়াবা ভয় খায়,জানোচা থাকিয়ে যায়। ধনশালী মাৰ্কিন দেশৰো একে অৱস্থা।' (পৃ. ১৫)

তেনেদৰে ভাৰতীয় লোকৰ মনত কৰ্মস্পৃহাৰ প্ৰতি ধাউতি যে কম সেই কথা ইংগিতেৰে বুজাই দিবলৈ যত্ন কৰিছে - 'ভাৰতবৰ্ষত শ্ৰমিক আৰু মালিকৰ মাজত কি বিৰাট ফাঁকি' (পৃ. ২১)

তদুপৰি দেশখনৰ উন্নত পৰিবহন ব্যৱস্থাৰ বিষয়ে আভাস দিবলৈ গৈ এনেদৰে কৈছে 'ৰাজপথত অপূৰ্ব সুন্দৰ গাড়ীবোৰ পানীত কাগজৰ নাও ভাঁহি যোৱাৰ দৰে গৈ আছে। (পৃ. ২৭)

আলংকাৰিক ভাষা ঃ

সাহিত্যত বৰ্ণিত আলংকাৰিক ভাষাই গ্ৰন্থখনক অনন্য সৌন্দৰ্য প্ৰদান কৰে। উপমা, ৰূপক, অৰ্থালংকাৰৰ প্ৰয়োগ আদিয়ে বৰ্ণণীয় বিষয়ক অধিক মনোগ্ৰাহী আৰু ৰসগ্ৰাহী কৰি তোলে। ভ্ৰমণ গ্ৰন্থসমূহত মহিলা লেখকসকলে ভ্ৰমণৰ অভিজ্ঞতাৰ বৰ্ণনাৰ ক্ষেত্ৰত আলংকাৰিক দিশত গুৰুত্ব দিয়া দেখা যায়। লেখিকাৰ লেখনিৰ মাজেদি অলংকাৰপূৰ্ণ ভাষাৰ পয়াভৰ ঘটিছে। লেখিকাই বৰ্ণনাৰ প্ৰসংগত উল্লেখ কৰা ভাষাৰ মাজেদি অলংকাৰৰ প্ৰয়োগৰ কথা ক'ব পাৰি -

'সৃষ্টিকৰ্তাই মোৰ জীৱনলৈ গোলাপৰ পাহিৰ সলনি অকল কাঁইটকে ছটিয়ালে যেন পাওঁ। (পৃ. ১৬)

তেনেদৰে গ্ৰন্থখনত বৰ্ণিত আন এক অলংকাৰযুক্ত বাক্য হৈছে- 'বিৰাট দীঘল অজগৰ সাপৰ দৰে একা-বেঁকা কৈ কনভেয়াৰ্ছ বেল্টেৰে যাত্ৰীসকলৰ মালবস্তু আহি আছে।' (পৃ. ১৭)

আকৌ গ্ৰন্থখনৰ আন এঠাইত অলংকাৰযুক্ত বাক্যৰ প্ৰযোগ দেখা যায় - ' আমেৰিকাত আলু-পিঁয়াজ আৰু নহৰুৰ আকাৰ দেখি মোৰ চকু দুটা পিং পঙৰ বলৰ নিচিনা গোলাকাৰ হ'ল।' (পৃ. ৩৮)

যুক্তিপূৰ্ণ ভাষা ঃ

সাহিত্যত লেখকৰ স্ব-মতামত ফুটি উঠাটো স্বাভাৱিক। ভ্ৰমণ সাহিত্যসমূহো তাৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। দৰাচলতে ভ্ৰমণৰ জৰিয়তে লাভ কৰা অভিজ্ঞতাসমূহ বৰ্ণনা কৰোঁতে বহুসময়ত লেখকৰ যুক্তিবাদী মনটো প্ৰতিভাত হৈ উঠা দেখা যায়। শিক্ষা, অৰ্থনীতি, ৰাজনীতি, সংস্কৃতি ইত্যাদি বিভিন্ন ক্ষেত্ৰত দেখা পোৱা পাৰ্থক্যৰ ছবিখন প্ৰত্যক্ষ কৰি লেখকৰ মনত বিভিন্ন ধৰণৰ যুক্তিপূৰ্ণ ভাৱৰ উদয় হয়। মহিলা লেখকৰ ৰচিত ভ্ৰমণ গ্ৰন্থসমূহত এই যুক্তিপূৰ্ণ ভাৱৰাশি স্পষ্টৰূপত প্ৰকাশ পাইছে বুলি ক'ব পাৰি। আমাৰ দেশৰ আয়কৰ বিভাগৰ শোচনীয় ব্যৱস্থাৰ কথা সোঁৱৰি লেখিকাই মত দাঙি ধৰিছে - 'আমেৰিকাত এগৰাকী মহিলা বিলিয়নপতিয়ে বহুদিন আয়কৰ নিদিয়াৰ বাবে তেওঁক গ্ৰেপ্তাৰ কৰা হৈছিল। আমাৰ ইয়াত আয়কৰ ফাঁকি দিয়াসকলৰ কিবা শাস্তি হয় জানোঁ? '(পৃ. ২৩১)

তেনেদৰে আমাৰ ভাৰতীয় সমাজ ব্যৱস্থাত এগৰাকী মহিলাই বিয়াৰ পিছত স্বামীগৃহত মেখেলা-চাদৰ বা শাৰী পৰিধান কৰাতো যে বাধ্যতামূলক, সেই কথাৰ সম্পৰ্কত নিজা অভিমত পোষণ কৰি নিজা যুক্তি দাঙি ধৰি কৈছে ঘৰুৱা পৰিৱেশত এই ধৰণৰ পোছাকে বিশেষ অসুবিধা নকৰিলেও এগৰাকী চাকৰিয়াল মানুহৰ বাবে সেয়া বহু তেনেদৰে আমাৰ ভাৰতীয় সমাজব্যৱস্থাত এগৰাকী মহিলাই বিয়াৰ পিছত স্বামীগৃহত মেখেলা-চাদৰ বা শাৰী পৰিধান কৰাতো যে

বাধ্যতামূলক, সেই কথাৰ সম্পৰ্কত নিজা অভিমত পোষণ কৰি নিজা যুক্তি দাঙি ধৰি কৈছে ঘৰুৱা পৰিৱেশত এই ধৰণৰ পোছাকে বিশেষ অসুবিধা নকৰিলেও এগৰাকী চাকৰিয়াল মানুহৰ বাবে সেয়া বহু পৰিমানে অসুবিধাজনক বুলি ক'ব লাগিব। আমাৰ দেশত ট্ৰাউজাৰৰ প্ৰয়োজন নাই, সুন্দৰ ভাৰতীয় পোছাক চালোৱাৰ কামিজ ব্যৱহাৰ কৰিলে হাত-ভৰি সকলো মুক্ত হৈ থাকে। খোজ কঢ়া, কাম বন কৰা সকলো ফালে সুবিধা। মেখেলা চাদৰ বা শাৰী নিসন্দেহে অতি সুন্দৰ পোচাক, কিন্তু দুপৰীয়া অফিচ টাইমত পিন্ধি বাছত উঠিবলৈ নিশ্চয় নহয়।' (পৃ . ২৩৭)

উপসংহাৰঃ

আলোচনাৰ পৰিশেষত ক'ব পাৰি যে সাহিত্যৰ অন্য ধাৰা সমূহৰ দৰে ভ্ৰমণ সাহিত্যও এক প্ৰকাৰৰ জনপ্ৰিয় ধাৰা হৈ উঠিছে। আধুনিক উন্নত পৰিবহন ব্যৱস্থাই বহু পৰিমাণে ভ্ৰমণৰ হেঁপাহ পূৰণত সহায় কৰাত নাৰীসমাজেও মনৰ জোখাৰে ভ্ৰমণৰ হাবিয়াস পূৰণ কৰি লৈছে । তেনে এগৰাকী লেখিকা তথা অসমীয়া সাহিত্যজগতৰ এটি উজ্বল নক্ষত্ৰ হ'ল অনিমা। তেখেতে অতীজৰে পৰা অন্যান্য ৰচনাৰ দৰে ভ্ৰমণ বিষয়ক ৰচনাৰ সৃষ্টিৰে পাঠকসকলক সাহিত্যৰ সোৱাদ প্ৰদান কৰি আহিছে। এককথাত তেখেতৰ সৃষ্ট ভ্ৰমণ বিষয়ক সাহিত্যৰাজিয়ে জনমানসত তেওঁক অধিক জিলিকাই ৰাখিছে বুলি ক'ব লাগিব। তদুপৰি লেখনিৰ ক্ষেত্ৰত থকা তেওঁৰ সুস্থ পৰ্যবেক্ষণ , অভিজ্ঞতাসমূহৰ বিশ্লেষণ কৰাৰ দক্ষতা আৰু বিষয়ৰ প্ৰতি থকা আগ্ৰহে পাঠকক অত্যন্ত আকৃষ্ট কৰি ৰাখিছে। মূলতঃ এই আলোচনাৰ জৰিয়তে লেখিকাই আমেৰিকাত লাভ কৰা অভিজ্ঞতাসমূহক নিজৰ সৃষ্টিশীল প্ৰতিভাৰে পাৰ্যমানে ফুটাই তুলিবলৈ চেষ্টা কৰাৰ লগতে ভাষাগত দিশৰ ফালৰ পৰা পাঠকসমাজত গ্ৰন্থখনৰ সু-উচ্চ মান প্ৰতিষ্ঠা কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে বুলি ক'ব লাগিব। ❑

গ্ৰন্থপঞ্জী

অসমীয়া ঃ

১। কলিতা, ৰঞ্জন (সম্পা.). *গৱেষকৰ হাতপুথি*, বান্ধৱ, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী-০১, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, মাৰ্চ, ২০১৭

২। গুহ, অনিমা. তৃতীয় বিশ্ববাসিনীৰ আমেৰিকা দৰ্শন, প্ৰকাশক-বীণা লাইব্ৰেৰী, প্ৰথম প্ৰকাশ, ১৯৯৬

৩। গোস্বামী, যতীন্দ্ৰনাথ *অসমীয়া সাহিত্যৰ চমু বুৰঞ্জী*, প্ৰকাশক-ৰত্ন দত্ত, নিউ বুক ষ্টল, তৃতীয় সংস্কৰণ, ১৯৬৪

৪। বুজৰবৰুৱা, পল্লৱী ডেকা. *গৱেষণাৰ পদ্ধতি বিজ্ঞান*, বনলতা, প্ৰথম সংস্কৰণ, জুলাই, ২০১৭

৫। বৰা, মহেন্দ্ৰ, *সাহিত্য উপক্ৰমণিকা*, নৱেন্দ্ৰ দত্ত, ষ্টুডেন্টচ্ ষ্ট'ৰচ্, তৃতীয় প্ৰকাশ, ১৯৯৪

৬। মহন্ত বেজবৰা, নীৰাজনা. *সাহিত্যৰ সমাজতত্ত্ব ঃ সিদ্ধান্ত আৰু প্ৰয়োগ*, বনলতা, ডিব্ৰুগড়-ৰ, তৃতীয় সংস্কৰণ, ২০১৭

৭। শইকীয়া, সচ্চিদানন্দ. *সাহিত্যৰ সমাজতত্ত্ব*, অসমীয়া বিভাগ, খোৱাং মহাবিদ্যালয়, খোৱাংঘাট, ডিব্ৰুগড়, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১৯

৮। শৰ্মা, সত্যেন্দ্ৰনাথ . *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*, প্ৰকাশিকা, প্ৰতিমা দেৱী,সপ্তম সংস্কৰণ ১৯৯৬

৯। শৰ্মা, হেমন্ত কুমাৰ .*অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত*, ৰত্নেশ্বৰ দত্ত, নিউ বুক ষ্টল, তৃতীয় তাঙৰণ শৰ্মা, ১৯৭২

ইংৰাজী ঃ

১। Kothari, C.R. *Research Methodology: Methods & Techniques*, New age international publishers, Copyright 2004

২। Kumar,Ranjit. *Research Methodology: A step-by-step guide for beginners*, SAGE Publications, 3rd ed.2011

অপ্ৰকাশিত গৱেষণা গ্ৰন্থ ঃ

১। বৰা, মনচুমী. অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্যত আত্মকথামূলক উপাদান, ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, অসমীয়া বিভাগ ২০১৩-২০১৪

২। গগৈ, সুৰভি মাধুৰী. অসমীয়া ভ্ৰমণ সাহিত্য ঃ আৰম্ভণিৰ পৰা ২০১১ চনলৈকে প্ৰকাশিত, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, আধুনিক ৩। ভাৰতীয় ভাষা আৰু সাহিত্য অধ্যয়ন বিভাগ, ২০১৬ বৰ্ষ

आमि दुवार मुकलि करों

देवकान्त बरुवा
(22 फरवरी, 1914 - 28 जनवरी, 1996)

मोर मेजर ओपरत एखन छबि आछे
निकोलास र'रिकर। नाम तार?
तार नाम - आमि दुवार मुकलि करों!
किहर दुवार? पूबर ने पश्चिमर?
ने दक्षिणर जमर दुवार
ने महाप्रस्थानर आमंत्रण-मुखरित
उत्तरापथर सिंहद्वार?

मइ कवि देवकांत,
यौवनर बियलि बेलिका
बाटर काषत बहि खन्तेक माथोन
देखिछो सपोन आजि दीघल बाटर,
अन्तहीन बिफल बाटर।

जिरणि-घरत शुनो हाँहि-खिकिन्दालि
ठाइ क'त जिरणिर?
रुद्ध तार दुवार-मुखत जनतार हेचा-ठेला
दुवार मुकलि क'त?
जानो, जीवनर उद्भ्रांत छंदर ताले
उतला करिछे मोक।

जानो मोर गति नाइ गतिर बाहिरे।
किन्तु जात्रार शेहत क'त मुकलि दुवार?
पाम जानो सिंहद्वार प्राणर छंदत मोर
बादुली-सँचार घर मेल खाब निजे निजे
यौवनर निमंत्रण जाचि?

भ्रमिलो बहुतो बाट
पेरुत इङ्कार स'ते सोन-रूप खटोवा पाल्कीत।
मरण-मधुर सेइ यौवनर बिराट खण्डत मेक्सिकोत
ढालिलों आहुति मइ रूप-कोंवरर स'ते
रूपहीर नृत्यर छंदत।

निनेभार पाखि लगा षाँड़र आगत
असुरर बिजय-उत्सब। ततो जोग दिलो मइ,
शून्योद्यान बेबिलन। इन्नानार मन्दिरर दुवार-दलित
प्रेमाकांक्षी शत देवदासी।
प्रेमाञ्जलि करिलो ग्रहण देवदासी-राजकुँवरीर।
क'त रङ-धेमालिर करिलो पातनि
डेका-गाभरुर स'ते
उछव-तलित मइ समुद्र-स्तनित सेइ शुवनी क्रीटर।

भ्रमिलो बहुत बाट।
किन्तु दुवार मुकलि क'त?
बन्ध देखो सकलो दुवार।
दुवार मुकलि माथो अचल छबिर,
किताप-द'मत थका निकोलास र'रिकर
एखनि छबिर।

(नोट : कविता का लिप्यंतरण उच्चारण को ध्यान में रखकर किया गया है।)

POSTAL REGISTRATION NO. GH/127/2022-24 ❖ Date of Publication : 30th June, 2023 ❖ RNI No. ASSBIL/2009/31008

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-781032

मो. 9101541395 / 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com